आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

तीसरा भाग

आश्रमवासीके सामाजिक सिद्धान्त

लेखक
जुगतराम दवे
अनुवादक
रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

प्रकाशकका निवेदन

यह पुस्तक मूल गुजरातीमें सन् १९४६ में प्रकाशित हुअी थी। ग्रामसेवकोकी तालीममें यह बहुत अुपयोगी सिद्ध हुअी है। गुजराती भाषा जानने-समझनेवाले अगुजराती लोग, विशेष करके कार्यकर्ता, हमेशा अिस पुस्तकके हिन्दी सस्करणकी माग करते रहे हैं। आज अितने समयके बाद भी हम अुनकी माग पूरी कर रहे हैं, अिससे हमें बडा आनन्द होता है।

यह पुस्तक सुविधाके खयालसे ही तीन अलग भागोमें बाटी गअी है, परन्तु विषय-विवेचनकी दृष्टिसे तो तीनो भाग अेक सपूर्ण पुस्तकके ही अग है। अिसका पहला भाग अक्तूबर १९५७ में प्रकट हो चुका है, जिसमें 'आश्रमवासीके बाह्य आचारों' की चर्चा की गअी है। दूसरा भाग जनवरी १९५८ में प्रकाशित हुआ है, जिसमें 'आश्रमवासीकी अन्तर-श्रद्धाओ' पर विचार किया गया है। अिस तीसरे भागमें 'आश्रमवासीके सामाजिक सिद्धान्तो'का विवेचन किया गया है। अिसके अन्तमें पहले और दूसरे भागमें चर्चित विषयोकी विस्तृत सूची दी गअी है, जिससे पाठकोको अेक ही दृष्टिमें सम्पूर्ण पुस्तकके विषयोका खयाल आ सके।

आशा है देशकी आश्रम-सस्थायें, ग्रामसेवा द्वारा स्वतत्र भारतके गावोमें आशा, अुत्साह और नवजीवनका सचार करनेका अुदात्त ध्येय रखनेवाली सार्वजनिक सस्थायें तथा गाधीवादी आश्रमोका गहरा परिचय प्राप्त करनेकी अिच्छा रखनेवाले लोग अिस पुस्तकसे अवश्य लाभ अुठायेंगे।

१५-३-'५८

आदि-वचन

भाअी जुगतरामकी 'आश्रमी शिक्षा' नामक पुस्तकके कुछ प्रकरण मैं पढ गया हू। अुनकी भाषा तो सरल और सुन्दर है ही। गावके लोग आसानीसे समझ सके अैसी वह भाषा है। आश्रम-जीवनसे सम्बध रखनेवाली छोटी-बडी सभी चीजोका लेखकने सुन्दर ढगसे वर्णन किया है। अुन्होने बताया है कि आश्रम-जीवन सादा है, परन्तु अुसमे सच्चा रस और कला भरी हुअी है। यह परीक्षा सही है या गलत, यह तो पाठक सब लेख पढ कर देख ले।

पूना, १७–३–'४६

मो० क० गांधी

अर्पण

आश्रम-बन्धु मकनजी बाबाको

अनुक्रमणिका

नवा विभाग : ग्रामाभिमुखता

प्रवचन

दसवा विभाग : आश्रमवासी

ग्यारहवां विभाग : आत्मबल

बारहवा विभाग : आश्रमी शिक्षाका अभ्यासक्रम [अेकादश व्रत]

फलश्रुति

शिक्षाकी आश्रमी पद्धति

मेरे आश्रम-बंधुओंके प्रति

सावरमतीके 'स्वराज्य मदिर' में हमारे आश्रमका और आप सबका जो चिन्तन मैंने प्रतिदिन ब्राह्म-मुहूर्तमें किया, ये प्रवचन अुसीका फल है। जेल मेरे लिअे कभी जेल रही ही नही। कअी बार तो आपमें से — वेडछी आश्रमके मेरे आश्रम-बंधुओंमें से, कोअी न कोअी जेलमें भी मेरे साथ रहे है। आपकी याद सदा दिलाते रहें, अैसे श्रद्धालु विद्यार्थियो और समान-धर्मी मित्रोकी मण्डलीके बीच ही कारावासका मेरा अधिकाश समय बीता है। अुनके बीच जेलमे भी मेरे लिअे वेडछी आश्रम ही चलता रहा है। वही सुवह-शामकी प्रार्थनाअे, वही भजन और धुन, वही गीतापाठ, वही सामूहिक कताअी और वही 'सहनाववतु' मत्रके साथ सहभोजन। अिसके कारण जेलके जिस खण्डमें मेरा विस्तर रहता, वह सदा 'वेडछी आश्रम' के नामसे ही पुकारा जाता था।

दीवारके बाहर और दीवारके अन्दरके मेरे आश्रम-बंधुओको अैसे अनेक प्रसग याद आयेंगे, जब अिन प्रवचनोमें चर्चित विषय हमारे बीच निकले थे। कभी कभी प्रार्थनाके बाद सचमुच अिसी शैलीका अेकाध प्रवचन हुआ आपको याद आयेगा। परन्तु अधिकाश प्रवचन जिस रूपमे यहा लिखे गये है अुसी रूपमें नही किये गये। चौवीसो घण्टेके हमारे सहवासमें जब जैसा प्रसग आया, तब अुसके अनुरूप हमने अिन प्रवचनोके विचारो और सिद्धान्तोका रटन किया है। कभी कातते कातते और कभी टहलते टहलते हमने चर्चा और वाद-विवादके रूपमे अैसा किया है। कअी वार तो सारे प्रवचनकी वस्तु अेकाध छोटीसी सूचनाके रूपमें, अेकाध विनोदपूर्ण वक्रोक्तिके रूपमें, अेकाध प्रेमभरे आग्रहके रूपमे हम सब अिशारेमें समझ गये हैं।

शिक्षाकी जिस पद्धतिको मै 'आश्रमी पद्धति' कहता हू, अुसकी खूबी ही यह है। सतत सहवास और सहजीवन तथा आपसके प्रेम और श्रद्धाके कारण हमारी बुद्धिरूपी धरती सदा बीजको अकुरित करनेकी स्थितिमें ही रहा करती है। कहीसे हवामे अुडकर बीज आया कि वह अुगा ही समझिये। यदि पाठशाला लगाकर और कक्षाओमें बैठकर ही ये सारी चीजे पढनी-पढानी हो, तो अैसे लम्बे प्रवचनोसे तो क्या परन्तु बडे बडे ग्रथोसे भी यह करना दु साध्य है। आपको आश्चर्यके साथ स्मरण आयेगा कि अिन प्रवचनोमें गभीर रूप धारण करके आयी हुअी बहुतसी बातें हमारे पास तो सहभोजन या सहस्नान या सह-सफाअी करते समय हास्य-विनोदके रूपमें ही आयी थी। कुछ बातें तो कब हमारे भीतर प्रवेश कर गयी और कब हमारे भीतर आत्मसात् हो गयी, अिसका कोअी प्रसग भी आपको याद नही होगा। केवल प्रवचन पढकर आप सिर हिलायेंगे कि यह बात अिस ढगसे हमने किसीके मुहमे सुनी या

किसी ग्रथके पृष्ठोमें देखी नही थी, परन्तु ठीक यही हमारे विचार है, ठीक अिसी तरह आचरण करना हम पसन्द करते है।

जीवनमे सीखनेके विषय सिर्फ कोअी अुद्योग, कोअी कला-कौशल या कोअी तर्क ही नही है। परन्तु जन्मके साथ जड जमाये वैठी हुअी पुरानी घृणाओ और पुराने हठीले पूर्वग्रहोसे हमे मुक्त होना है, कभी न किये हुअे नये विचारोको खूनमे अुतारना है, नअी श्रद्धाअें हृदयमें स्थापित करनी है और तदनुसार आचरण करते हुअे सिरका सौदा करनेका शौर्य कमाना है। यह वात साधारण पाठशाला या अुद्योगशाला नही दे सकती। अिसके लिअे आश्रम-जीवनकी जरूरत है।

चरखा, पीजन और करघेके कला-कौशल तो अुद्योगशालामें सीखे जा सकते हैं। परन्तु व्यर्थकी जरूरतो और व्यर्थके मौज-शौकमे काटछाट करके अपने लिअे आवश्यक वस्त्रादि चीजें घरमें ही वना लेनेकी तैयारी——तैयारी ही नही, परन्तु वैसे जीवनमें आन्तरिक रस पैदा होना तो आश्रममें ही सभव है।

मलमूत्रका निपटारा कैसे किया जाय, अिसकी शास्त्रीय पद्धति तो किसी विद्यालयमे पाठ पढकर जानी जा सकती है। परन्तु अिनके प्रति जो घृणा हमारी जनताके रोम-रोममें घुसी हुअी है और अुस घृणासे भी अविक जहरीली जो अस्पृश्यता जनतामें पैठी हुअी है, अुस पर तो किसी आश्रममे 'महाकार्य' करते करते ही विजय पाअी जा सकती है। हरिजन वालक या वालिकाको अपना पुत्र या पुत्री वना लेना और अपनी पुत्रीको हरिजन युवकके साथ व्याह देनेकी अुमग पैदा होना आश्रमी शिक्षाके विना सभव ही नही है।

वीमारोको क्या दवा दी जाय, अुनकी सेवा कैसे की जाय, अित्यादि शिक्षा किसी वैद्यशालामे मिल सकती है, परन्तु आत्मजनोकी या अपनी वीमारीके समय घवरा न जानेकी, अनुचित भाग-दौड न करनेकी तथा मृत्युके सामने व्याकुल न वननेकी शिक्षा तो आश्रम-जीवनमें ही मिल सकती है।

हो सकता है कि आश्रममें रहते हुअे भी अैसी शिक्षा किसीको न मिले। अिसका दोमें से अेक कारण होगा। या तो वह नामको ही आश्रम होगा, अिन प्रवचनोमें जिसका चित्र दिया गया है और जिसका चित्र हमारे हृदयमें अकित है, वैसा आश्रम वह नही होगा। अथवा अुस आश्रममे रहनेवाले अपने हृदयके द्वार वद करके वहा रहे होगे, आश्रमी शिक्षाको अुन्होंने अपने अन्दर घुसने ही नही दिया होगा।

आप और हम अच्छी तरह जानते है कि आश्रमवाससे पहले जो श्रद्धाअें हममें नही थी, अैसी वहुतसी नअी-नअी श्रद्धाअें आश्रमवासके कारण हमारे भीतर पैदा हुअी है और दृढ वनी है। वे कव पैदा हुअी और कव दृढ हुअी, अुनकी शिक्षा हमे किसने और कब दी, अिसका हमें पता भी नही होता। परन्तु हम देखते है कि आश्रम-जीवनने हम सव पर अेकसा असर किया है, और अेकसी परिस्थितियोमें हम सवके हृदयमें अमुक भाव समान रूपमें ही प्रगट होते हैं, और समान परिस्थितियोमे हम सव जहा हो वहा अेक ही प्रकारका आचरण करनेको तैयार होते हैं।

हम अपने बच्चोके साथ कैसा बरताव करे, पति या पत्नीके साथ कैसा बरताव करें, जातिके लोगोके साथ कैसा व्यवहार रखें, हमारा आहार-विहार कैसा हो, देशके कामोमें किन सिद्धान्तोसे काम लिया जाय, यह सब हमने कहा, किससे और कब पढा? यह सब हमें अपने आश्रममें अेक-दूसरेसे किसी अकल्पनीय रूपमें मिल गया है।

हमें अपने आश्रमकी शिक्षा लेते लेते यह विश्वास हो गया है कि जिसे सचमुच आत्म-रचना करनी हो, भीतरकी गहरीसे गहरी जडो तक शिक्षाको पहुचाना हो, अुसके लिअे आश्रम ही सच्ची पाठशाला है।

यह सच है कि जिस आत्म-रचनाके लिअे हमने आश्रमवास स्वीकार किया है, अुसमें हम अभी तक बहुत पीछे हैं। कुछ बातोमें तो हम आज भी अितने कच्चे और पीछे हैं कि दुनियाको आश्रमी शिक्षाके हमारे दावे पर विश्वास ही नही होता। वे हमारी कमजोरियोसे आश्रमका मूल्याकन करते है और आश्रमको केवल बाह्य आचार पर जोर देनेवाली और अबुद्धि पर स्थापित अेक निकम्मी सस्था मान बैठते हैं।

परन्तु जब हम अपने हृदयकी परीक्षा करते हैं, तब देखते है कि पहले हम कहा थे और आश्रमवासके बाद आज कहा है, और यह देखकर हमें आश्रम और आश्रमी जीवनमें छिपी हुअी आत्म-रचनाकी अद्‌भुत, अकल्पनीय और अवर्णनीय शिक्षाका विश्वास हो जाता है। हम जानते हैं कि हमें जो आत्म-रचना करनी है, अुससे हम अभी कोसो दूर हैं। परन्तु हमें यह भी विश्वास हो गया है कि यदि हमें आश्रमी शिक्षाका लाभ न मिला होता तो हम अपने ध्येयसे कोसो नही, परन्तु खगोलशास्त्रियोंके 'प्रकाश-वर्षों' जितने दूर होते।

आत्म-रचना किसकी कितनी हुअी, आश्रमी शिक्षा किसमें कितनी विकसित हुअी, अिसका प्रतिक्षण माप लेने लायक पाराशीशी हमारे पास मौजूद है। हमने कितने वर्ष आश्रममें विताये, अिस पर से वह माप नही लिया जायगा। परन्तु हमारी सच्ची पाराशीशी यह है कि हम स्वराज्य-रचना कितनी और कैसी कर सकते हैं। ज्यो-ज्यो हममें आश्रमी शिक्षा पचती जाती है, ज्यो-ज्यो हमारी आत्म-रचनाकी लाल रेखा अूची होती जाती है, त्यो-त्यो हम स्वराज्य-रचना अधिक गहरी, अधिक विशाल और अधिक सच्ची कर सकते है। हमारे घरमें, हमारे धधेमें, हमारी देशसेवामें — हमारे रचनात्मक कामोमें हम कितना सत्याग्रह रख सकते है, अिस परसे हम अपनी आत्म-रचनाका अचूक माप निकाल सकते हैं। छोटा या बडा जो भी हमारा जन्मसिद्ध क्षेत्र है, अुसमें हम स्वराज्य और सत्याग्रहके तेजस्वी तत्त्व कितने प्रकट कर सकते हैं, अिस पर से हम और ससार हमारी आत्म-रचनाका अेक अेक अश नाप सकते हैं।

हम खादी, ग्रामोद्योग और राष्ट्रीय शिक्षा जैसे रचनात्मक काम कुछ वर्षोंसे करते आये है, हम असहयोग, सविनय कानून-भग, सत्याग्रह आदि राजनीतिक लडाअियोमें भी कुछ वर्षोसे भाग लेते आये हैं, हम अपने स्त्री-पुत्रो और जातिके लोगोंके साथ व्यवहार करते आये है। यह सब बाहरसे अेकसा दिखाअी देता हो, तो भी क्या आश्रमी शिक्षाके पहले और आश्रमी शिक्षाके बादके हमारे व्यवहारोमें तत्त्वत अन्तर

नही पड गया है? वस्तु अेक ही है, परन्तु गुण क्या दूसरे ही नही हो गये है? क्या अुसमें अेक प्रकारका रासायनिक परिवर्तन नही हो गया है? और आश्रमी शिक्षाके कालमें प्रतिवर्ष और हर मजिल पर हमारे वहीके वही कार्य क्या गुणोकी दृष्टिसे भिन्न नही होते गये है? हमने बारडोलीके असहयोगके समय जैसी लडाअी लडी या जैसा रचनात्मक कार्य किया, अुससे दाडीकूचके समयके हमारे वही कार्य गुणोमें बदल गये थे और 'करेंगे या मरेंगे' के युगमें तो अुनमें भी कुछ अद्भुत रासायनिक विकास हो गया।

हम सब आश्रम-बधु जहा और जिस स्थितिमें हो, वहा हमें अपने परम अुपकारी आश्रम और अुसकी शिक्षाके प्रति अैसी श्रद्धा अपने भीतर जाग्रत रखनेमें मदद मिले, अिस हेतुसे ये प्रवचन मैंने जेलवासके मौकोका लाभ अुठाकर लिख डाले हैं। और अुन्हे पढकर सब स्वराज्य-सैनिकोमें आश्रमी शिक्षाके लिअे प्रेम अुत्पन्न हो, अुसके बिना आत्म-रचना सभव नही और आत्म-रचनाके बिना सच्चे स्वराज्यकी रचना सभव नही, यह सत्य अुनके हृदयोमें स्फुरित हो, यह अिनके लिखनेका दूसरा हेतु है। पहला हेतु तो सार्थक होगा ही, क्योकि हम सब आश्रम-बधुओके बीच प्रेमकी गाठ बधी हुअी है और अुस प्रेमके कारण अेक-दूसरेके वचन अथवा प्रवचन हमे हमेशा मधुर लगते आये है। दूसरा हेतु सिद्ध करने जितनी मधुरता अिन प्रवचनोकी भाषामे होगी?

स्वराज्य-आश्रम
वेडछी

जुगतराम दवे

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

नवां विभाग

ग्रामाभिमुखता

प्रवचन ५४

हमारा प्यारा गांव

हम गावोको अपनी सेवाका क्षेत्र बनाना चाहते है। अुसके लिअे हमारी सारी तैयारी और तालीम चल रही है। अिसलिअे हम अपने आश्रम गावोमे ही खोलते है, और ग्रामवासियोके बीच ही हमें अपना सारा जीवन बिताना है।

लेकिन लोग नौकरी-धधेके लिअे जैसे बम्बअी, कराची और कलकत्ता जाते है, वैसे हम गावोमें रहनेके लिअे नही जाते। वे कामधधेके स्थानमें चाहे जितने साल रहें, फिर भी अपनी दृष्टि सदा जन्मभूमिकी तरफ ही रखते है। वे वहा अपनेको परदेशी ही मानते है, और चाहे जितने लबे अर्से तक रहें, फिर भी वृत्ति अैसी रखते है, मानो मुसाफिरखानेमें अेक रातके लिअे विश्राम किया हो। वे अुतना ही स्नेह-सबध वहा रखते है, जिसके बिना काम ही न चले, और अपनी कमाअीमें से अुतना ही खर्च करते है, जितना खर्च करना अनिवार्य हो। वहाके लोगोके सुख-दु ख या सार्वजनिक जीवनसे वे बिलकुल अलग रहते है।

अिस तरह कमाअी करनेके हेतुसे गये हो, तो भी लोग अपने धधेके क्षेत्रमें परदेशियो जैसा व्यवहार करें, अुसमें से केवल लेते ही रहे परन्तु वापस कुछ न दें, यह वास्तवमे अनीति है, समाज-द्रोह है, अैसा हम लोग मानते है। तब अपने पसन्द किये हुअे ग्रामक्षेत्रमें तो हम अैसा व्यवहार कर ही कैसे सकते है? हम वहा कमानेके लिअे नही, सेवा करनेके लिअे ही जाते है। वहा जाकर कुछ कमाअी होने पर हम वापस घर जानेके स्वप्न नही देखते। सेवाक्षेत्रमें भी हमारी सोची हुअी सेवा पूरी होनेके बाद कृतार्थ होकर निश्चिन्ततासे घर जाकर आराम करेंगे, अैसी कल्पना भी हम नही कर सकते।

मान लीजिये कि पहले हमारा विचार केवल गावमे घर-घर चरखा शुरू करवा देनेका है। हम भाग्यवान हो और दस-पाच वर्षमें शायद अितना कर सकें, तो क्या गाव छोडनेके लिअे हम मुक्त हो सकेंगे? नही, वहाके लोगोंने हमें अच्छा जवाब दिया, अिस कारणसे तो हमारे मनमें वहा रुकनेकी, अपना समय बढा देनेकी और कार्यका विस्तार करनेकी ही अिच्छा होनी चाहिये। अभी गावोमें अनेक गृह-अुद्योग विकसित करने बाकी है, अभी बेकारीका रोग गावोमें से गया नही है, अभी लोगोने अस्पृश्योको पूरी तरह अपनाया नही है, अभी लोगोमे ग्राम-स्वराज्यकी सुन्दर व्यवस्था करनेकी क्षमता नही आअी है — अिस प्रकार सोचें तो हमें अेकके बाद अेक काम सूझते जायेंगे, और जैसे-जैसे सफलता मिलती जायगी वैसे-वैसे और नये काम निकालनेका अुत्साह बढता जायगा।

अैसा करते हुअे देशमें हमारे विचारोके अनुसार राज्य-परिवर्तन हो जाय और जनताके प्रतिनिधि देशका शासन-तत्र सभाल ले तो? फिर तो हमारी नौकरी पूरी हो गअी न? फिर तो घर जाकर पेन्शन खाते हुअे आरामकी जिन्दगी बितानेका हमारा हक है न?

नही। हमें यह आशा भी नही रखनी है। क्योकि वैसा राज्य-परिवर्तन हो जाय, तो भी गाव-गावमें —— जनताकी रग-रगमे तुरन्त स्वराज्य थोडे ही व्याप्त हो जायगा? राज्य-परिवर्तन अितना ही करेगा कि आज तक जनताके विकासमे पग-पग पर जो विघ्न आते थे वे अब कम हो जायेंगे। तब हम जैसोको अपना काम करनेमे अधिक सरलता होगी। लेकिन बरसात होनेके बाद बुवाअीका समय आने पर क्या किसान खेत छोडकर आराम करने जा सकता है? वह तो अुसके लिअे सच्चा और अधिकसे अधिक काम करनेका अवसर है।

अिस प्रकार जो गाव हमारा सेवाक्षेत्र है, वह हमारे लिअे जीवनका सौदा ही है। जन्मका गाव हमें अीश्वरने दिया था, यह नया गाव हमने अपनी अिच्छासे, अपनी क्षमता देखकर, हमारे देशकी जरूरतका खयाल करके, हममें सेवा करनेकी —— अपना सर्वस्व अर्पण करनेकी तमन्ना पैदा होनेके कारण पसन्द किया है। यह हमारी पसन्दका सेवाक्षेत्र है।

अैसा सेवाक्षेत्र किसी विरले भाग्यवानके लिअे अपना जन्मका गाव भी हो सकता है। लेकिन सबको अैसा सयोग मिलना दुर्लभ है। जन्मका गाव वह हमारे लिअे भले ही न हो, किन्तु हम अुसे अपना मृत्युका गाव तो अवश्य बना सकते है। जो गाव हमारी सेवाका क्षेत्र बना, अुसकी सेवा करते करते अुसकी भूमिमे ही हम अपनी हड्डिया गिरायेंगे, अुसके लिअे जूझते-जूझते हम अपना बलिदान दे देंगे, अैसा सकल्प हम कर सकते है, और हमें करना चाहिये।

अैसा सकल्प करके सेवाक्षेत्रके गावमें बस जाय, बुढापेमें वापस घर जाकर पेंशन भोगनेका खयाल छोड दें, तो हमारी सारी मनोवृत्ति ही बदल जाय। फिर तो जैसे राजपूत केसरिया बाना पहनकर रणमें अुतर पडते थे, अथवा जैसे नौसेना अपनी सकट-कालकी नावें जलाकर शत्रुकी नौकाओ पर आक्रमण कर देती है, वैसा ही हमारा जीवन बन जाय। अब तो वही हमारा आराम, वही हमारा शौक, वही हमारे सगे-सबधी, वही हमारा सब कुछ होना चाहिये।

अिसका अर्थ क्या? अिसका विपरीत अर्थ निकालना सरल है। अब अिसी गावमें सदा रहनेका निश्चय कर लिया है, तो लाओ यही अपने सब सगे-सबधियोको ले आयें। यही अपने रहनेके लिअे सारी सुख-सुविधाओवाला मकान भी बनवा लें। हमारे बच्चोको अग्रेजी पढनेकी मुश्किल होती है, अिसलिअे अपने प्रभावका अुपयोग करके यही अग्रेजी पाठशाला भी खीच लायें। अिस युगमे नाटक-सिनेमाके बिना जीवन बिताना क्या मनुष्यका जीवन कहा जायगा? अिसलिअे हो सके तो नाटक-सिनेमाको भी यहा खीच लायें, और वह सभव न हो तो अन्तमें गावकी सीमा पर रेल्वे स्टेशन बने या बस सर्विस शुरू हो, अैसी कोशिश तो जरूर करें।

यह वर्णन बहुत अतिशयोक्तिपूर्ण और हसी आने जैसा लगता है। लेकिन कम या ज्यादा प्रमाणमें क्या हम अैसा ही नही करते? महीने-पन्द्रह दिनमें शहरका चक्कर लगा

आये, सिनेमा-नाटक वगैरा देख आयें, पढे-लिखे लोगोके बीच अखबारो और साहित्यकी चर्चा कर आये, शहरी खानपानका आनन्द लूट आये और मोटरोमें घूम आयें, तभी हमारे जीको शाति मिलती है। यह सब मिले बिना चार-छ महीने निकल जाय तो हमें अैसा लगता है, मानो कैदखानेमें बन्द कर दिये गये है। क्या हममें से बहुतोको अैसा अनुभव नही होता? बच्चोके लिअे अग्रेजी पाठशाला तो सब कोअी गावमें खीच कर नही ला सकते, लेकिन गावमें बसकर ग्रामसेवाका ध्येय अपना लेने पर भी अपने बच्चोको अग्रेजी पढनेके लिअे शहरमे भेजना क्या अिससे मिलती-जुलती बात नही कही जायगी? सासारिक प्रसगो — बच्चोकी शादियो जैसे प्रसगो — पर क्या अभी तक हममें से बहुतेरे लोग अपने सगे-सबधियोके बीच नही दौड जाते?

लेकिन जैसा मैंने शुरूमें कहा, यदि हमने अपने क्षेत्रको सच्चे मनसे अपने जीवनका धाम बनाया हो, तो अुस गावकी हर चीजके लिअे हमे मनमे गहरा प्रेम और आदर अुत्पन्न करना चाहिये। गावके लोगो और गावके वातावरणको हमे हर तरहसे प्रिय बना लेना चाहिये — अितना प्रिय कि थक जाने पर आरामके लिअे हमारा मन अुसकी ओर ही घूमे।

हमारा अपना घर हमेशा सुख-सुविधाओंसे भरा नही होता। अुस दृष्टिसे तो बहुतोके घर हमारे घरसे ज्यादा अच्छे होते हैं। फिर भी अपने घरके बारेमें हमने कैसी धारणा बना ली है? घूम-फिरकर वहा आयें तभी हमारे मनको शाति मिलती है।

वही भावना हमें अपने गावके लिअे अुत्पन्न करनी चाहिये। वहा सब तरहकी सुख-सुविधायें हैं, या वहा सगे-सबधी रहते हैं, या वहा सुन्दर साज-सामानवाला घर है, अिसलिअे वह हमें प्यारा नही है। वह सब प्रकारकी असुविधाओका सग्रह-स्थान हो, वहा दरिद्रता और दुखका निवास हो, तो भी हमारे मनको वही आनद मिलता है, क्योकि वह हमारा प्यारा गाव है। वहाके रास्ते भले ही घूरो जैसे हो, वहाके घर भले ही खडहर जैसे हो, वहाके लोग भले ही गरीब और अशिक्षित हो, लेकिन जब हम अुस गावके पेड देखते है, जब वहाके ढोर देखते है, जब वहाके परिचित लोगोको देखते है, जब अुनकी वाणी हमारे कानोमें पडती है, तभी हमारे हृदयको शाति मिलती है, परदेशसे स्वदेश लौटनेका आनन्द अनुभव होता है।

हमारे अपनाये हुअे गावके प्रति अैसी भावना हमे अपने भीतर अुत्पन्न करनी चाहिये। अुसे अुत्पन्न करनेकी कुजी यह है कि वहाके लोगोके प्रति हम अपने अतरमें अनन्त प्रेमका झरना बहायें। जहा हमारे प्रियजन बसते हो, वह गाव और घर हमारे लिअे अपने-आप प्रिय बन जाता है। मनुष्यको अपना घर और गाव प्रिय क्यो लगता है? वह सुघड और सुन्दर है अिसलिअे? हरगिज नही। परन्तु वहा हमारे प्रियजन रहते हैं अिसलिअे। घर और गावका अर्थ आश्रय अथवा आश्रयोका समूह नही, परतु हमारे प्रियजन हैं। अुनके साथ जहा रहना हो अुसीको हम घर और गाव मानते हैं। वहा अुनके साथ रहनेका सुख मिलता है, अिसीलिअे वे हमें दूसरे घरो और गावोसे अधिक प्यारे हैं।

अब प्रियजन यानी प्रियजन। रूप हो तो अुसे प्रियजन कहें और रूप न हो तो निकाल दे, अैसा कोअी नही करता। प्रियजन पर गुणकी शर्त भी नही लगाअी जा सकती। कोअी बालक गुणहीन हो तो क्या मा अुसे फेंक देती है? अुलटे, दयाभावसे अुस पर वह अधिक प्रेम और अधिक सेवाकी वर्षा करती है। वैसे ही हमने मनमें निश्चय कर लिया है कि ग्रामवासियोमें गुण हो, तो भी अुन्हे प्रियजन मानकर हम अुनकी सेवा करेंगे और गुण न हो तब तो अुन्हे अधिक प्रिय मानकर अधिक प्रेमसे हम अुनकी सेवा करेंगे। ग्रामवासियोको हम अपने प्रियजन बना लें, तो हमारी सारी दृष्टि ही बदल जायगी। फिर गावकी प्रत्येक वस्तु हमारे लिअे प्रिय हो जायगी, हमें सुन्दर लगेगी, हमारे थके-थकाये मनको आनन्द देनेवाली और निराशामें आशा दिलानेवाली मालूम होगी।

प्रवचन ५५

हमारे ग्रामगुरु

हमारी आजकी बातचीतका विषय मुझे अत्यन्त प्रिय है। आपको भी यह प्रिय लगे बिना नही रहेगा। आज हम अपने प्यारे ग्रामवासियोके गुणोका कीर्तन करनेवाले हैं।

सद्भाग्यसे हमारे देशकी ग्राम-जनतामे अैसे अपार गुण है, जिनके कारण हमारे अन्तरमें अुनके लिअे अपने-आप प्रेमका अुभार आता है। यह सच है कि वे दुखी, दरिद्र, कुचले हुअे और गुलामीमें जकडे हुअे है और अिससे अुनके अनेक स्वाभाविक गुण आज दब गये है, फिर भी गुणग्राही सेवकोकी आखें अुनमे बहुतसे गुण देख सकेंगी।

अिसके सिवा, हम सेवक यद्यपि यह मानते है कि हम गावोकी सेवा करने, अुन्हें सुधारने, अुन्हें सिखानेके लिअे वहा जाते है —और यह गलत नही है, फिर भी हममें नम्रता और ग्रहण-शक्ति होगी, तो हमें खुद भी अुनसे बहुत कुछ सीखनेको मिल सकता है। यद्यपि गावोमें जडता और अज्ञान, फूट और स्वार्थवृत्ति तथा दलबन्दीकी भावना बेहद फैली हुअी है, फिर भी अुनके पास हम यदि प्रेम और सहानुभूति लेकर जाय, तो अुनसे हमें बहुत कुछ अैसा सीखनेको मिलेगा, जो हमें अपनी वर्तमान स्थितिसे अधिक अूचा अुठायेगा, हमारे अदरकी वर्तमान खराबियोको सुधारेगा और अैसा काफी नया ज्ञान हमें देगा, जो हमारे पास नही होगा।

यह सुनकर आपको आश्चर्य होता है। आप मनमें अैसा सोचते है कि आज गावके लोगोका गुणगान करनेका सकल्प मैंने कर लिया है, अिसलिअे अतिशयोक्तिकी सीमा नही रहनेवाली है। आपको लगता है कि "गावके लोगोमे और बहुतसे गुण होगे यह तो हम स्वीकार करेंगे, लेकिन आपका यह कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है कि अुनमें ज्ञान है। भारतकी ग्राम-जनताका अज्ञान, अुनकी जडता तो विश्व-विख्यात है। गुण-

गानके लिअे भी अुन्हें ज्ञानी कहनेकी हद तक जाना अेक तरहसे अुनकी हसी करने जैसा है, किसी पागलको 'राजा' कहने जैसा है।"

आपको अैसा लगता हो तो भी मै अपनी बात पर डटा रहूगा। ग्रामवासियोमें काफी ज्ञान भरा है। हम जैसे पुस्तक-पडितोके लिअे तो अुनके पास नये जानने योग्य ज्ञानका भडार भरा रहता है। हम शिक्षित है और वे अशिक्षित, अिसलिअे हम अुनके शिक्षक बनकर गावोमें जाते हैं। लेकिन जब हम अुनके सपर्कमें आते है तब हमें मालूम पडता है कि वे अशिक्षित लोग अनेक बातोमें हमारे गुरु बनने योग्य है।

हम ज्ञान लेने या देनेका — शिक्षणका — विचार करते है, तो हमारी दृष्टिके सामने केवल ककहरा पढना और लिखना ही आता है। हम अपनेको शिक्षित और गावके लोगोको अशिक्षित मानते है, वह भी केवल अिसलिअे कि हमें यह कला आती है और अुन्हें नही आती।

हम अुन लोगोको कुछ सिखानेका विचार करते हैं, तब कक्का सिखानेके सिवा और कुछ हमें शायद ही सूझता है। यही अेक बात हमें अुनसे अधिक आती है। अपनी पाठशालाओमें हमने और भी बहुत कुछ सीखा होता है। देश-विदेशका अितिहास और भूगोल, गणित और भूमिति, तथा पदार्थ-विज्ञान, रसायनशास्त्र, प्राणीशास्त्र, वनस्पति-शास्त्र, खगोलशास्त्र जैसे विज्ञानोके बारेमें भी थोडी-बहुत शिक्षा हमें मिली होती है। लेकिन हमारे दिमागमें अेक विचित्र भ्रम घुसा रहता है कि हमारा यह ज्ञान अिन अशिक्षित लोगोके सामने प्रगट करना भैसके आगे बीन बजाने जैसा है, अग्रेजी आये बिना यह सारा ज्ञान मनुष्य कैसे समझ सकता है? और अग्रेजी शब्दोका प्रयोग किये बिना हम भी अुन्हें कैसे समझा सकते है? अिसलिअे अशिक्षित लोगोको जबरदस्ती बैठाकर अुन्हें अक्षरज्ञान देनेकी बात ही हमें सूझती है।

अपने मनमें हम अुन पर तरस खाते रहते हैं कि कब वे कक्का सीख जायगे, आगे चलकर कब अग्रेजी सीखेंगे और कब गावठी मिटकर सभ्य लोगोकी श्रेणीमें आयेंगे। हम अुन्हें कक्का सिखाने बैठते है, तब भी हमारे मनमे बडी निराशा ही होती है।

"शायद बेचारे मातृभाषाकी दो पुस्तकें पढना सीख जायगे, लेकिन अिससे अुन्हें क्या लाभ होनेवाला है? सच्चे शिक्षित तो वे तभी बन सकते है जब तेजीसे अग्रेजी पढ सकें और बोल सकें। अितना वे कब पढेंगे और हम कब पढायेंगे?" हमारा प्रयत्न हमें व्यर्थ जाने जैसा लगता है।

लेकिन यदि हमें आखें हो और जहा जिस रूपमें ज्ञान मिले वहासे अुसे ग्रहण करनेके लिअे हमारी बुद्धि लालायित रहती हो, तो हम तुरन्त समझ जायगे कि ग्रामवासी भले ही अशिक्षित हो, फिर भी अुनसे हमें ज्ञानका भडार मिल सकता है। गावोमें विविध धधे करनेवाले लोगोको अुन धधोका अच्छा ज्ञान होता है। किसान, बुनकर, बढअी, लुहार, राज, कुम्हार, ग्वाले, रबारी, चमार, मोची आदि सभी अपने-अपने कामके अच्छे जानकार होते हैं। हम केवल पढना-लिखना ही सीखे होते है। हमें

पाठशालाओमें किसी प्रकारकी कला या कारीगरीका अनुभव प्राप्त नही होता। अत हमारे लिअे तो वे सचमुच हर प्रकारसे गुरु बनाने लायक ही होते हैं।

जब हम यह देखते है कि किसानोको अपने अनुभवसे फसलो, जमीन तथा अलग अलग ॠतुकी खेतीके बारेमे कितनी जानकारी होती है, तो हम आश्चर्यमें डूब जाते है। अैसा ही आश्चर्य हमें अन्य ग्राम-कारीगरोके कामोसे हुअे बिना नही रहेगा। वे पाठशालाके शिक्षकोकी तरह हमे टाटपट्टी पर बैठाकर, हाथमे किताब देकर और स्वय काले तख्तेके सामने खडे होकर यह ज्ञान नही देंगे। लेकिन अगर हमें ज्ञानकी भूख हो, तो जिस जगह वे काम करते हो वहा जाकर हमे अुनके साथ काममें जुट जाना पडेगा। अुन्हे नम्रतासे प्रश्न पूछने होगे। वे समय-समय पर बातचीतके दौरानमें अपने अुद्योगोका भेद सूत्रमय भाषामे हमारे सामने खोलते जायगे।

लेकिन अुनके ज्ञानकी तिजोरी कब खुलेगी, यह आप जानते है? जब हम अुनके साथ जुडकर अुनका अुद्योग करने लगेगे तभी। वे देखेंगे कि स्वय तो कैसे हसते-खेलते और सफाअीसे अपना काम करते है और हमारे तालीम न पाये हुअे हाथ-पैर ठूठकी तरह मुडते ही नही है, यह दृश्य देखकर अुन्हें हम पर दया आयेगी, और दयाके अैसे किसी क्षणमें वे अपने ज्ञान-भडारका अेकाध सूत्र हमें दे देंगे।

लेकिन हम तो ठडी छायामें बैठकर केवल अुनसे प्रश्न ही पूछते रहेंगे। अनुभवके अभावमें प्रश्न भी हमें ठीकसे पूछते नही आयेंगे। अिससे हमारे गुरु तुरन्त हमसे अूब जायगे, और अपने ज्ञान-भडारका द्वार बद कर देंगे। अुन्हें लगेगा कि हम केवल मजाक और कुतूहलकी वृत्तिसे प्रश्न पूछा करते है। यह अुन्हे निकम्मोका लक्षण लगेगा। मनमें वे सरल भावसे सोचेंगे कि अगर हमे सच्ची जिज्ञासा है, तो हम अुनके साथ काममें क्यो नही जुट जाते? शायद मुहसे वे अैसा नही कहेंगे, लेकिन ज्ञान देनेके लिअे अुनका मुह भी हमारे सामने नही खुलेगा।

अिस तरह ग्रामगुरुओसे हमें ज्ञान प्राप्त करना हो, तो अुनकी पद्धतिसे ही अुनकी पाठशालामें हमें सीखना चाहिये। हमारे अनघड हाथोमें जैसे-जैसे कारीगरी आती जायगी और ग्रामगुरुओका मुह खुलता जायगा, वैसे वैसे हम समझते जायगे कि हमारी वैज्ञानिक पुस्तकोके सिद्धान्त हमें पग-पग पर अुनकी शिक्षामें मिलते है। अिसके अलावा, यदि हम केवल परीक्षा पास किये हुअे पडित नही होगे, बल्कि सच्चे अर्थमें शिक्षित होगे, तो हमारे मनमें अुन अुद्योगोके बारेमें अधिक जाननेकी अिच्छा अुत्पन्न होगी, अुनसे सबधित पुस्तकोका हम अध्ययन करेंगे, और अुनमें से हमारे ग्रामगुरुओकी जरूरतकी बाते ढूढ-ढूढ कर अुन्हे देते जायेंगे। जो लोग ग्रामवासियोके लिअे अक्षरज्ञानकी पाठ-शालायें खोलते है, वे अुन्हें नया सीखनेके लिअे बहुत मदबुद्धि ठहरा देते है। लेकिन अिस प्रकार अुन्हें नया ज्ञान देते समय हमें अनुभव होगा कि वे अुसी आतुरतासे नये ज्ञानको पीते है, जिस आतुरतासे प्यासा आदमी पानी पीता है।

अब ग्रामवासियोके लिअे हमारे मनमें आदर और प्रेम अुत्पन्न करे अैसा अुनका अेक और गुण आपको बताता हू। हम ग्रामसेवक अपनेको स्वदेशी-धर्मके अुपासक

मानते है और अुस धर्मको गावोमें फिरसे स्थापित करना चाहते हैं। अिसीलिअे हम चरखा और अन्य ग्रामोद्योगोकी बात लेकर वहा जाते है।

यदि हमें आखें होगी तो हम देखेंगे कि यद्यपि गावो पर विदेशीका जोरदार हमला होता रहता है, फिर भी वहाके लोगोके खूनमें से स्वदेशी-धर्मका पूरी तरह नाश नही हुआ है। वश-परपरासे वह अुनमे अुतरता चला आया है। स्वदेशी-धर्मके लिअे अुन्हें स्वाभाविक आदर है। अुसका भग होते देखकर अभी भी अुनका मन दु खी हो जाता है।

हमे किसी भी चीजकी जरूरत पडी कि हमारे पैर सीधे बाजारकी ओर मुड जाते है। यह दूसरी बात है कि बाजारमें जाकर हम स्वदेशीके अुपासक होनेके कारण खूब पूछताछ करके स्वदेशी वस्तु ही लेनेका आग्रह रखेंगे। लेकिन गावके आदमीको जब किसी चीजकी जरूरत पडती है तब वह क्या करता है? वह बाजारकी तरफ देखता ही नही। अुसे पहला विचार यही आता है कि यह चीज मैं अपने हाथसे ही बना लू। अुसके लिअे जरूरी कच्चा माल वह अपने आसपास ही कहीसे ढूढ निकालता है। अुसे बनानेके लिअे कोअी औजार जरूरी हो तो अुसे भी वह किसी घरेलू चीजकी मददसे अपनी सूझ-बूझ द्वारा बना लेता है और अपनी जरूरतकी चीज खडी कर लेता है। वह चीज बनानेमें कोअी कठिनाअी हो, जरूरी कच्चा माल आसपास न मिल सकता हो, या बनानेके लिअे अुसके पास समय न हो, तो वह यथासभव अुस चीजके बिना चला लेता है और कठिनाअी भोग लेता है। अुसके स्वभावमें स्वदेशीकी अैसी गहरी जडें जमी हुअी है।

आज दियासलाअीका गावो पर कितना भारी हमला हो रहा है? फिर भी गावके लोग अभी तक चूल्हा जलानेके लिअे पडोसीके चूल्हेसे आग ले आते है, और अेक दीया जलने पर अुसमें से पास-पडोसके कितने ही दीये जल जाते है। आज भी अुन्होने चकमकको बिलकुल भुलाया नही है। रस्सीकी जरूरत पडने पर वे यहा-वहासे सन या भिडी या अैसा ही कोअी दूसरा रेशा तलाश करके अुसकी रस्सी तैयार कर लेते है। चटाअीकी जरूरत पडती है, तो कहीसे घास या नारियल अथवा ताडके पत्ते बीन लाते है और अपने हाथसे चटाअी बुन लेते है। कपडे धोनेके लिअे हमारी तरह साबुन खरीदने बाजार दौडना अुनके स्वभावमें नही है। वे गावकी सीमा पर जाकर खारी मिट्टी खोद लाते हैं, अथवा अरीठे या हिंगोट तोड लाते है। बीमारीमें दवाकी जरूरत पडने पर हम यदि स्वदेशीके बहुत आग्रही हुअे तो देशी वैद्यके पास दौडे जाते है या किसी देशी कारखानेकी दवा ले आते हैं। लेकिन ग्रामवासियोको अैसे समय क्या सूझता है? वे आसपाससे कोअी वनस्पति तोड लाते हैं या कोअी जडीबूटी खोद लाते हैं।

सभी चीजें हाथसे बनाना सभव नही होता। हाथसे न बनाअी जा सकनेवाली किसी चीजकी जरूरत पडने पर वे गावका ही कोअी कारीगर ढूढते है। नअी सभ्यताके जालमें फसे हुअे अुनके लडके अपने गावके दर्जी या मोचीकी ओर ध्यान न देकर दूसरे गावसे कपडे, जूते वगैरा सिलवा लाते है, तो अुनका स्वदेशी स्वभाव दु खी हो जाता है। वे अैसा मानते है मानो कोअी बडा पाप हो गया हो। गावका कारीगर खाली न हो

और अुसके पास चीज तैयार न हो, तो वे स्वय कठिनाअी अुठा लेते है, अुसके विना चला लेते है, लेकिन पैसा खर्च करके चाहे जहासे ले आनेकी जल्दी वे नही करते। और वहुत वार अिस तरहकी चीजें भी जैसी वनाते आये वैसी खुद ही वना लेना अुन्हें अच्छा लगता है।

हम गावमे पहले-पहल चरखा लेकर जाते है, तव अिस नअी वस्तुके प्रति अपना आकर्पण वहाके लोग किस तरह वताते है, यह देखने जैसा होता है। वास्तवमें चरखा गावकी चीज है, लेकिन मिलोका गावो पर अितना भयकर आक्रमण हो चुका है कि आज चरखा वहाके लिअे अेक नअी वस्तु वन गया है। हम देखेंगे कि अुन लोगोके स्वदेशी स्वभावको वह तुरन्त पसद आ जाता है। घरका कपडा घरमें वना लेनेका विचार ही अुन्हे सीधा, सच्चा और अिमीलिअे आकर्षक लगता है। कुछ लोग तुरन्त वाडेमे से लकडीके टुकडे ढूढकर ले आते है और हसियेसे चरखा वनाने लग जाते है। कोअी अधिक सादी बुद्धिवाले लोग तकली वना लेते है, खेतमें से थोडासा कपास वीनकर तार निकालने लगते है और हमे अुत्साहसे अपना नया सर्जन दिखाते हैं। कोअी कोअी तो करघा, जो जरा अधिक कारीगरीवाला यत्र है, वना लेनेकी हद तक भी जाते देखे गये है। अुनका स्वदेशी दिमाग अिस रास्तेसे ही चलता है। लेकिन हम यह आशा लगाये वैठे रहते है कि वे हमें तैयार चरखा ला देनेको कहेंगे, और यदि अुनकी तरफसे अैसा आर्डर तुरन्त न मिले तो हम मनमें निराश हो जाते हैं, और ग्रामवासियोका स्वदेशी दिमाग जिस दिशामें काम करता है, अुस दिशामें हम अपनी अधीरताके कारण रस या अुत्साह नही दिखाते और अुन्हे प्रोत्साहन नही देते।

यह सच है कि गावके लोगोमे स्वदेशीके लिअे राष्ट्रीय दृष्टि नही होती। वे अितना तो जानते है कि पुराने जमानेमें लोग घर-घरमे अपने हाथसे ही सूत कातते थे और गावमें ही कपडा बुन लेते थे। लेकिन अिस कला-कारीगरीका नाश कव हुआ, कैसे हुआ, किस देशके कपडे हिन्दुस्तानको पहनने पडे, देशी मिलोका कपडा भी सच्चे अर्थमें स्वदेशी क्यो नही कहा जा सकता, स्वदेशी-धर्म छोडा अिसीलिअे हमने स्वराज्य कैसे खोया, स्वदेशीकी फिरसे स्थापना करनेके लिअे देशमें कैसे कैसे प्रयत्न आज तक हुअे है — ये सब बातें हमें अुन्हे कहनी होगी। कपडेके बारेमे ही नही, लेकिन अूपर वताये गये दियासलाअी, रस्सी, साबुन, दवाओ आदिके धन्धे, लोहे और फौलादके धधे, रगाअी और छपाअीके धधे, जहाजरानीका धधा — सब कैसे नष्ट हो गये और अुन्हे फिरसे कैसे सजीव किया जाय, यह सव भी अुन्हे राष्ट्रीय दृष्टिबिन्दुसे समझाना होगा। अुनकी खेतीमें भी सब अपने अपने घरका ही विचार करने लगे और किसीको राष्ट्रीय विचार नही सूझे, अिससे खेतीकी कैमी तवाही हुअी और आज भी हो रही है, यह भी हमें अुन लोगोको समझाना पडेगा। हमारी अुन वातोको वे अुसी तरह तुरन्त ग्रहण कर लेंगे, जिस तरह मछलिया पानीमें डाली हुअी आटेकी गोलिया तुरन्त पकड लेती है। स्वदेशीकी जडें तो अुनके स्वभावमें जमी ही हुअी हैं। हम प्रेमसे अुन्हे सीचेंगे, तो अुनमें से नये डाल-पत्ते फूट आयेंगे।

ग्राम-जनतामें परस्पर सहायता करनेका गुण भी अितने सुन्दर रूपमें काम करता है कि अुसे देखकर हम अुनकी प्रशसा किये बिना नही रह सकते। हम पढे-लिखे लोग पडोसमें कौन रहता है यह भी नही जानते, विपत्ति या आफतमें पडोसियोकी सहायता करने जाना तो दूर रहा। गावके लोगोका वरताव अिस तरह अपने-आपमे केन्द्रित, स्नेह-विहीन या सहानुभूति-हीन नही होता।

गावमें घरो पर छप्पर डालनेका मौसम आता है, तब सारा गाव अुस काममें जुट जाता है। अुस समय क्या हरअेक घर पर अुसी घरके व्यक्ति काम करते हैं? नही। हम देखें तो मालूम पडेगा कि वहा परस्पर सहायता करनेवाली छोटी-छोटी टोलिया बनी हुअी होती हैं। सारी टोली पहले अेक घर पर छप्पर डालती है, फिर दूसरे घर पर, फिर तीसरे पर। अिस तरहका परस्पर सहयोग सब घरो पर छप्पर छा जाने तक चलता रहता है।

और सब घरोमें मनुष्योकी शक्ति अेकसी नही होती। किसी-किसीके पास साधनोका भी पूरा सग्रह नही होता। किसी घरमें अकेला ही आदमी होता है, जो बीमार पडा होता है। किसी घरमें सिर्फ छोटे बालक होते हैं, जिन्हें अुनके मा-बाप निराधार छोडकर मर गये हैं। फिर भी किसीका काम बाकी नही रहता। कौन कितना घाटेमें रह गया और किसे कितना लाभ हुआ, अिसका कोअी हिसाब नही लगाता।

शहरी लोग अिस तरह परस्पर सहायता करनेके लिअे निकलेंगे ही नही, और निकलेंगे भी तो पहलेसे ही सारा हिसाब रुपया-आना-पाअीमे लिखने बैठ जायगे। अिससे कितने ही गरीब और निराधार लोगोकी लज्जा चली जाती है। गावके लोगोका स्वभाव ही अैसा है कि वे सबको ढक लेते हैं, सभाल लेते हैं। अिसमें किसीने किसी पर अुपकार किया है, अैसा भी वे नही मानते।

गावका मुख्य अुद्योग खेती-बाडीका है। अिसमें यदि परस्पर सहायता करनेका गुण अुन लोगोमें न हो और सारा व्यवहार पैसेके जोर पर चले, तो कितने ही लोगोकी खेती नष्ट हो जाय। बैलोकी जोडीको पूरे साल पाल सकें, अैसी शक्ति सबकी नही होती। अैसे लोग अेक बैल रखते हैं और अेक-दूसरेको बैलकी मदद देकर अपना काम चला लेते हैं। गावोमें अैसे बहुतसे अुदाहरण मिलते हैं। फिर फसल-कटाअी, कपास-बिनाअी, बुवाअी, घास-कटाअी जैसे काम निकलते हैं, तब प्रत्येक किसानको कअी आदमियोकी जरूरत पडती है। परन्तु घर-घरमें अितने आदमी कैसे हो सकते हैं? पैसा खर्च करके मजदूर लाने हो, तो भी कुछ गरीब स्थितिवाले अुतनी शक्ति नही रखते। परन्तु गावके अेकजीव और अेक-कुटुम्ब जैसे रहनेवाले लोग सहकारी मडलियोमें निकल पडते हैं और सबका काम अच्छी तरह पार लग जाता है, किसीका काम रुकता नही।

गावोमें भी जो व्यापारकी दृष्टिसे खेती-बाडी वगैरा धधे करते हैं, वे सारा हिसाब पैसोमें ही गिनते हैं। अिसलिअे अैसा सुन्दर व्यवहार अुनमें कभी देखनेको नही मिलता। लेकिन गरीब वर्गके किसान, जो अपनी मेहनतसे खेती करते हैं, अपनी जरूरतकी चीज अुत्पन्न करनेकी दृष्टिसे माल पकाते हैं, और जिनके पास जमीन और साधन भी

अपनी आवश्यकता जितने ही है, अुनमे अभी तक अैसा सुन्दर व्यवहार और स्वभाव काफी मात्रामे देखनेको मिलता है।

हम सेवकोके लिअे तो अैसे ग्रामवासी अनेक प्रकारसे अुपयोगी होते है—खास तौर पर हम नये-नये गावमे रहनेके लिअे जाते है, तव यदि कोअी ग्रामवासी सज्जन हमारे लिअे रहनेकी जगह दे देते है, तो अुसे लीपने-पोतनेके लिअे विना कहे गावकी वहने निकल पडती है। लोग अिकट्ठे होकर हमारे लिअे झोपडी या मडप वना देते है। अिसमे किसने कितना सामान दिया, किसने कितनी मेहनत की और किसने कितना अुपकार किया, अिसका हिसाव करनेकी वात किसीको स्वप्नमें भी नही सूझती।

लोगोका यह गुण निजी मामलो तक ही सुरक्षित रहा है। लेकिन देशके रीति-रिवाज वहुत वदल जानेसे और 'यथा राजा तथा प्रजा' हो जानेसे सार्वजनिक कामोमें वह जितना चाहिये अुतना आज प्रगट नही होता। गावके तालाव पहलेकी तरह समय-समय पर खोदे नही जाते, कुअें साफ नही किये जाते, वाध वाधे और मरम्मत नही किये जाते, पगडडियो और रास्तोकी कोअी देखरेख नही रखता, जो धर्मशालाअें और मदिर पुराने लोग वनवा गये है अुनकी रक्षाके लिअे प्रयत्न नही किया जाता। पहले तो यह सव काम गावके ही लोग अिकट्ठे होकर परस्पर सहायताके अपने गुणसे कर डालते थे। आज अैसे कामोके लिअे अुन्हें सरकारकी ओर ताकते रहनेकी आदत पड गअी है। अुनमें अेक प्रकारका आलस्य भर गया है। यह सव करनेकी आदत छूट गअी है। फिर भी कोअी आगे वढ कर पुकार अुठाता है, तो खूनमें रहा अुनका पुराना गुण तुरन्त झलक अुठता है और वर्षोंसे अुपेक्षित दशामें पडे हुअे गावके कामोको लोग आनन्दपूर्वक कर डालते है।

सेवकोको अैसे प्रेमी लोगोसे निजी सेवा करवानेमें वहुत सकोच रखना होगा। परन्तु सार्वजनिक कामोमें ग्रामजनोके अिस गुणका फिरसे अुपयोग करनेमे सेवकोको अपनी सारी कलाका प्रयोग कर दिखाना होगा। अैसे कितने ही काम हमने अूपर गिना दिये है। अुसी तरह गावकी गलिया और सीमा साफ करनेके लिअे अुनकी सह-कारी टोलिया खडी की जा सकती है, पेड लगानेका काम किया जा सकता है, गावके चरागाहोमें कटीले पेड वढ गये हो तो अुन्हें साफ किया जा सकता है। गावके आसपास गढे हो गये हो और अुनमें पानी भरकर मच्छर पैदा होते हो तथा अिसके परिणामस्वरूप मलेरिया वुखार गावका पीछा न छोडता हो, तो लोगोको यह स्थिति समझाकर गढे भरवानेका आयोजन किया जा सकता है। अैसे वहुतसे काम आज लोगोके हाथ या कुदाल न लगनेके कारण मृतप्राय स्थितिमें पहुचे हुअे दिखाअी देते है।

वहुतोकी अिस परसे यह धारणा वन जाती है कि गावके लोग आलसी है, अिसीलिअे अैसा होता है। लेकिन सार्वजनिक कामोमें सदा आगे वढकर मार्ग दिखानेवाला कोअी नि स्वार्थ सेवक होना ही चाहिये। अैसे सेवक मिल जाते है तव ग्रामवासियो जैसे लगनवाले और मेहनती लोग दूसरे शायद ही देखनेमें आते है।

प्रवचन ५६

आलसीपनकी जड़ें

गावोकी जनताके गुण तो जिसके पास देखनेके लिअे सहानुभूतिवाली आखें होगी अुसीको दिखाअी देंगे, अन्य लोगोको वह जनता अवगुणोका भडार ही दिखाअी देगी। गावोमें दरिद्रताके बादलोकी अितनी घनघोर घटा छायी रहती है कि अुनके आरपार होकर गुणोकी किरणें दिखाअी देना सरल नही है।

अुनका सबसे बडा अवगुण, जो सबकी नजरमें आता है, अुनका आलसीपन है। अुनका शरीर जितना आलसी है अुसकी अपेक्षा अुनका मन अधिक मद या जड देखनेमें आता है। अपने काम-धधेमें अुन्हे जैसे कोअी रस ही नही होता, जो काम किये विना चल ही नही सकता अुसे वे बेगारकी तरह कर लेते है। तब फिर सार्वजनिक कामोमें अुत्साहसे भाग लेते वे कैसे दिखाअी दें? अुनके अिस मन्द स्वभावका परिचय सेवकोको अच्छी तरह मिल जाता है, और अिस कारण बहुतसे सेवक गावकी जनता और देशकी स्वतत्रताके बारेमें निराश हो जाते है।

लेकिन गावके लोगोमें आलस्य है, अैसा कह कर निराश होना, अुन्हें छोड देना, क्या हम सेवकोके भी आलसीपनकी निशानी नही है? गावोमें आलस्य तो है, लेकिन अुसकी जड कहा है, यह खोजना हमारा कर्तव्य है। अिसकी खोज करें तो हम देखेंगे कि लोगोका यह अवगुण अुनकी परिस्थितियोका फल है। वैसी परिस्थितियोमें अच्छेसे अच्छे मनुष्य भी अुनके जैसे आलसी बने बिना रह नही सकते। खोज करेंगे तो हमें यह भी मालूम होगा कि अुनके अिस अवगुणका थर हटाया जा सके, तो अुसके नीचे गुणोके रत्न छिपे होते है।

पहली बात तो यह है कि विदेशी और शहरी कारखानोके आक्रमणसे गावोंके धधे बद हो गये है और मुहल्लेके मुहल्ले बेकार हो गये है। बुनकरोकी बस्तीको देखिये, चमारोकी बस्तीको देखिये, कुम्हारोकी बस्तीको देखिये, ग्वालोकी बस्तीको देखिये, रगरेजो और छपाअी करनेवालोकी बस्तीको देखिये। सब बेकार और सूनी हो गयी है। अेक समय ये ही बस्तिया और मुहल्ले अुद्योग-धन्धोसे कैसे गूज अुठते थे! वहाके पुरुष, स्त्री और बच्चे भी काममें कैसे मशगूल रहते थे! आज कुछ साहसी लोग गाव छोडकर देश-विदेशमें निकल गये है, दूसरे खेतीके मजदूर बन गये है। लेकिन खेती भी कितनोके निर्वाहका भार अुठाये? अिस तरह आ पडनेवाली अनिवार्य बेकारीके कारण लोगोका अुद्योगी स्वभाव मिट गया है। अिस कारण-परपरामें गहरे न अुतरें और ग्रामवासियोको आलसी कह कर अुनका तिरस्कार करें, तो हम अपना सेवक-धर्म कैसे निभा सकते हैं? वास्तवमें हमारा मुख्य काम गावोकी यह बेकारी दूर करना ही है।

दूसरा कारण है अिस नये जमानेका अप्रामाणिक पैसा-व्यवहार और सरकारके पक्षपातपूर्ण कानून। आज चीजोके बजाय रुपया बडा बन बैठा है। अक्लमन्द लोगोने

रुपयेका लालच दिखाकर गावोके सारे व्यवहारको बिगाड दिया है। खेतीको अन्न पैदा करनेका साधन न रहने देकर रुपया कमानेके व्यापारका अेक साधन बना दिया गया है। किसानोके साथ साहूकारोका लेन-देनका व्यवहार तो पहलेसे ही चला आता था। लेकिन जबसे रुपयेका महत्त्व बढा है, तबसे अुनकी साहूकारीमे असत्यका जहर मिल गया है और लेन-देनमे छल-कपट करके साहूकारोने भोले, सादे, विश्वासी लेकिन अपढ किसानोको तबाह करके अुनकी जमीने अपने नाम पर करा ली है। कानून लोगोकी रक्षा कर सके अैसी स्थिति भी वे रहने नही देते। कानूनी दृष्टिसे आवश्यक खाता तैयार करके और अुस पर सरकारी स्टाम्प लगाकर विश्वामी किसानोसे अगूठा लगवा लेनेमें वे कभी लापरवाही नही करते। और कोअी न्यायालयमे अपना बचाव करने जाय, तो रुपयेके बलवाले साहूकारको अुसे हरानेके बहुतमे रास्ते मालूम होते है।

दूसरी ओर, किसान भी रुपयेके लालचमे पडकर जरूरतकी चीजे अुगानेकी ओर दृष्टि नही रखते, और पैसा लानेवाली फसल ही पैदा करते है। किसान माल पैदा करके व्यापारियोको बेचने जाता है और फिर अुन्हीसे अपनी जरूरतकी चीजें खरीदता है। अिस तरह दोनो ओरसे अुसके सिर पर करवत चलती है।

अिस स्थितिके परिणामस्वरूप आज गावोमें क्या देखनेमे आता है? अधिकाश जमीन अैसे लोगोके हाथमें चली गअी है, जो रुपयेके लिअे ही अुसमें खेती करते है। वे भला गावकी जरूरतोका विचार करनेका अुत्तरदायित्व क्यो स्वीकार करें? "हमारे खेतमें हमने अन्न पैदा नही किया, तो क्या बाहरसे नही लाया जा सकता? जिसके पास पैसा होगा वह अनाज आदि जो भी चाहिये खरीद लायेगा और जिसके पास पैसा नही होगा वह भूखो मरेगा, अिसमें हम क्या करें?" वे तो अिसी प्रकार दलील करेंगे? परिणाम यह हुआ है कि खेत मेहनत करनेवाले सच्चे किसानोके हाथमे नही रहे। वे जमीन-जायदादके अभावमें निरे मजदूर बन गये है। दूसरोंके खेतोमें जितने दिन काम मिल जाय अुतने दिन मजदूरी करने जाते है। लेकिन अधिकाश दिन अुन्हें बेकारीमें गुजारने पडते है। अैसी स्थितिमें अुन्हें आलसी कहकर हम अुनकी निन्दा कैसे कर सकते है? अुद्योग-धधा है ही कहा, जिस पर वे मेहनत करें?

लेकिन अल्प दृष्टिवाले लोग शहरोकी ओर अुगली अुठाकर कहते है "गावोमें जितने बेकार हो वे सब शहरोमे जाकर किसी अुद्योगमे क्यो नही लग जाते?" कुछ लोग शहरोकी ओर खिच जाते है, लेकिन वहा भी आखिर कितने लोग समा सकते है? शहरोमें बडे-बडे कारखाने दिखाअी देते होंगे, लेकिन कारखानोका अर्थ है बहुतसे लोगोका काम मशीनोकी सहायतासे थोडे लोग करे। अिसलिअे कुल मिलाकर कारखाने भी लोगोको बेकार बनानेका ही धधा करते है। अिसके सिवा, सारे हिन्दुस्तानके सब कारखाने मिलकर कितने लोगोको रोजी दे सकते है, यह आप जानते है? बीस लाखसे ज्यादाको नही।

गावके लोग आलसी, ढीले और निरुत्साही दिखाअी दें, तो अुसका तीसरा कारण अुनकी विकराल दरिद्रता है। अिस देशके लोग खानपानकी दृष्टिसे आज जितने

दुखी है, अुतने पहले कभी नही थे। चारो ओरसे अुन्हे चूसनेके लिअे नल लगा दिये गये है। (विदेशी) राज्य सबसे बडा पम्प है और भारतमें अुसके अस्तित्वका प्रजाको चूसनेके सिवा और कोअी अुद्देश्य हो ही नही सकता। अुसके सीधे करोके सिवा विदेशी और देशी व्यापार-रोजगारके अनेक नल अुसकी मदद करनेको लगे हुअे है। यह चूसनेका काम दिन पर दिन बढता जाता है, और देशसे जो धन जाता है अुसमें से वापस तो कुछ आता ही नही है।

पगडीका बल अतमें सिरे पर आता है, अिस कहावतके अनुसार अन्तमें अिसका असर लोगोकी खुराक पर पडता है। कअी दिन तक केवल काजी पर जीनेवाले करोडो लोग — जिन्हें दूध-घीकी तो बात ही क्या, छाछकी बूद भी कभी कभी ही मिलती है और जिन्हें किसी किसी दिन नमकके बिना भी काम चलाना पडता है — अिस भारतमें ही है। विश्वके और किसी देशमें शायद ही अितने कगाल लोग होगे। अिससे अुनके शरीरमें ताकत नही रह गअी है। गावमें जहा जाये वहा कितने ही लोग अशक्त और बीमार दिखाअी देते है। अैसी स्थितिमें जिन्हें वर्षोंसे रहना पड रहा है, वे लोग यदि निराश हो जाय, भयभीत हो जाय, किसी मनुष्य या अीश्वर पर अुन्हें थोडी भी आस्था न रह जाय, तो क्या अिसमें अुनका दोष है? अैसी घोर दरिद्रताके कारण ही हमारे ग्रामवासी सकुचित मनोवृत्तिवाले हो गये है और आपसके झगडे-टटोमें फसे रहते है। अुनके दुर्बल अगोमे काम करनेका आलस भर गया है और अिससे अुनके मनमें भी कोअी अुत्साह नही रह गया है। अिसीलिअे अुन्हें किसी नअी बातमें रस नही आता। अुन्हें जीनेमें ही कोअी रस नही रह गया है — वे मृतप्राय होकर जीते है।

अैसी स्थितिमें भी सेवक देखेंगे कि जब हम अुनके प्रति अपने हृदयका सच्चा प्रेम प्रगट करते है, जब अुन्हें यह विश्वास हो जाता है कि हम लोग अुनकी स्थितिको सुधारनेका प्रयत्न करनेवाले अुनके सेवक है, अुन्हें चूसनेवाले नये कपटी सफेदपोश ठग नही है, तो अुनके बद हुअे हृदय-कमल खिलने लगते है। थोडे ही समयमें अुनके भीतर नवजीवनका सचार होने लगता है, और वे अुत्साह तथा परिश्रमकी वृत्ति भी अच्छी मात्रामें प्रगट करते है। पालेसे लगभग जली हुअी वाडीमें कुदरतकी कृपासे फिर नअी कोपलें फूटते कोअी किसान देखे, तो अुसका हृदय कितना प्रसन्न हो अुठता है? गावोमे जानेवाले सेवकोको अैसा ही अुत्साहप्रद दृश्य वहा देखनेको मिलता है, और यह देखकर अुनका सेवा करनेका रस खूब बढ जाता है।

प्रवचन ५७

भयोंका भय

गावके लोगोके सिर पर आलसी होनेका जो आरोप है, अुससे भी वडा आरोप अुन पर डरपोकपनका है। यह दोप सिर्फ ग्रामवासियोमे ही हो अैसी वात नही है, शहरी और पढे-लिखे लोगोमें भी है। देशकी सारी जनतामे भयभीतता घर किये वैठी है। तुलना करनेसे मालूम होगा कि गावोकी अपेक्षा शहरके पढे-लिखे लोग अधिक डरपोक होते हैं। अधेरेका डर, साप-विच्छूका डर, चोर-डाकूका डर, सिन्धी-पठानका डर, सिपाहीका डर, दडका और जेलका डर। भयके ये सव प्रकार गावोमें न हो अैसी वात नही है, किंतु पढे-लिखे लोगोमे वे वहुत अधिक मात्रामें पाये जाते हैं।

ये सव भय जव प्रत्यक्ष आ पडते हैं, तव ग्राम-जनताकी अपेक्षा पढे-लिखे लोग वहुत कम मात्रामें मनुष्यत्वको शोभा देनेवाला व्यवहार कर पाते हैं। अच्छे अच्छे प्रतिष्ठित लोग भी अधेरेमें जाना मजूर नही करते, और अैसा प्रसग आ ही पडे तो अुनके पैर कापते देखे जा सकते हैं और छातीकी धडकन सुनी जा सकती है। शहरोमें साप-विच्छू कम होते हैं, लेकिन अगर कभी दिखाअी दे जाय तो अैसे लोग स्वय अुनसे दूर दूर भागते रहते हैं और किसी ग्रामीण नौकरसे ही अुन्हें मरवाते या पकड-वाते हैं। चोर-डाकूसे तो वे अितने घवराते है, मानो अुन्हे किसी मनुष्येतर योनिके प्राणी मानते हो। और चोर-डाकूकी शका हो तो घरकी रक्षाके लिअे किसी अरव, भैया या सरकारी सिपाहीकी व्यवस्था करने पर ही अुन्हें नीद आती है। सिन्धी, पठान, गोरे, चीनी और सामान्य रूपसे किसी भी विदेशीसे वे कितने डरते हैं, अिसका लज्जाजनक प्रदर्शन शहरकी सडको पर या रेलगाडियोमें रोज देखनेको मिलता है। और सरकारी सिपाही, अधिकारी या जेलके डरका तो पूछना ही क्या? अुसकी छायासे बचनेके लिअे कितना 'साहव साहव', कितनी खुशामदें, कितनी रिश्वतखोरी चलती है? कोअी आदमी समाजमे चाहे जितना प्रतिष्ठित और सम्मानित गृहस्थ माना जाता हो, लेकिन किसी तुच्छ सिपाहीको देखते ही वह अितना घवरा जाता है जितनी भेड भी वाघको देखकर नही घवराती।

गावका आदमी भी डरपोक तो है, लेकिन अूपरके वर्णनकी अपेक्षा प्रत्येक भयके प्रसग पर वह अधिक स्वाभिमानपूर्ण व्यवहार करते देखा जाता है। अधेरेमें अुसे भूत-प्रेतकी शका बहुत रहती है, पर वह शका अुसे खेतकी रक्षा करनेके कर्तव्यसे रोक नही सकती। साप-विच्छू तो अुसके रोजमर्राके साथी हैं। अुनसे वह विलकुल नही डरता।

चोरोसे गाववाले डरते हैं, लेकिन अिसलिअे नही कि वे चोरी कर जायगे या मार डालेंगे, बल्कि अिसलिअे कि चोरी होने पर पुलिसकी धाधली मचेगी और गवाही देनेके लिअे वे हमें कोर्ट-कचहरीके जजालमें फसायेंगे। यह सच है कि गाव पर डाकू हथियारवद डाका डालते हैं तब गाववाले घवरा जाते हैं और कअी वार तो भगदड

मचा डालते हैं। अुसमें भयका प्रमुख कारण यही होता है कि अुनके पास हाथ-पैरके सिवा कोअी हथियार नही होते। लेकिन अैसे समय कोअी हिम्मत रखकर ललकारनेवाला अगुवा मिल जाय, तो अुन्ही ग्रामवासियोमें से बहादुर लोग तैयार हो जाते हैं और मौतका डर छोडकर हथियारबद डाकुओका मुकाबला करते हैं।

विदेशियोके डरके सबधमें यह बात है कि वे गावोमें बहुत आते नही हैं और ग्रामवासियोको रेलगाडियो या शहरके बाजारोमें अधिक जाना नही पडता। लेकिन अुनका डर अिनके खूनमें पैठा हुआ है, अैसा नही कहा जा सकता। गावोमें जमीदारी या शराब वगैराका धधा करनेवाले लोग अपने निजी अनुभव परसे यह धारणा बना लेते है कि गावके लोग भी विदेशियोसे डरते ही होगे। अिससे जब अुन्हें अपने धधेके सिलसिलेमे ग्रामवासियो पर दबाव डालने और अत्याचार करनेकी जरूरत पडती है, और अुनके धधे देखनेमें खेती या साहूकारी जैसे होने पर भी वास्तवमें अेक या दूसरे बहानेसे ग्राम-जनताका शोषण करनेवाले ही होते हैं, तब वे लोग सिन्धी, पठान, भैया जैसे विदेशियोको ले आते है और अुन्हें अपने चौकीदार या खानगी सिपाहियोकी तरह नौकरीमें रखते हैं। अिस योजनासे अुनके हेतुकी बहुत अशमें सिद्धि हो जाती है और वे गावके लोगोको दबावमें रख सकते हैं। चौकीदारोकी गालियोके सामने गावके लोग तुरत गाली नही देते और अुनके डडोके सामने झट अपने डडे नही अुठाते। लेकिन अैसा मानना भूल है कि अिसका कारण गाववालोका डर है। अेक लबे कदवाले पठानको देखकर पढे-लिखे शहरी लोगोकी छाती धडकने लगती है, लेकिन ग्रामवासियोमें से अधिकाशको अैसे शारीरिक भयका अनुभव नही होता।

ग्रामीण स्वभावसे ही भले और सहनशील होते हैं। सेठ-साहूकार सफेदपोश और सस्कारी ठहरे। अिसलिअे अिनके प्रति ग्रामजनोके मनमें अेक प्रकारका स्वाभाविक आदर होता है। अुन्होने विपत्ति पडने पर अन्न दिया हो, दवा दी हो, तो अैसे अुपकारोको गाववाले भूल नही सकते। अिसीलिअे अुनके नौकरोसे अेकदम लड पडना अुन्हें हलकापन लगता है। भलाअीका यह गुण अुन लोगोकी दरिद्रताके घूरेमें अितना दब गया है कि वह जल्दी नजर नही आता। लेकिन सहानुभूतिकी नजरसे देखनेवाला सेवक अुसे जरूर परख लेगा और देखेगा कि गाली देनेवाले और मारनेवालेको आसानीसे चुप कर देनेकी शक्ति रखने पर भी अपने भीतरकी भलाअी, अुदारता या खानदानियतके कारण ही गाववाले यह सब सह लेते है। अूपरकी तहको चीरकर जब हम यह देखते हैं, तब अुनके प्रति हमारा आदर बढे बिना नही रहता।

लेकिन दरिद्र मनुष्यके गुण भी दोषके रूपमें ही दिखाअी देते हैं। मारनेवाला चौकीदार तो अैसा ही मानता है कि वह मेरी लाठीसे डर कर चुप रह गया। लेकिन ग्रामवासी डरता हो तो भी अुसे डरानेवाली न तो चौकीदारकी लाठी है, न अुसका लम्बा-चौडा शरीर है और न अुसकी दाढी-मूछ है। अुसका डर कुछ और ही प्रकारका है। अुसे बडा डर यह होता है कि सेठके नौकर पर हाथ अुठाअूगा, तो वह मुझे अनेक तरीकोसे तग करेगा, सकटके समय अन्न अुधार देना बन्द कर देगा और बेकार बना

कर भूखो मारेगा। अिससे भी बडा डर अुसे यह होता है कि अगर गुस्सेमें आकर मैं हाथ अुठाअूगा, तो 'चोर कोतवालको डाटे' वाली कहावतका मुझे अनुभव होगा। अुलटे मुझी पर फौजदारी कर दी जायगी, मुझी पर पुलिसकी मार पडेगी और अत्याचार होगे, कोर्ट-कचहरियोकी ठोकर खाते खाते मैं अधमरा और पागल जैसा हो जाअूगा, धन-बलवाले सेठके सामने वहा मेरी कोअी नही सुनेगा और मुझे और मेरे गरीब कुटुम्बको वे लोग अकारण कैदखाने और सजाके चक्करमें डाल देंगे। ग्रामवासी अिसी डरसे कायर बन जाता है, दीन बन जाता है।

वह गोरेसे डरता है, लेकिन अिसलिअे नही कि अुसका रग गोरा है या वह कद्दावर और हृष्ट-पुष्ट है। अुसकी जेबमें पिस्तौल रहती है, अिसका भी ग्रामवासीको अितना डर नही होता। अुसका सबसे बडा डर यह होता है कि यह आदमी अगर निश्चय कर लेगा तो सरकारी पुलिसकी फौज अुसके पीछे पड जायगी, जो अुसे कोर्ट-कचहरियोकी ठोकर खिलाकर परेशान कर डालेगी, न अुसे काम-धधेके लायक रहने देगी, न खाने-पीनेका ठिकाना रहने देगी। और अिस चक्करमें अेक बार पडा कि जहा-तहा मार खाते-खाते, गालिया खाते-खाते, धक्के खाते-खाते तथा अपमान सहते-सहते वह पागल ही बन जायगा। वह सरकारी सिपाहीसे अिसलिअे नही डरता कि अुसके पास खाकी या काला कोट है, अिस वर्दीमें अुसकी सादी आखोको सामान्य कपडोके सिवा कुछ भी भयकर नही लगता। लेकिन अुसके साथ झगडा करने पर सरकारके अत्याचारका चक्र अुस पर चलने लगेगा और अुसमें से वह किसी भी तरह बचकर निकल नही सकेगा, अिसी विचारसे वह डरता है और पामर बन जाता है।

अिस प्रकार ग्राम-जनताके सारे भयोका मूल देखने जाय, तो सरकारकी अदृश्य और अवसर पडने पर अचूक रूपमें हाजिर होनेवाली दारुण मशीन ही नजर आती है। वह मशीन दया और मायासे रहित है। वह अग्रेजोके लिअे जनता पर निरतर आरी चलाती रहती है। अितना ही नही, कोअी भी चोर, डाकू या गुडा अुसमें रिश्वतका पेट्रोल भर दे, तो अुस क्रूर मशीनको वह किसी भी निर्दोष मनुष्य पर चला सकता है। चोर, डाकू, सिन्धी या पठानका सामना करते वक्त या सेठके सामने सिर अुठाते समय, नही, गावमें किसी भी सिरफिरे आदमीके चाहे जैसे व्यवहारके सामने मुहसे आवाज निकालते समय अेक ही सर्वव्यापी भय गावके लोगोको गूगा बना देता है — "अगर थोडा भी मैंने अुनका सामना किया, तो वे लोग किसी न किसी युक्तिसे मुझे सरकारी चक्रमें फसा देंगे।"

अिस परसे सेवक यह देखेंगे कि ग्रामवासी भयभीत जरूर रहते हैं, लेकिन पढे-लिखे लोगोकी तरह अुनका भय शारीरिक नही होता। लडने जाने पर सिर फूटेगा या मर्मस्थल पर चोट लग जायगी और मैं मर जाअूगा — अिस प्रकारका अुनका डर नही है। अिसलिअे अैसे डरपोक मनुष्यके लिअे हमारे मनमें जो तिरस्कार अुत्पन्न होता है, वैसा तिरस्कार अुनके लिअे नही रखना चाहिये। अुनका भय अेक सर्वव्यापी, योजना-पूर्वक सगठित, भयकर सरकारी यन्त्रसे सम्बन्ध रखता है। वह भय भी अच्छा तो नही कहा

जा सकता। कोअी भी भय अच्छा नही होता। अिस भयसे अुन्हें और हमे मुक्त होना ही पडेगा। लेकिन भले और स्वभावसे बहादुर ग्रामजनोका जोर सरकारी यत्रके सामने चल न सके और अुनकी हिम्मत काम न दे, तो अुसमें आश्चर्यकी कोअी बात नही है। जैसे अेक जबरदस्त पहाडके टूटने पर छोटा पेड दब जाय तो पेडको कमजोर कहकर अुसका तिरस्कार नही किया जा सकता, वैसे ही ग्रामवासियोको निर्बल, कायर और निकम्मे कहकर अुनकी निंदा करें, तो वह सचमुच जले पर नमक छिडकने जैसा नीच कर्म ही माना जायगा।

सेवकोको तो प्रेमसे अुनके बीच बसकर, अुनकी सेवा करके, अुनकी लडाअी लड कर, अुनमें से भयकी यह भावना दूर करनी है। यह बात अुनके गले अुतार देनी है कि सरकारी चक्र चाहे जितना भयकर हो और नीच मनुष्योका पक्ष लेकर भले और निर्दोप लोगोको कुचलनेके लिअे सदा तैयार रहता हो, तो भी अुसका सामना किया जा सकता है। अगर कोअी किसी भी प्रकारका अन्याय और अत्याचार करे, तो सरकारके डरसे गूगे बनकर अुसे सहन कर लेनेकी जरूरत नही है।

अुसका सामना करनेके लिअे न लाठीकी जरूरत है, न तलवारकी और न वकीलोके घर दौडधूप करनेकी जरूरत है। जरूरत जिस चीजकी है वह ग्रामवासियोको अीश्वरने काफी मात्रामें दे रखी है। अुनमें सच्चाअी है, भलाअी है, अपार सहनशीलता है और सिर काटनेवालेको भी भोजन देनेकी अुदारता है। यह बात भी नही कि अुनमे बहादुरीका अभाव है। सरकारकी भयकर मशीनके सामने भी वे अपनी बहादुरीको किस लिअे मिट जाने दें? सच्चे और भले मनुष्यके सामने अुस यत्रके दाते भी अतमें घिस जायगे, अैसा विश्वास क्यो न रखा जाय? अत्याचारी लोगोंके अत्याचारके सामने झुककर दुःखी और दीन बन जानेकी अपेक्षा अुनकी और सरकारकी मार खाना अच्छा है, लेकिन पामर और लाचार न बनना चाहिये — अैसा सत्याग्रहका मार्ग अुनके सामने हमें रखना चाहिये।

जिनके जीवन कृत्रिम बन गये है, जो मौज-शौकके लिअे शारीरिक कष्ट सहन करनेमें कायर बन गये है, जिनके पेट अितने बढ गये है कि सच्चाअी और शरीर-श्रमके रास्ते चलकर भर ही नही सकते, अैसे शहरियो पर सत्यका यह शौर्य चढना मुश्किल है। अिन सब बातोको वे हसीमें अुडा देंगे। लेकिन गावके मनुष्य अुन्हें सुनकर सिर हिलाने लगेंगे। ये बातें सुनकर अुन्हें शौर्य भले न चढे, परन्तु ये अुन्हें सीधी, सच्ची और स्वीकार करने जैसी जरूर लगेगी। क्योकि अुनके स्वभावसे अिन बातोका हर तरहसे मेल बैठता है। यह शौर्य अुन्हें चढ जाय, अुन्हें यह भान हो जाय कि ये चीजें तो हमारे खूनमें है, तब तो अुनकी आखोमें खोअी हुअी चमक फिरसे लौट आयेगी, अुनकी कमजोर आवाज फिरसे ताकतवर बन जायेगी, अुनका नीचे झुका हुआ सिर स्वाभिमानसे अूचा रहने लगेगा, वे गरीब भले हो लेकिन आज जैसे दब्बू न रहेंगे, और सब अन्यायी, अत्याचारी और शोपक भी अिस बातको समझ जायगे कि अुनके साथ सच्चाअी और मनुष्यतासे ही व्यवहार करना पडेगा। सरकारका निर्जीव,

भावनाहीन यंत्र भी अुनके आगे रुक जायगा, क्योंकि अुसे चलानेवाले यांत्रिक भी तो आखिर मनुष्य-जातिके ही होते हैं न?

जो सेवक गावके लोगोको अूपर-अूपरसे देखेंगे, वे अुन्हें डरपोक समझ लेंगे, अुनके बारेमे पूरी तरह निराश होकर बैठ जायगे और अपनी निराशाकी छूत गाव-वालोको लगाकर अुन्हें भी निराश बना देगे। अैसे सेवक खादी वगैरा प्रवृत्तियोके द्वारा अुन्हे पैसे दो पैसेका लाभ भले ही करा दें, लेकिन सब बातोको देखते हुअे अुनका अकल्याण ही करेंगे। लेकिन जो सेवक ग्रामवासियोके सच्चे स्वभावको पहचान लेंगे, अुन्हे अुनके बारेमें अैसी निराशा कभी हो ही नही सकती।

प्रवचन ५८

गुणी ग्रामजन

दुनियामें गावके लोगोके अज्ञान, आलस्य, डरपोकपन और दूसरी कितनी ही बुराअियोकी बात कही जाती होगी, परन्तु हिन्दुस्तानके गावोमें जानेवाले किसी भी व्यक्तिकी नजरमें अुनके कुछ गुण आये बिना नही रह सकते। अैसा अुनका सबसे बडा गुण है आदर-सत्कारका। अुनके अिस गुणने सचमुच कहावतका रूप ले लिया है। वे प्रकृतिकी गोदमें बसते हैं, अिसलिअे प्रकृतिकी अुदारता अुनके अग-अगमें समाअी हुअी दिखाअी देती है। अुनके खेत कनसे मन देते हैं। अुनके फलोके वृक्ष फलोके ढेर लगा देते हैं। अिसके सिवा वे विशालतामें बसनेवाले हैं। नीचे जमीन विशाल है, अूपर आकाश विशाल है। यह गुण भी अुनके स्वभावमें अुतरा हुआ लगता है। मेहमानको खिलानेका, अपनी मीठी भाषामें आग्रह कर-करके — रिझा-रिझाकर अुसे तृप्त करनेका अुन्हें शौक होता है। खुद मेहनती मनुष्य ठहरे। कसकर भूख लगना किसे कहते हैं और भूखके समय जो अन्न मिलता है, वह कैसा अमृत-तुल्य लगता है, अिसका अुन्हें अनुभव है। अधिकतर अिसीलिअे भूखोको भोजन करानेमें अुन्हें अितना आनन्द आता होगा।

जिनकी गोचरभूमि गायोंसे शोभित होती है, जिनकी कोठिया अन्नसे भरी रहती है और जिनकी बाडियोमें भिन्न-भिन्न अृतुओके फल अुतरते हैं, अैसी अच्छी स्थितिके ग्रामवासियोका हाथ तो अुदार होगा ही। वे अपने सारे हिसाबोमें मेहमानोकी गिनती हमेशा रखते ही हैं। घर बनाते हैं तो केवल घरके लोगोका समावेश हो अितना बडा ही नही बनाते, आनेवाले मेहमान घरमें अच्छी तरह समा सकें अिसका वे खास खयाल रखते हैं। बरतन, खाटें, बिस्तर वगैरा सामान भी वे यह ध्यान रखकर ही जुटाते हैं। लेकिन आदर-सत्कारकी अुदारता गरीबसे गरीब और कगालसे कगाल ग्रामवासियोमें भी दिखाअी देती है। अुनकी झोपडिया बहुत ही सकरी होती है, दो घरोके बीचका आगन भी बहुत सकरा होता है। वे खेती-बाडी खो चुके होते हैं, रोज कमाकर रोज खानेकी अुनकी स्थिति होती है। अैसे गरीब लोग भी जुवार-बाजरेकी रोटी और छाछ या

काजी जो भी मिल जाय वही अतिथिके सामने प्रेमसे रखते है और अुसे खिलाकर आनन्द अनुभव करते है।

यह आदर-सत्कारका गुण अच्छी स्थितिके ग्रामवासियोमे आज अतिकी सीमा तक भी पहुच गया है। अिसकी जड भले ही अुदारतामें हो, भूखेको तृप्त करनेमें आनेवाले स्वाभाविक आनन्दमें हो, किन्तु आज अिसमे मिथ्याभिमान पैठ गया है। सगे-सबधियोको, खास तौर पर समधियोको, पकवान खिलाना, घरमें कोअी भी आया कि चाय पिलाना, फिर दिनमें पाच बार पिलाना पडे या पन्द्रह बार अिसका विचार नही रखना, पान-सुपारी, अिलायची, लौग, बीडी-तम्बाकू वगैरा खुले हाथो देना — यह सब जो आज गावोमें चल रहा है, अुसमे शुद्ध अतिथि-सत्कारकी भावना ही है, अैसा नही कहा जा सकता। अिसने अब व्यवहारका रूप ले लिया है। यह जातिमें प्रतिष्ठा बढानेका साधन बन गया है। अुसमें परस्पर स्पर्धा चलती है। अच्छी आर्थिक स्थिति-वालोके साथ दुर्बल स्थितिवाले लोगोको भी खिचना पडता है, क्योकि प्रतिष्ठामें अुन्हें भी अन्य जाति-भाअियोसे पीछे रहना कैसे अच्छा लग सकता है?

अिसके सिवा, आदर-सत्कारमें स्वार्थ और खुशामदके मिल जानेसे भी अुसमे बुराअी अुत्पन्न हुअी दिखाअी देती है। ग्रामवासी अपने सम्बन्धियोसे भी ज्यादा तडक-भडकसे सरकारी अधिकारियोको खिलाने-पिलाने लगे है। यह सब अन्दरकी अुमगसे होता हो, अैसा हमेशा नही मालूम होता। 'देव' को प्रसाद चढानेसे और अुसे शरममें दबानेसे किसी दिन कोअी लाभ होगा, यही विचार अिसके पीछे रहता है। खानेवाला भी यह जानता है। अपना हक समझकर वह आतिथ्य स्वीकार करता है और कुछ कमी हो तो बतानेमें अतिथिकी तरह शरमाता नही।

आदर-सत्कारका गुण यदि आज भी शुद्ध रूपमें कही सुरक्षित है, तो वह गरीब ग्रामवासियोके जीवनमें है। लेकिन खेदकी बात है कि अत्याचार, शोषण और दरिद्रताके दावानलमें अुनका यह गुण जलकर भस्म होने लगा है। अुनकी झोपडीमे अुनका और अुनके बच्चोका पेट भरने लायक भी अन्न नही होता। अैसी स्थितिमें अुनके आगनमें मेहमान आयें, तो अुनका अन्तर किस प्रकार प्रसन्न हो सकता है? वे घरमें अेक-दूसरेके प्रतियोगी जैसे बनकर अेक-दूसरेसे चुरा कर कुछ नही खाते और बलवान आदमी दो भाग नही खाता, यही अुनका बडा गुण मानना चाहिये। अुनके खूनमें रही अिस पुरानी अुदारताका आज तो अितना ही अश अुनमें बाकी बचा है।

अतिथिको खिलाकर आनन्द लेनेका तो अुनके जीवनमें प्रश्न ही नही रह गया है। अुन्हें खुद भी खानेमें कुछ आनन्द नही आता। अुनके खानेमें न तो मनुष्यका पेट भरने जितना वजन होता है, न मनुष्यकी खुराक कहलाने योग्य पदार्थ रहते है। अिसलिअे वे अधेरे कोनेमें जाकर और दीवारकी तरफ मुह करके काजी पी लेना पसद करते हैं, मानो मन ही मन अपनी अैसी रद्दी खुराकके लिअे शरमाते हो।

और दरिद्रतामें डूबे हुअे अिन लोगोको अतिथियो पर विश्वास हो, अैसी स्थिति भी कहा रह गयी है? वे सब सुघरे हुअे, पढे-लिखे, सफेदपोश अूचे वर्गोंके

शिकार है। अुनके पास जो भी जाता है, वह अुन्हे मारता, गाली देता, लूटता और ठगता ही है। सरकारी अधिकारी अुन्हे वेगारमे खीचने और अुनके आगनमें लकडी-कडे, मुर्गे, अडे, जो भी हो वह छीनने ही जाते हैं। सेठ-साहूकार अुन्हें कर्ज देते वक्त तो मीठी-मीठी वाते करते हैं, लेकिन जव कर्ज वसूल करने आते हैं, तव दूसरे ही रूपमे आते हैं और घरमे से दानेकी आखिरी मुट्ठी तक अुठा ले जानेमें भी अुन्हें जरा दुख नही होता। कोअी कथा-पुराण सुनानेवाले तो अुनके पास जायगे ही क्यो? अुनके पाससे अुन्हें क्या मिलनेकी आशा हो सकती है? अिस तरह अुन्हे वाहरके सभी लोगोके अैसे कडवे अनुभव हुआ करते हैं कि किसी पर विश्वास करना या प्रेम रखना अुनके लिअे सभव ही नही रह गया है।

लेकिन अैसे ग्रामवासी भी अपना आतिथ्यका गुण अभी तक अच्छी मात्रामें सुरक्षित रखे हुअे हैं। जब अुनके मनसे हमारे प्रति रही शका दूर हो जाती है, तव हमारे लिअे अुनका हृदय खिल अुठता है और वे हम पर अपना भावभीना आतिथ्य जरूर वरसाते हैं। हम सेवकोको वह आतिथ्य चखनेका काफी सौभाग्य मिलता है। हमारे ग्रामवासमें वह कितना माधुर्य भर देता है?

शहरके सभ्य समाजमें हमें आतिथ्यका भाव बहुत कम मात्रामें दीखता है। वहा बहुत हुआ तो लोगोका यह भाव अपने वर्गके अिष्ट-मित्रो तक सीमित दिखाअी देता है। अनजानके लिअे तो वहा घरके द्वार सदा बन्द रखनेका फैशन चल पडा है। अिसलिअे जब हम ग्रामवासियोका अितना खुला और निष्कपट भाव देखते हैं, तव अुनके लिअे हमारे मनमें प्रेम और आदर अुत्पन्न हुअे बिना कैसे रह सकता है?

आतिथ्य स्वीकार करते समय हम सेवकोको विवेक नही छोडना चाहिये। अतिथि-सत्कार करनेवाला विवेककी हद छोड दे तो वह अुसकी शोभा बढाता है, लेकिन अगर आतिथ्य ग्रहण करनेवाला हद छोड दे, तो अुसकी योग्यता घटती है। वे चाहे जितना आग्रह करे, फिर भी हमें सादा भोजन लेनेका ही आग्रह रखना चाहिये। जातिवालोंके लिअे पकवान बनानेका जो रिवाज पड गया है, अुसमें हम सेवकोको बढती नही करनी चाहिये। चाय-कॉफी, पान-बीडी वगैरा रिवाजोमें भी हमारा मिल जाना ठीक नही होगा। अैसा करनेसे अिन लोगोको बुरा लगेगा, यह मानकर कभी कभी सेवक आग्रहके वश होते दिखाअी देते हैं। अुनके स्वभावाके अनुसार अुन्हें बुरा लगे और हम अुनके आग्रहके वश हो जाय, तो अिससे अुन्हें सुख मिल सकता है। लेकिन अुन्हें तात्कालिक सुख देकर हमें खुश नही होना चाहिये। हमें तो आतिथ्य ग्रहण करते समय अपनी योग्यताका — अपने सिद्धान्तोका भी विचार करना चाहिये, साथ ही लोगोके अतिरेक-पूर्ण रीति-रिवाजोका समर्थन न करनेका विचार भी हमें अवश्य करना चाहिये।

ग्रामवासियोके प्रति किसीको भी प्रेम अुत्पन्न हो जाय, अैसा अुनका अेक और गुण बताकर आजकी चर्चा पूरी करनी है। वह गुण है अुनका आनन्दी स्वभाव। चारो ओरसे दुखो और अत्याचारोसे घिरे रहने पर भी वे सदा प्रसन्न दिखाअी पडते हैं, सदा हसते ही रहते हैं। अुन्हें प्रसन्न देखकर हम भी प्रसन्न हो जाते हैं। हमें वहुत

बार अपने देश और अपने गावोके भविष्यके बारेमे निराशा हो जाती है, लेकिन ग्राम-वासियोके प्रसन्न चेहरे देखकर हमारी निराशा अुड जाती है। हम स्वदेशी, स्वराज्य, स्वतत्रता, स्वाभिमानके शिखर पर पहुचनेका प्रयत्न करते है, तब अक्सर थक जाते हैं और पीछे हट जाते हैं। लेकिन प्रसन्न ग्रामवासियोके सदा हसते चेहरे देखकर हमारी थकान अुतर जाती है और हमारी आशा फिर ताजी हो जाती है।

अुनका यह आनन्दी स्वभाव कृत्रिम नही है, तमाचा लगा कर मुह लाल करने जैसा नही है। अपना दु ख, अपमान और कष्ट छिपानेके लिअे वे बनावटी हसी हसते हो, अैसी बात नही है।

यो देखें तो अुनके जैसे दु ख और दरिद्रता अिस धरती पर और किसीको नही भोगनी पडती। वह कहासे आयी है, अिसका अुन्हें पूरा ज्ञान भी नही है। पुराने सुखी जमानेकी याद भी अब तो दिन पर दिन धुधली होती जाती है। अिस स्थितिमें से निकलनेका कोअी अुपाय भी अुन्हे नही सूझता। अपने आसपास वे बडे बडे लोगोको देखते हैं, पर किसीके बारेमें अुन्हें अैसी श्रद्धा अुत्पन्न नही होती कि वे हमारी मदद करेंगे। धनवान, विद्वान, सासारिक, फकीर — किसीको भी अुनके प्रति सहानुभूति हो, अैसा कोअी चिह्न ग्रामवासियोको अुनके चेहरे पर नजर नही आता। सबकी आखोमें अुन्हें अैसा भाव दिखाअी देता है, मानो वे ग्रामवासियोको अपने शिकार मान कर ही अुनकी ओर घूर रहे हैं। मनुष्यको निराश करनेवाली अिससे अधिक क्रूर परिस्थितिया और क्या हो सकती हैं?

अितना होने पर भी वे कितने प्रसन्न रहते हैं? अिसका कारण क्या होगा? कारण अेक ही है — वे सच्चे है, सरल है, मेहनती हैं। सच्चा और मेहनती मनुष्य सारी दुनिया अुसे कुरेदकर खाती हो, तो भी किसीको अपना दुश्मन नही मानता और सबकी भलाअी करते हुअे अपने काममें लगा रहकर प्रसन्न रह सकता है।

यह तो अनुभवसे समझनेकी बात है। हम स्वय अपने जीवनमें सत्य और शरीर-श्रमकी जितनी अुपासना करते जाते है, अुतना ही हम अपने स्वभावको आनन्दी बनता देखते हैं।

सच्चा और मेहनती मनुप्य मरणासन्न अवस्थाको पहुच गया हो, तो अुसमें से भी अुसे फिरसे तनकर खडे होनेमें देर नही लगती। आगने चाहे जितनी क्षीण चिनगारीका रूप ले लिया हो, तो भी जरासी गर्मी और हवा मिलते ही वह भडक अुठती है। और भडकनेके वेगका अन्दाज कोअी चिनगारीके क्षुद्र रूप परसे नही लगाता। हमारी सच्ची, मेहनती और आनन्दी ग्राम-जनताके बारेमें भी अैसा ही होनेवाला है। हमारे जैसे अनेक सेवकोको अुनके साथ रहना पडेगा, अुनमें रचनात्मक काम करने पडेंगे, अुनके दु खोका रहस्यमय स्वरूप अुन्हें समझाना पडेगा तथा अन्याय और अत्याचारका मुकाबला करनेकी अुन्हें तालीम देनी पडेगी। अैसा करनेमें हमें कअी वर्ष लग जायगे, बहुत बार आगे बढ कर पीछे भी लौटना पडेगा। पर अुनके प्रसन्न चेहरे देखकर हम फिर मेहनत करने लग जायगे। हमें विश्वास है कि अेक दिन अुनके भीतर नवचेतना अवश्य भडक अुठेगी।

और तब वह आग हमारे रचनात्मक कामकी मद गतिसे बढनेवाली नही होगी। अुसकी ज्वालाये तो अपनी तेज गतिसे ही बढेगी।

गावके लोगोके आनन्दी स्वभाव परसे हमारे जैसे सेवक अुनके और अपने देशके भविष्यके बारेमें अैसा विश्वास रख सकते है। अुनके बीच रहना और सुखभोगकी अपनी पुरानी आदते छोडना हमे चाहे जितना कठिन मालूम होता हो, फिर भी अुनका आनन्दी स्वभाव हमें सदा प्रसन्न बनाये रखेगा।

हमारे सगे-सबधी और दुनियाके लोग बहुत बार हमारे गावमें बस जानेसे हम पर तरस खाते है। लेकिन हम जानते है कि हमारे जैसा परम भाग्यवान और कोअी नही है। अैसे गुणी — अैसे आनन्दी लोगोके बीच बसने जैसा लाभ जीवनमें दूसरा कौनसा हो सकता है?

प्रवचन ५९

ग्रामवासियोंकी भाषा

जिस तरह ग्रामवासियोके अन्य सब गुणोका परिचय हमें होना चाहिये, अुसी तरह अुनका भाषागुण भी जानने जैसा है। लेकिन अैसा करनेमें हमारी अेक बुरी आदत बाधक होती है।

पढे-लिखे लोग अिकट्ठे होते है और हसी-मजाक पर अुतर आते हैं, तब हास्य-रस अुपत्न्न करनेके अुनके कुछ खास विषय होते है। अक्सर मनुष्यके शारीरिक दोषोका अुसमे प्रमुख स्थान होता है। दूसरा नबर ग्रामवासियोकी भाषाका और शहरी वातावरणमें होनेवाली अुनकी विडम्बनाका आता है। स्पष्ट है कि यह हास्यरस बहुत नीची श्रेणीका ही हो सकता है। हास्यरसको अगर अूची श्रेणी पर रखना हो, तो साहित्यके सब रसोमें अिसके लिअे सबसे अधिक कलाका होना जरूरी है। अैसी कला दो घडी मजाक करने पर अुतरे हुअे लोगोमें कैसे हो सकती है?

हमारे स्वभावमें रहे अिस बडे दोषका हमें शायद ही भान रहता है। सभ्यसे सभ्य शहरी भी गावके लोगोके ग्रामीण अुच्चारण सुनते ही अपना काबू खो बैठते है और खिलखिला कर हस पडते है। अैसा करके वे अपनी सभ्यताको — सामान्य विवेक रखनेकी सज्जनताको लज्जित करते है, अिसका भी अुन्हें भान नही रहता। चाहे जैसी गभीर बात चल रही हो, कोअी ग्रामवासी अपने अूपर गुजरनेवाले दु खोका वर्णन करने आया हो, तब भी सभ्य लोग अिस दोपके वशीभूत हो जाते है। मूल बातसे दूर हट कर वे 'हेंडवु, लेंबडो, पेंपळो, च्यम से, आअीवो, लाअीवो'* जैसे देहाती

* गुजरातके चरोतर प्रदेशमें 'हीडवु, लीमडो, पीपळो, केम छे' शब्दोका और सूरत जिलेमें 'आव्यो, लाव्यो' शब्दोका ग्रामप्रदेशमें अुपरोक्त प्रकारसे अुच्चारण किया जाता है। अिन शब्दोके अर्थ क्रमश अिस प्रकार है चलना, नीम, पीपल, कैसे हो, आया, लाया।

अुच्चारणो पर जोरोसे हसने लगते हैं और आपसमें ग्रामवासीका खूब मजाक अुडाने लगते हैं। अिसमें वे कोअी अनुचित व्यवहार करते हैं या अुस ग्रामवासीका अपमान करते है, अैसा अुन्हें विचार भी नही आता।

दु ख और लज्जाकी बात तो यह है कि हम सेवक भी अुस हलके आनन्दका लालच छोड नही सकते।

ग्रामवासियोका अपमान करके अुनका मजाक अुडानेकी जो आदत हमें पड जाती है, वह हम अुनके बीच सेवा करनेके लिअे जा बसते हैं, तब भी हमारे साथ रहती हैं। वहा भी हम अपने सेवक-मडलोमें परस्पर अुनके बोलने-चालनेके ढग पर हसते हैं, यहा तक कि अुनकी अुपस्थितिमें भी हम हसनेकी यह आदत छोड नही सकते। हम पढे-लिखे ठहरे, भाषाके अनेको खेल और करामातें जाननेवाले ठहरे, अिसलिअे अनेक युक्तिया खोजकर अुन भोले-भाले लोगोसे बार बार हसने जैसे अुच्चारण करवाते हैं और फिर जोरोसे हसते हैं।

सेवकोकी सभाओमें भी जब कोअी ग्रामीण अुच्चारणकी आदतवाला व्यक्ति व्याख्यान देता है, तब व्याख्यान चाहे जितना अच्छा हो, गभीर हो और श्रोता कुल मिलाकर वक्ताके प्रति काफी आदर रखते हो, तो भी ग्रामीण अुच्चारण आते ही जनमेजय राजाके मसखरे अृत्विजोकी तरह हम हसे बिना रह नही सकते।

हसनेके अिस रसका शिकार बननेवाला ग्रामवासी मित्र अिसमें शामिल नही हो सकता। ग्रामवासी होनेके बावजूद वह हमारे जितना असभ्य और अविवेकी नही होता, अिसलिअे अपने अैसे अपमानके लिअे हम पर नाराज नही होता। लेकिन अुसका चेहरा अुतर जाता है। अुसे बहुत दु ख होता है, यह स्पष्ट देखा जा सकता है। अगर हम समझदार हो तो तुरन्त समझ सकते हैं कि अैसे असभ्य बनकर हम अपनी सेवककी योग्यताको बहुत नीचा गिराते हैं।

ग्रामवासियोकी जगह अगर हम खुद हो, तो मजाक अुडानेवालेका मुह नोचे बिना न रहें और शायद अुसके साथ किसी प्रकारका सबध भी न रखें। लेकिन अिस बातमें भी ग्रामवासी हमारी अपेक्षा कितने अूचे ठहरते हैं? वे हमारे जैसे भावनाशून्य नही बन जाते। हमारी शहरी कुटेवोके बावजूद हममें जो थोडी अच्छाअी होती है अुसीको वे सदा अपनी दृष्टिमें रखते हैं। ग्रामवासी चाहे जितना अपढ हो, देहाती भाषा बोलता हो, और देहाती अुच्चारण करता हो, परन्तु वास्तवमें वह हसीका पात्र हरगिज नही है। वह तो अत्यन्त स्नेही और गुणी है।

अितना ही नही, अुसकी अैसी भाषा भी प्रेमसे सीखने योग्य होती है। स्त्रियो, किसानो और अलग अलग धधे करनवाले कारीगरोमें हमने कभी न सुने हो अैसे भाषा-प्रयोग चलते हैं।

सचमुच, गावोमें जाते ही हमारा ध्यान अुनकी भाषाकी सरलता और मार्मिकताकी तरफ खिचे बिना नही रहता। वे पढे-लिखे नही होते और हम बहुतसे लेखको

और कवियोका साहित्य छान चुके होते है। फिर भी अुनकी कही हुअी बातें हम ध्यानसे सुने, तो मालूम पडेगा कि हमारी अपेक्षा वे अपने मनके भाव अधिक सुन्दरतासे प्रकट कर सकते है। अगर अधिक ध्यानसे सुनें, तो अुनकी भाषामें अैसे अनेक शब्द-प्रयोग और आकर्षक कहावते पग-पग पर मिलेंगी, जो हमने कभी न सुनी होगी। अुनके लोक-गीतो और किस्से-कहानियोका परिचय करें, तो अुनकी रसिकता देखकर हम मुग्ध हो जायगे।

अुनकी बोलीमे अैसी मिठास क्यो न हो? वे जो कुछ कहते है, वह अुनके हृदयके भावोमे ओतप्रोत होता है। हम पढे-लिखोकी तरह वे कृत्रिम भाषण नही करते। ग्रामवासियोकी मीठी, भावनापूर्ण और मार्मिक शब्दोसे भरी भाषा पर प्रेम अुत्पन्न होनेमे हम सेवकोको जरा भी कठिनाअी नही होनी चाहिये। अिसके विपरीत, अगर हम अुनसे प्रेम न कर सके, तो कहना होगा कि हम अरसिक और अपने पाडित्यका अभिमान रखनेवाले है। अुनकी बोली सीखकर हम पढे-लिखोकी भाषामें अधिक जोश और अर्थ भरकर अुसे समृद्ध ही बनायेंगे।

रानीपरज और भील जैसी आदिम जातियोकी तो अलग विशेष भाषाअें ही होती है। अुन्हें आदरसे सीखनेकी हमें कोशिश करनी चाहिये। साहित्य-रसके लिअे, भाषाके अितिहास और स्वभावकी जानकारीके लिअे अैसा करना जरूरी है, अितना ही नही, सेवकके रूपमें अपढ लोगोमें, स्त्रियोमें और बच्चोमें काम करते समय अुनकी भाषाके ज्ञानके अभावमें हम बिलकुल पगु बन जाते है। अुनमें काम करनेवाले हमेशा यह अनुभव करते है कि अुनकी सभाओमे हमारे गुजराती भाषाके भाषणो और विवेचनोका बहुत थोडा अश वे लोग समझ पाते है। परन्तु जब अुनकी बोलीमें हम बोलते हैं, तब वे बीच-बीचमें हसते है, प्रश्न पूछते है और हमारी बातका समर्थन करते हैं और अिस प्रकार अपना रस प्रकट करते है।

ग्रामजनोकी बोलीमें अेक दो बाते जरूर अैसी होती है, जो हमें अच्छी नही लगती। बात-बातमे गालियोका मसाला मिलानेकी अुन्हें बुरी आदत होती है। अिसके सिवा, वे अेक-दूसरेसे बोलते समय असभ्यताका यानी तू-तुकारका व्यवहार करते है।

लेकिन शहरी लोग भी तो किसी न किसी रूपमें गालिया बोलते ही है। यह आदत गावोमें हो या शहरोंमें — कही भी अच्छी नही कही जा सकती। यह असस्कारिताकी ही निशानी है। लेकिन यह चीज ग्रामवासियोसे प्रेम रखनेमें क्यो बाधक बने? हम सेवक यदि प्रयत्न करके भी अपनी भाषाको 'साला', 'ससुरा' या 'मेरे बेटे' जैसी सर्वसाधारण गालियोंसे मुक्त रखें, तो ग्रामजनोसे अुनकी गाली बोलनेकी आदत छुडाना कठिन नही है।

तू-तुकार हम पढे-लिखे लोगोको विचित्र लगता है, लेकिन क्या वह सचमुच वैसा है? सस्कृत जैसी प्राचीन देवभाषामें भी आजकी अपेक्षा 'तू' जैसे अेकवचनी सर्वनामका ही अुपयोग अधिक होता था। लेकिन तत्कालीन साहित्य आदिको देखकर कोअी यह

नही कह सकता कि अुस समयके लोग देहाती या असभ्य थे। हरअेकके लिअे बहुवचन 'तुम' शब्दका प्रयोग करना और 'आप' का बहुत अुपयोग करना दरबारी सभ्यता है। ग्राम-जनता अुसके परिचयमें बहुत कम आअी है, अिसलिअे अुसकी बोलीमें हमारी जनताकी पुरानी आदत सुरक्षित है और दरबारी सभ्यताका अुसमें प्रवेश नही हुआ है। अैसा समझ लें तो ग्रामजनोके 'तू' शब्दके लिअे हमें आदर ही अुत्पन्न होगा। और 'तू' में मिठास और हृदयका प्रेम भरा होता है, यह तो कोअी भी सहृदय मनुष्य समझे बिना नही रह सकता। जब अेक खेतिहर, भील या रानीपरज जातिका मनुष्य पढे-लिखे प्रतिष्ठित शहरी सज्जनको 'तू' कहकर बुलाता है, तो अुसके कानको वह विचित्र-सा लगता है, लेकिन अुसमें अपमान या तुच्छताका भाव कभी नही लगता। सामनेवालेके स्वप्नमें भी अपमानका भाव नही होता, तब फिर अुसके तुकारमें तो आ ही कैसे सकता है?

अिस तू-तुकारके बारेमे तो हम सभ्य कहे जानेवाले ही वास्तवमें असभ्य और बिगडे हुअे हैं। पढे-लिखे मनुष्यकी रोजकी बोलचालकी भाषामें तुकारका स्थान न होने पर भी, जब वह किसी ग्रामीणको बुलाता है, तब 'तू' का ही प्रयोग करता है। अुसके अिस 'तू' में क्या अुस ग्रामवासीके 'तू' जैसी मिठास और स्नेह भरा होता है? कभी नही। वह स्वय सभ्य समाजका मनुष्य है, यही अभिमान अुसमें भरा होता है। अुसी प्रकार सामनेवाला मनुष्य हमारी बराबरीका नही है, हमसे नीचा, मजदूर और देहाती है, वह सम्मान, आदर या प्रेमके योग्य नही है, अैसा स्पष्ट तिरस्कारका भाव अुसमें भरा होता है।

अिसमें सिर्फ भाषाका सवाल नही है, परन्तु मनकी वृत्तिका सवाल है। गावका मनुष्य भले अलकार-शास्त्र न पढा हो, भले वह स्वय तुकारका छूटसे प्रयोग करनेका आदी हो, फिर भी वह तुरन्त समझ जाता है कि शहरी मनुष्यका तुकार अुसके तुकारसे भिन्न वस्तु है, तीखे भाले जैसा है।

हम सेवक ग्रामीणोकी भाषाको सुधारनेका प्रयत्न करें, अुससे पहले हमें अपनी भाषाको अिस तुकारसे मुक्त करके सुधार लेना चाहिये। पढे-लिखे मनुष्यका अपढ ग्रामवासीको 'तू' कहना हमारे समाजमें अितना स्वाभाविक हो गया है कि अिसमें हम कोअी अशोभनीय बात करते हैं, सामनेवालेका अपमान करते है, अिसलिअे हमारे व्यवहारमें कुछ सुधारने लायक दोष है, यह प्रगट सत्य हम जल्दी स्वीकार ही नही कर सकते।

हमारा मन तो अैसी दलील भी करता है कि जो जिस योग्य है अुससे अधिक देनेसे वह अुसे पचा नही सकता। हम स्वय 'आप' के योग्य है और वह 'तू' के योग्य है, यह मानो प्राकृतिक अीश्वर-निर्मित स्थिति है, अैसा मानकर ही हम चलते है। "हमारे 'तू' कहनेसे गावका मनुष्य अपना अपमान नही समझता। अुसके लिअे वह हमसे वाद-विवाद नही करता। यह स्थिति स्वाभाविक न हो तो वह झगडा

किये विना कैसे रहे?" — अिस तरह भी वुरी आदतके वशीभूत हुआ हमारा मन अपनी कुटेवका समर्थन कर लेता है।

साधारण पढे-लिखे लोगोके अैसे विचार हो यह तो समझमें आ सकता है, लेकिन सेवकोमे भी अैसा ही सोचनेवाले अभी वहुत लोग है। अिसीलिअे हम देखते है कि ग्रामवासियोसे सम्मानपूर्वक वोलनेका सुधार करनेमें वे वहुत शिथिल रहे है। ग्रामवासी 'आप' के योग्य है या नही, यह मुख्य प्रश्न नही है। मुख्य प्रश्न यह है कि हम सेवक जिनकी सेवा हमें करनी है अुनके प्रति अिस असभ्यताके दोपसे मुक्त होना चाहते है या नही?

अव आप देखेंगे कि भापाके वारेमें तो ग्रामजनो पर हमें सिर्फ प्रेम और आदर ही अुत्पन्न होना चाहिये। अुलटे, अिस विषयमें हमारे अदर ही वडे वडे दोप है, जिन्हें सेवक होनेके नाते हम जितनी जल्दी निकाल दें अुतना ही अच्छा है।

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

दसवां विभाग

आश्रमवासी

प्रवचन ६०

हमारा नाम

हमें लोगोकी तरफसे कितने अधिक नाम मिले हुअे है! चलिये, आज हम अुन सब नामोमें से अपना सच्चा नाम ढूढ निकाले। हम आश्रम जैसी सस्थामें रहते हैं, अिसलिअे कोअी हमे 'आश्रमवासी' कहते हैं, हम सेवा करनेका प्रयत्न करते है, अिस-लिअे कोअी हमें 'सेवक' नाम देते है, और हम गावोमें रहते है और खादीका काम करते है, अिसलिअे 'ग्रामसेवक' और 'खादी-सेवक' जैसे विशेष नाम भी हमें लोग देते है। अिसके सिवा, समय पडने पर हम लडाअीमें जूझ जाते है, अिसलिअे कुछ लोग हमें 'सैनिक' भी कहते है, और हमारी लडाअी अधिकतर सरकारके साथ असहयोग करनेकी और अुसके अत्याचारोके विरुद्ध सत्याग्रह करनेकी होती है, अिस कारण हमारे लिअे 'असहयोगी' और 'सत्याग्रही' जैसे नाम भी लोगोमें प्रचलित है।

ये सब तो लोगो द्वारा गभीर भावसे दिये गये नाम है। लेकिन हमारे तरह तरहके आचार-विचार अुनकी दृष्टिमें विचित्र तथा टीका और मजाकके लायक होनेके कारण अुन्होने हमे सुन्दर सुन्दर लाक्षणिक नाम भी दिये है। ये सब हमारे प्यारसे रखे हुअे नाम है। अिनमें से बहुतसे मजेदार होते हुअे भी मार्मिक है और अेक अेक शब्दमें हमसे बहुत कुछ कह देते है।

अैसा अेक नाम है 'बगल-थैलिया', क्योकि हम बगलमें थैला डालकर हमेशा अेक गावसे दूसरे गावमें घूमते ही अुन्हें दिखाअी देते है। हम भटकनेवाले बन गये हो और अेक जगह पर ठहर कर जड जमने ही न देते हो, तो यह नाम सुनकर हमें चेत जाना चाहिये।

हमारा दूसरा नाम है 'भाषणवाला'। अिस परसे हम अैसा मानकर फूल न जाय कि हमें बहुत अच्छा भाषण देना आता है। लोगोकी आलोचना तो यह है कि हमें बकवास करनेके सिवा और कुछ आता ही नही।

और वेद-शास्त्र-सपन्न न होने पर भी हमें 'पडित' की और 'भक्ति' में बहुत छिछले होने पर भी 'भगत' की पदवी दी गअी है। अर्थात् हमारे सिद्धान्त तो वेद-मत्रो जैसे आदरणीय हैं, परन्तु लोग देखते हैं कि अुनका अुपदेश हम दूसरोको ही करते है, खुद अुन पर अमल नही करते। और फिर भी तिलक और मालावाले पुराने 'भगतो' की तरह हम छोटीसी धोती और चरखेके चिह्नोमें ही अपनी भक्तिकी अितिश्री कर देते हैं।

परतु अब गभीर भावसे दिये गये नामोको देखें। अुनमें 'आश्रमवासी' नाम है तो अच्छा लगनेवाला, परन्तु आश्रम और अुस सुदर शब्दमें रहनेवाली भावनायें अितनी महान और पवित्र हैं कि हमारे जैसे नम्र मनुष्योको आश्रमवासीका बडा नाम

प्रवचन ६०

हमारा नाम

हमें लोगोकी तरफसे कितने अधिक नाम मिले हुअे है! चलिये, आज हम अुन सब नामोमें से अपना सच्चा नाम ढूढ निकालें। हम आश्रम जैसी सस्थामे रहते है, अिसलिअे कोअी हमे 'आश्रमवासी' कहते है, हम सेवा करनेका प्रयत्न करते है, अिसलिअे कोअी हमे 'सेवक' नाम देते है, और हम गावोमे रहते है और खादीका काम करते है, अिसलिअे 'ग्रामसेवक' और 'खादी-सेवक' जैसे विशेष नाम भी हमें लोग देते है। अिसके सिवा, समय पडने पर हम लडाअीमे जूझ जाते है, अिसलिअे कुछ लोग हमें 'सैनिक' भी कहते है, और हमारी लडाअी अधिकतर सरकारके साथ असहयोग करनेकी और अुसके अत्याचारोके विरुद्ध सत्याग्रह करनेकी होती है, अिस कारण हमारे लिअे 'असहयोगी' और 'सत्याग्रही' जैसे नाम भी लोगोमे प्रचलित है।

ये सब तो लोगो द्वारा गभीर भावसे दिये गये नाम है। लेकिन हमारे तरह तरहके आचार-विचार अुनकी दृष्टिमें विचित्र तथा टीका और मजाकके लायक होनेके कारण अुन्होने हमें सुन्दर सुन्दर लाक्षणिक नाम भी दिये है। ये सब हमारे प्यारसे रखे हुअे नाम है। अिनमें से बहुतसे मजेदार होते हुअे भी मार्मिक है और अेक अेक शब्दमें हमसे बहुत कुछ कह देते है।

अैसा अेक नाम है 'बगल-थैलिया', क्योकि हम बगलमें थैला डालकर हमेशा अेक गावसे दूसरे गावमें घूमते ही अुन्हें दिखाअी देते है। हम भटकनेवाले बन गये हो और अेक जगह पर ठहर कर जड जमने ही न देते हो, तो यह नाम सुनकर हमें चेत जाना चाहिये।

हमारा दूसरा नाम है 'भाषणवाला'। अिस परसे हम अैसा मानकर फूल न जाय कि हमें बहुत अच्छा भाषण देना आता है। लोगोकी आलोचना तो यह है कि हमें बकवास करनेके सिवा और कुछ आता ही नही।

और वेद-शास्त्र-सपन्न न होने पर भी हमें 'पडित' की और 'भक्ति' में बहुत छिछले होने पर भी 'भगत' की पदवी दी गअी है। अर्थात् हमारे सिद्धान्त तो वेद-मत्रो जैसे आदरणीय है, परन्तु लोग देखते है कि अुनका अुपदेश हम दूसरोको ही करते है, खुद अुन पर अमल नही करते। और फिर भी तिलक और मालावाले पुराने 'भगतो' की तरह हम छोटीसी धोती और चरखेके चिह्नोमें ही अपनी भक्तिकी अितिश्री कर देते हैं।

परतु अब गभीर भावसे दिये गये नामोको देखें। अुनमें 'आश्रमवासी' नाम है तो अच्छा लगनेवाला, परन्तु आश्रम और अुस सुदर शब्दमें रहनेवाली भावनाअें अितनी महान और पवित्र है कि हमारे जैसे नम्र मनुष्योको आश्रमवासीका बडा नाम

हमारा नाम

हमें लोगोकी तरफसे कितने अधिक नाम मिले हुअे है। चलिये, आज हम अुन सब नामोमें से अपना सच्चा नाम ढूढ निकालें। हम आश्रम जैसी सस्थामे रहते है, अिसलिअे कोअी हमे 'आश्रमवासी' कहते है, हम सेवा करनेका प्रयत्न करते है, अिसलिअे कोअी हमें 'सेवक' नाम देते है, और हम गावोमे रहते है और खादीका काम करते है, अिसलिअे 'ग्रामसेवक' और 'खादी-सेवक' जैसे विशेप नाम भी हमे लोग देते है। अिसके सिवा, समय पडने पर हम लडाअीमे जूझ जाते हैं, अिसलिअे कुछ लोग हमें 'सैनिक' भी कहते है, और हमारी लडाअी अधिकतर सरकारके साथ असहयोग करनेकी और अुसके अत्याचारोके विरुद्ध सत्याग्रह करनेकी होती है, अिस कारण हमारे लिअे 'असहयोगी' और 'सत्याग्रही' जैसे नाम भी लोगोमे प्रचलित है।

ये सब तो लोगो द्वारा गभीर भावसे दिये गये नाम है। लेकिन हमारे तरह तरहके आचार-विचार अुनकी दृष्टिमे विचित्र तथा टीका और मजाकके लायक होनेके कारण अुन्होने हमे सुन्दर सुन्दर लाक्षणिक नाम भी दिये है। ये सब हमारे प्यारसे रखे हुअे नाम है। अिनमें से वहुतसे मजेदार होते हुअे भी मार्मिक है और अेक अेक शब्दमें हमसे बहुत कुछ कह देते है।

अैसा अेक नाम है 'वगल-थैलिया', क्योकि हम वगलमे थैला डालकर हमेशा अेक गावसे दूसरे गावमें घूमते ही अुन्हें दिखाअी देते है। हम भटकनेवाले बन गये हो और अेक जगह पर ठहर कर जड जमने ही न देते हो, तो यह नाम सुनकर हमे चेत जाना चाहिये।

हमारा दूसरा नाम है 'भाषणवाला'। अिस परसे हम अैसा मानकर फूल न जाय कि हमें वहुत अच्छा भाषण देना आता है। लोगोकी आलोचना तो यह है कि हमें वकवास करनेके सिवा और कुछ आता ही नही।

और वेद-शास्त्र-सपन्न न होने पर भी हमें 'पडित' की और 'भक्ति' में बहुत छिछले होने पर भी 'भगत' की पदवी दी गअी है। अर्थात् हमारे सिद्धान्त तो वेद-मन्त्रो जैसे आदरणीय हैं, परन्तु लोग देखते है कि अुनका अुपदेश हम दूसरोको ही करते है, खुद अुन पर अमल नही करते। और फिर भी तिलक और मालावाले पुराने 'भगतो' की तरह हम छोटीसी धोती और चरखेके चिह्नोमें ही अपनी भक्तिकी अितिश्री कर देते है।

परतु अब गभीर भावसे दिये गये नामोको देखें। अुनमें 'आश्रमवासी' नाम है तो अच्छा लगनेवाला, परन्तु आश्रम और अुस सुदर शब्दमें रहनेवाली भावनाअें अितनी महान और पवित्र हैं कि हमारे जैसे नम्र मनुष्योको आश्रमवासीका वडा नाम

धारण करना शायद ही शोभा देगा। हमारे स्थानको आश्रमका नाम देनेमें भी हमें सकोच हुअे बिना नही रहता।

आश्रम अर्थात् पवित्रता, आश्रम अर्थात् तप, आश्रम अर्थात् त्याग, आश्रम अर्थात् ज्ञान, आश्रम अर्थात् यज्ञ, आश्रम अर्थात् सेवा, आश्रम अर्थात् ब्रह्मचर्य, आश्रम अर्थात् अीश्वरमय जीवन, आश्रम अर्थात् अिन सबमें परम आनन्द। अिन सबको अपने जीवनमें अुतारना हमे प्रिय है, अुसके लिअे हम सतत प्रयत्न करना चाहते हैं, परतु हम जानते हैं कि कितना ही प्रयत्न करेंगे तो भी अिस मामलेमें हम विद्यार्थी अथवा साधककी स्थितिमे ही रहेंगे। जिस दिन हमे यह अभिमान हो गया कि हम सिद्ध बन गये हैं, अुस दिन समझ लीजिये कि हम निकम्मे हो गये। जीवनके अन्त तक हम अिन गुणोके साधक रह सके और बीचमें थक न जाय, तो भी हम अीश्वरका अनुग्रह मानेंगे।

दूसरा नाम 'सत्याग्रही' का है। यह तो हमारे लिअे बहुत ही बडा होगा। देशमें सरकारके जुल्मोके खिलाफ सत्याग्रहकी जो लडाअियां समय समय पर चलती हैं अुनमें हम शरीक हुअे होंगे, परन्तु अितनेसे ही हमें सत्याग्रहीका नाम धारण करनेका अधिकार नही मिल सकता। क्या हम जीवनकी तमाम बातोमें सत्यका आग्रह रखकर अुसकी रक्षाके लिअे प्राण निछावर करनेको सदा तैयार रहते हैं? सरकारके अत्याचारोके विरुद्ध लडाअी छिडने पर हमने अुसमें भाग लिया, यह तो ठीक किया। परतु क्या हमारी आख अितनी सधी हुअी है कि छोटेसे भी असत्यको हम ढूढ निकालें? क्या हम अैसे सत्याग्रही हैं कि जहा भी असत्यको देखें, वही अुसके विरुद्ध सत्याग्रह करने खडे हो जाय?

हमारे अपने जीवनमें सत्यके सिद्धान्त पर क्या हम अत्यत सूक्ष्मतासे चिपटे रहते है? अैसा न करते हो तो हमें दुनियामें चल रहा असत्य कैसे दिखाअी देगा? और दिखाअी दे तो भी अुसके विरुद्ध सत्याग्रह करनेकी हिम्मत हममें कैसे आयेगी?

आज ससारमे चारो ओर असत्य, अन्याय, अत्याचार और हिसाका साम्राज्य फैला हुआ है। घरमें, गावमें, जातिमें, समाजमें, धधोमें, बाजारोमें, देवालयोमें और राजकाजमें जहा देखिये वही असत्य फैला हुआ है। फिर भी अपने जीवनमें हमें समय समय पर सत्याग्रह करनेके अवसर क्यो नही मिलते? हमारे जीवन ठडे क्यो है? हम कैसे चैनसे सो सकते है? देशव्यापी पुकार हो तभी हमें सत्याग्रह करनेकी बात क्यो सूझती है? और जब हम सत्याग्रह करते हैं, तब हमारे मनमें सिर्फ लड लेनेका और दुश्मनको परेशान कर डालनेका ही अुत्साह होता है, या सत्यके लिअे दुःख सहनेकी पराकाष्ठा करके अुसके हृदयको द्रवित करनेका?

सचमुच सत्याग्रही बनना हमें प्रिय है, परन्तु यह नाम धारण करके घूमना हमें महगा पड सकता है।

अब 'सैनिक' नामको लीजिये। यह नाम सुनते ही हम सबके सिर हिलने लगते हैं, चेहरे हसने लगते हैं और हमारा मन बोल अुठता है "बस, बस यही है हमारा सच्चा नाम।" आप नये खूनवाले तो अुसे पकड ही लेंगे। और यदि मैं

अुसके गुण-दोषोमें जाअूगा तो आप सहन भी शायद ही कर सकेंगे। सैनिकका अर्थ है बहादुर आदमी, प्राणोकी परवाह न करनेवाला आदमी, परम साहसी मनुष्य, आगे-पीछेका बहुत विचार न करके आगमें कूद पडनेवाला मनुष्य। फिर भी वह कितना मामूली शब्द है? 'हम बडे ज्ञानी हैं, बडे तपस्वी हैं, बडे सत्याग्रही हैं, बडे सेवाभावी हैं'—अैसा अेक भी अभिमान अुसमें नही है।

अब सैनिककी अिन सब सामान्य कल्पनाओंमें मैं कुछ और जोडूगा। जब हम सैनिकका चित्र खीचते हैं, तब हमारी नजरके सामने फौजका सिपाही होता है। वैसी सेनायें आजकल दुनियाके सभी राज्य रखते हैं। अुन्हें तालीम और कवायद द्वारा अच्छी तरह तैयार किया जाता है। अच्छी तरह यानी कैसे? आपने बताया वैसे बहादुर, प्राणोकी परवाह न करनेवाले और साहसी बनाया जाता है? शायद अैसा ही हो। परन्तु यह न समझिये कि ये गुण तालीम और कवायदसे विकसित होते है। अिनसे जिन गुणोका विकास होता है, अुनमे से कअी गुण हमारे लेने लायक जरूर हैं, परतु कअी न लेने लायक भी है।

सिपाहियोको सीधा तनकर खडे रहना सिखाया जाता है, यह अच्छा है। हम भी वैसे ही सीधे तनकर खडे रहनेवाले सैनिक अवश्य बनें। परतु सीधी गर्दन रखनेमें अक्सर हमारे स्वयसेवक लोगोके साथ अुद्धतता और तुच्छतासे पेश आते है, अुन पर हुकूमत चलाने लगते है। अग्रेज सिपाहियो और रास्तोका बन्दोबस्त करनेवाले पुलिसके जवानोको लोगोके साथ अिस तरहका असभ्य और अुद्धत व्यवहार करना सिखाया गया है, अिससे हमारे देशमें हमें सैनिकोका बहुत ही भद्दा नमूना देखनेको मिलता है। अैसा बरताव किसी भी सच्चे सैनिकको शोभा नही देता। हम तो किसी भी हालतमें वैसे बनना नही चाहते। हम सीधे खडे रहेंगे, मगर लोगोके साथ विनयका व्यवहार करेंगे, अुन पर सरदारी नही करेंगे, परतु अुनकी सेवा करनेको सदा तत्पर रहेंगे, सीधे खडे होने पर भी हमारे चेहरो पर निर्जीव पुतलो जैसी भावनाहीन मुद्रा नही होगी और न किसी जगली जानवरकी-सी क्रूरता ही होगी।

फौजके सिपाहियोको अेकसाथ कूच करना, अेकसाथ कदम अुठाना सिखाया जाता है। यह चीज हमें प्रयत्न करके सीख लेनी चाहिये। हम स्वयसेवकोको ही नही, परन्तु सब लोगोको, गावोके लोगोको भी अेकसाथ कदम अुठाना सीख लेना चाहिये। हम सेवक ढीले-ढाले, अव्यवस्थित और अेक-दूसरेके साथ टकराते हुअे चलते हैं, यह अच्छी बात नही। हमारे स्वयसेवकोके जुलूस निकलते हैं, तब तालीमके अभावमें वे कैसे आडे-टेढे, अव्यवस्थित ढगसे चलते है? कोअी धीरे चलते है तो कोअी जल्दी, कोअी पैर घसीटते हुअे चलते है तो कोअी दौडते हुअे, कोअी बातें करते हुअे तो कोअी अूधम मचाते हुअे। वे कुछ गाते है तो भी तालीम न मिली होनेके कारण अेकस्वरसे नही गा सकते। अिस मामलेमें हमें सेनाके सैनिकोकी तरह अनुशासन-प्रिय बननेकी अिच्छा होनी चाहिये।

परतु कवायदमे व्यवस्थित चलनेके अलावा अेकसाथ तरह तरहके काम करना भी आ जाता है। फौजके सिपाहियोको युद्धकी आवश्यकताके अनुसार हथियार चलाना वगैरा सिखाया जाता है। हम किसी पर हथियार चलानेके लिअे नही, परतु अपने लोगोकी सेवाके लिअे सैनिक वने हैं। अिसलिअे हमे वडे समूहोमे साथ मिलकर सार्वजनिक सेवाके काम करनेकी तालीम लेनी चाहिये। गावका पहरा देना, मेलोमें वन्दोवस्त रखना, गावोमें सामूहिक सफाअीका काम करना, फैले हुअे रोगोके विरुद्ध लडाअी लडना, आदि सेवाके काम व्यवस्थित ढगसे, आपसमें टकराये विना कैसे किये जाय, अिसकी तालीम हमें लेनी चाहिये। आज तालीमके अभावमे मौका आने पर ये काम हम करते हैं, तव समय और शक्तिका कितना अधिक दुर्व्यय होता है? और काम भी जितनी सावधानीसे होना चाहिये अुतनी सावधानीसे नही होता।

सेनाके सिपाहियोकी जो अेक चीज आपको वहुत आकर्पक लगती है, वह है अुनका अेकसा गणवेश। आपको भी गणवेश पहननेका शौक है। अलवत्ता, आप गणवेश खादीका ही वनाते हैं। आप भी जब वह वेश पहनते है, तव अिस वातकी खास तौर पर कोशिश करते होगे कि कपडोमें जरा भी सल न पडें, वे कोरे और कडे दिखाअी दें। परतु राज्यके सैनिकोकी तरह आप अूपरी टीमटाममें अतिरेक न होने दीजिये। अुनमें तो सल न पडने देनेका यह अर्थ हो गया है कि बदूक कधे पर रखनेके सिवा दूसरा कोअी काम ही न करें। वे गन्दगीमें पडे रहेंगे, परतु हाथमें झाडू लेकर अपनी जगह साफ कर लेनेको हलका समझेंगे। वे समझते हैं कि अुनके कपडे लोगो पर रोव जमानेके लिअे हैं। लेकिन सच पूछो तो वे कपडे छोटे होते है, आवश्यकतासे अधिक नही होते, पावोमें नही अुलझते और काममें बाधक नही होते। अिससे यही सूचित होता है कि अुन्हें पहन कर कूच करनेमे और तरह तरहके दूसरे काम करनेमें हर तरहकी सहूलियत हो। यही अुनका हेतु है।

अिसके सिवा, सिपाहियोका अेक गुण जो लेने लायक है वह आज्ञा-पालनका है। वे स्वय यत्रके अेक छोटेसे चक्रकी तरह बनकर रहते है और अुनका सेनापति अुन्हें जैसा हुक्म देता है वैसा वे तुरन्त करते है। अैसा अनुशासन सैनिक न पाले और सेनापतिके हुक्मके विरुद्ध अलग अलग मत पेश करते रहें, तो कभी कोअी लडाअी जीती ही नही जा सकती। हम हथियारोकी लडाअी लडनेवाले सैनिक भले न हो, फिर भी हमें अपने सेनापतिके हुक्मो पर दलील और देर किये बिना अमल करनेकी आदत डालनी ही चाहिये।

हमारे स्वयसेवकोमें अक्सर यह गुण नही पाया जाता। फौजी सिपाहीको तो मजबूर होकर सेनापतिकी आज्ञाके अधीन रहना पडता है। विरोध करने लगे तो अुसे अलग कर दिया जाता है, और रणक्षेत्रमें वह अपनी होशियारी दिखाने लगे, तो अुसे गोली मारकर खतम कर दिया जाता है। हम अहिंसक सिपाही हैं, अिसलिअे हमारी सेनामें अितनी सख्ती नही होती। सेनापतिके और हमारे बीचमें भय और रोबका सबध नही होता, परतु आदर और प्रेमका सबध होता है। सेनापति हमें

हुक्म देता है, तब वह फौजी कठोरता और रोबसे नही देता। हुक्मका कारण भी यथासभव वह हमें समझाता है। परन्तु अिससे हम यह भूल जाते है कि अुसके प्रति आज्ञा-पालनकी वृत्ति रखना हमारा फर्ज है। हरअेक परिस्थितिमें सेनापति हमसे तर्क नही कर सकता, लेकिन हुक्मकी फौरन तामील तो हमें करनी ही चाहिये।

सेनामें सेनापतिका चुनाव सरकार करती है। मातहत सिपाहियोको सेनापति पसन्द है या नही अथवा अुसके प्रति अुनका प्रेम और आदर है या नही, यह नही देखा जाता। हम तो अपना सेनापति खुद ही पसन्द करते हैं। अुसकी देशभक्ति, अुसकी सेवा, अुसका त्याग, अुसका ज्ञान, अिन सब गुणोसे हमें अुसके प्रति बहुत आदर होता है और अिसीलिअे हम अुसके हाथमें अपना सिर सौपते हैं। अिसलिअे अुसका हुक्म हमें हुक्म जैसा नही लगता, प्रेम-भरी सूचना और सलाह जैसा ही लगता है। अुसके सामने व्यर्थके वाद-विवादमें पडें और तत्काल प्रसन्न मुखसे अुसकी आज्ञाका पालन न करें, तो हमारा यह व्यवहार कितना अनुचित माना जायगा?

परतु, अुसके हुक्ममें भी यदि हमारे मूलभूत सिद्धान्तके विरुद्ध कोअी चीज हो— मान लीजिये कि अुसके विचार बदल गये और वह हमे देशके नाम पर किसीकी हत्या करने या किसीको लूटनेका आदेश दे, जिसमें सत्य न हो अैसी लडाअीमे हमे प्रेरित करे, तो हम अनुशासनका हौआ बनाकर अुसका पालन नही करेंगे। हम आदर-पूर्वक किन्तु स्पष्टतासे अुसे सेनापति-पदसे अुतार देंगे अथवा स्वय अुसकी सेनासे अलग हो जायगे। सरकारी सेनाओंमें अनुशासनके हौअेको यहा तक ले जाते है कि हुक्म होते ही अनुशासनके नाम पर सैनिक अैसे काम भी करने लगते हैं जो वीरपुरुषको शोभा नही देते, जैसे, नि शस्त्र लोगो पर शस्त्रोसे हमला करना, स्त्रियो और बच्चो पर गोली चलाना, लोगोके घर बरबाद करना, स्त्रियोकी लाज लूटना वगैरा। हमारे देशमें सरकार विदेशी है और अुसकी गुलामीसे स्वतत्रता प्राप्त करनेका आदोलन देशमें दिन-दिन जोर पकड रहा है। सरकार हमारे ही लोगोकी सेना द्वारा स्वतन्त्रताके आदोलनको दबाकर देशको अपने अधीन रखना चाहती है। अैसा करना अुसे सस्ता और सुविधापूर्ण लगता है, क्योकि अितने गोरे सिपाही वह यहा कैसे लाये? अैसी स्थितिमें वह अिस बातकी खास सावधानी रखती है कि हिन्दुस्तानी सैनिकोको आजादीकी हलचलकी जरा भी हवा न लगे, वे देशके नेताओके ससर्गमे जरा भी न आयें। अिसे अनुशासनका नाम दिया जाता है। परन्तु यह अनुशासन नही, यह तो अनुशासनका अतिरेक है। हम अनुशासन जरूर चाहते है, परन्तु अैसा अनुशासन हरगिज नही।

फौजी सिपाहीमें हुक्म माननेके सिवा चरित्र या शिक्षाकी कोअी आवश्यकता नही मानी जाती। शिक्षा तो अुसके लिअे बिलकुल विरोधी समझी जाती है, क्योकि शिक्षित मनुष्य बिलकुल यत्रकी तरह थोडा ही काम करता है? और व्यसनी, लपट, असयमी और अुद्धत जीवनकी तो मानो जान-बूझकर अुसे आदत लगाअी जाती है। लडाअीमें किसी दिन अुसे मरना है, अिसलिअे जब तक लडाअी सिर पर आ न पडे, तब तक वह मौज कर ले, बोलने-चालनेमें बीभत्स रसकी पराकाष्ठा तक पहुच जाय,

अिसके लिअे अुसे प्रोत्साहन दिया जाता है। आप स्वीकार करेंगे कि अैसा चारित्र्यहीन मनुष्य सैनिकके नामको सुशोभित नही परन्तु कलकित करता है।

सैनिक नामसे पुकारा जाना आपको बहुत पसन्द है और मुझे भी अच्छा लगता है। परन्तु अिस शब्दके साथ सरकारी सेनाके सैनिकका चित्र अितना अधिक जुडा हुआ है कि अुससे अिस सुन्दर शब्दकी बहुत कुछ सुन्दरता मारी गअी है और अिसमें दुर्गन्ध घुस गअी है। यहा तक कि हमारे स्वयसेवक भी सैनिक नाम धारण करके जब गणवेश पहन लेते है, तब अुनके मनमें अेक प्रकारका झूठा नशा आ जाता है, और वे अैसा मानकर चलने लगते है कि लोगोके साथ तिरस्कार और अुद्धततासे — अर्थात् रोबसे ही पेश आना चाहिये। अिसलिअे हम सैनिकोके सब अच्छे गुण तो ग्रहण कर लेंगे, मगर अनेक दुर्गन्धोसे दूषित हुआ 'सैनिक' नाम न ग्रहण करना ही ठीक होगा।

अिस तरह अेकके बाद अेक नामोका त्याग करने पर और अुनमें से बहुत प्रिय और प्रचलित 'सैनिक' नामको भी छोड देने पर अन्तमें हमारे लिअे 'सेवक' नाम बाकी रह जाता है। यह हमारा सच्चा वर्णन करनेवाला शब्द है। हम जो कुछ है और जो कुछ रहना चाहते है, अुसका यह सच्चा वर्णन है। अिसमें रोब नही है, अभिमान नही है, बडप्पनका ढोग नही है।

यह तो नामका चुनाव हुआ। 'सेवक' शब्द सादा है और अभिमान, अुद्धतता और दभादि दुर्गन्धोसे मुक्त है। अिसलिअे हमने अुसे स्वीकार किया। परन्तु अुसे हमने जिम्मेदारियोसे, तकलीफोंसे, बचनेके लिअे स्वीकार नही किया है। जिन जिन नामोका हमने त्याग किया अुन नामोकी तख्तिया छाती पर लटकाकर चलनेमें हमें सकोच होता है और सकोच होना ठीक ही है, परन्तु अुनसे जो गुण सूचित होते हैं अुनका तो हमें अपनेमें विकास करना ही है।

हम 'आश्रमवासी' नामसे पुकारा जाना नही चाहते, परन्तु सत्य, अहिसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, शरीर-श्रम, अभय, स्वदेशी, अस्पृश्यता-निवारण, सर्वधर्म-समभाव आदि आश्रमके ग्यारह व्रतोसे युक्त जीवन जीनेका आग्रह हमें जरूर रखना है। वैसा जीवन बनाये बिना हम सेवककी अपनी योग्यता और शक्तिको पूरी तरह कैसे विकसित कर सकते है? और यदि अधूरे मनसे काम करें, अुसमें अपनी पूरी शक्तिका अुपयोग न करें, तो फिर हम सेवक नही परन्तु बेगारी या गुलाम ही गिने जायगे।

अिसी प्रकार 'सत्याग्रही' और 'असहयोगी' नाम हमने धारण नही किये, परतु सत्याग्रह और असहयोगके महाधर्मोसे बचनेके लिअे हमने अैसा नही किया। अपनी सेवामें हमें जनताके सारे अुत्पीडकोके विरुद्ध सत्याग्रह और असहयोगके शस्त्रो द्वारा लडनेको सदा तैयार रहना ही चाहिये। हमारी सेवाके फलस्वरूप लोग दो पैसे अधिक कमाने लगें, अितना ही हमारा ध्येय नही है। लोगोमें अपने स्वाभिमान और स्वराज्यके लिअे अिन शस्त्रोका अुपयोग करनेकी कुशलता और बहादुरी आये, यह हमारा मुख्य और पहला ध्येय है। अिसके सिवा, हमें अपनी सेवामें सदा सत्यका ही आग्रह रखना है, लोगोकी कमजोरियोका पोषण करना, अुनकी

खुशामद करना और अुनसे वाहवाही प्राप्त करना, किसी भी सच्चे या झूठे रास्तेसे अुनका नेतृत्व अपने हाथमें बनाये रखना — यह हमारी कार्य-पद्धति नही है। हमें तो सत्याग्रहीके नाते अुन्हें सत्यके रास्ते लगानेमें अुनका रोष भी मोल लेनेको सदा तैयार रहना चाहिये।

हम 'सैनिक' नामसे दूर रहे, परतु अपने सेवकपनमे हमें सैनिकके सारे अच्छे लक्षण समा लेने है। हमने अिसलिअे सेवक नामका आश्रय नही लिया है कि हम तालीमहीन, अनुशासनहीन, व्यवस्थाहीन, ढीले कदम अुठानेवाले, खिन्न चेहरेवाले, ढीला वोलनेवाले, मनके अस्थिर और कायर बने रहना चाहते है।

हम जनताके केवल शिक्षक, पटवारी या कारकुन ही नही बनना चाहते। शाति-कालमें अुसके लिअे खादी वगैराके केन्द्र या पाठशाला, विद्यालय अथवा आश्रम चलायें, परतु अुसके खातिर युद्ध छेडनेका प्रसग आ जाय तब पीछे हट जाय, अैसे सेवक हमें नही वनना है। लडाअीका मौका आने पर हम लोगोको बहादुर बनायेंगे, अुनके आगे रहकर लडाअीकी सारी मार सहेंगे। लोगोकी हिम्मत न चले, लबे अरसेकी गुलामीके कारण वे खडे न हो सकें, अैसे वक्त पर हम अुनके सैनिकोके नाते अुनकी लडाअिया लडेंगे।

अिस प्रकार आश्रमवासी, सत्याग्रही, असहयोगी या सैनिक होनेका अभिमान हम नही करेंगे, सदा नम्र सेवक बने रहेंगे, परन्तु हम जानते है कि अपने जीवनमें हम आश्रमवासी, सत्याग्रही वगैरा बननेका सतत प्रयत्न न करें, तो हम सच्चे सेवक कभी नही वन सकते।

प्रवचन ६१

सत्याग्रही खादी-सेवक

कल हमने सेवककी अपनी कल्पनाको स्पष्ट रूपमें समझनेका प्रयत्न किया। हमने देखा कि सच्चे सेवकका जीवन किसी नौकरी करनेवाले आदमीके जैसा ठडा, आराम-वाला तथा सलामतीका नही हो सकता। वह सदा सज्ज सैनिक रहेगा, सदा सत्या-ग्रही रहेगा। जव देशमे स्वराज्यकी सर्वमान्य लडाअी न हो रही हो, तव हम सेवक किसी भी रचनात्मक कार्यमें लगे होते है। परतु यदि रचनात्मक कार्यकी अवधि कुछ वर्ष तक जारी रहती है, तो हम अुपरोक्त विचारको अक्सर भूल जाते है।

जैसे दर्जी या मोचीका धधा करनेवालेकी कमर झुक जाती है, सुनारकी आखोकी दृष्टि मन्द हो जाती है, गद्दी पर वैठकर व्यापार करनेवाले सेठोके पेट वढ जाते है, अुसी तरह रचनात्मक काममें भी मनुष्यके ठडा और सलामती चाहनेवाला वन जानेका खतरा रहता है।

अैसा परिणाम आना ही चाहिये, सो वात तो नही है। धधेवाले भी जाग्रत रहें तो पूरे तदुरस्त रहकर अपने धधे कर सकते है, अुन्हें करना चाहिये। दर्जी और मोची

कुवडे हो जाते है, अिसमें धधेकी अपेक्षा अुनका अपना दोप ही अधिक होता है। यदि वे काम करनेके लिअे अुचित आसन सोच लें, अमुक समयके बाद सारे शरीरका व्यायाम हो सके अैसा दूसरा काम करते रहें, तो वे कुवडे होनेसे जरूर वच सकते है।

अक्सर चरखा कातनेके शौकीन भी अुत्साहमें आकर घटो वैठे वैठे लगातार कातते रहते है। यदि वे वर्षों तक अैसा करें तो अुनकी भी दर्जियोकी तरह कमर झुक जायगी अथवा अुनके पैर वगैरा अवयव शक्तिहीन वन जायगे। चरखेको देशमें राष्ट्रीय महत्त्व मिल गया है, वह स्वराज्यका शस्त्र वन गया है और हमारी राष्ट्रीय पताकामें विराजमान है, अिसलिअे वह अैसे परिणामको आनेसे रोक नही सकेगा।

रचनात्मक काम करनेवालोके विषयमें भी कहा जा सकता है कि वे ठडे और ढीले पड जाते हो, तो अिसमें दोप अुनके कामका नही, परतु अुनका अपना है। स्वय जाग्रत रहें तो वे अैसे परिणामको आनेसे रोक सकते है। और यदि जाग्रत न रहें तो रचनात्मक कामका स्वराज्यके साथ कितना ही सवध क्यो न हो, वह अुन्हें ठडा पडनेसे रोक नही सकेगा।

अूपर दर्जी, मोची वगैराके धधोका जो अुदाहरण दिया गया है, वह रचनात्मक कार्य पर पूरा लागू नही होता। वे धधे शरीरकी बनावटको ही विगाडते है, परतु रचनात्मक कार्य तो सचेत न रहने पर मनकी बनावटको भी विगाड सकता है। अुसके असरके साथ मेल खानेवाली तुलना ढूढनी हो, तो भगीकाम करनेवालोकी हो सकती है। वह कितना अुपयोगी, आवश्यक, पवित्र और सेवाका काम है? फिर भी हम देखते है कि मूढभावसे यह धधा करनेवाले स्वच्छताकी भावना बिलकुल खो बैठते हैं, गदगीके वारेमें मनुष्यको शोभा न देनेवाली सहनशक्ति बढा लेते है। अुन्हें अपने स्वाभिमानका भी भान नही रह पाता। अिसी प्रकार ब्राह्मणका स्थान भारतमें अूचा माना जाता है, किन्तु अपना काम ज्ञानपूर्वक न करनेसे वे भी कैसे दीन भिक्षुक बन जाते है, अिसका अुदाहरण भी लिया जा सकता है।

हमारे रचनात्मक कामोमें कुछ काम आर्थिक प्रकारके होते हैं, कुछ शिक्षाके होते है, कुछ प्रचारके होते है और कुछ तत्र-सचालनके होते है। ये सब काम अैसे है, जिन्हें अच्छे ढगसे व्यवस्थित करनेके लिअे किसी न किसी प्रकारके तत्र बनाने पडते है, रुपया अिकट्ठा करना पडता है और खर्च करना पडता है, मकान और जायदाद खडी करनी पडती है तथा कार्यालय चलाने पडते है।

रचनात्मक कामोमे प्रमुख माने जानेवाले खादीके कामको ही लीजिये। अन्य कोअी ग्रामोद्योगका काम करते हो तो अुसे भी यही बात लागू होगी। हमने केवल अपने चरखे, पीजन और करघेसे प्रारभ किया हो, तो भी यदि हमें अिस विषयकी जानकारी होगी और आसपासकी परिस्थिति अनुकूल होगी, तो हमें चरखा वगैरा सरजाम तैयार कराना पडेगा और बेचना पडेगा, काता जानेवाला सूत बुनवाना पडेगा। अुसके लिअे जुलाहोको बसाना पडेगा, कपासका सग्रह करना पडेगा, खादी वेचनेकी व्यवस्था करनी पडेगी, लोगोको कताअी, पिजाअी, बुनाअी वगैरा सिखानेकी व्यवस्था

करनी पडेगी तथा अुन्हें अिस कार्यका महत्त्व समझानेके लिअे अुनके बीच घूमना पडेगा। अिन सब कामोके लिअे रुपया लाना पडेगा, कार्यालय खोल कर हिसाब और व्यवस्थाका काम सावधानीपूर्वक करना पडेगा, कार्यालय तथा बुनाअीशाला, विद्यालय, कार्यकर्ताओके निवास वगैराके लिअे मकान बनाने पडेंगे। अिस कामके लिअे कोअी सस्था या सघ खोलने पडेंगे, अुनमें अध्यक्ष, मत्री वगैरा चुनने पडेंगे और वैतनिक सहायक भी रखने होगे।

यह काम शुरू करते समय तो हमें स्पष्ट कल्पना होती है कि यह राष्ट्रकी रचना करनेका अेक कार्यक्रम है, स्वराज्यकी शक्ति बढानेका कार्यक्रम है। परतु ज्यो-ज्यो काम फैलता जाता है और अुसका व्यवहार-पक्ष बढता जाता है, त्यो-त्यो मूल कल्पनाके मद पडते जानेकी और व्यवहारमें हमारे जकडे जानेकी बहुत ज्यादा सभावना रहती है।

हम कातनेवालो और बुननेवालो वगैराके साथ, अुनकी शक्ति बढे और अुनमें स्वराज्यकी तमन्ना पैदा हो अिसके लिअे, सपर्क बढानेके साधनके रूपमें खादीकार्य शुरू करते है, परन्तु यह मुद्देकी बात भूलकर थोडे ही समयमें हम अुन्हें केवल अपने कारीगर मानने लगते है, अुन्हें दो पैसे दिलानेवाला धधा जुटा दिया कि अुनके प्रति हमारा काम पूरा हो गया अैसा अल्पसतोष कर लेते है। हमारा खादीका काम अुनके जीवनमें और अुनके गावोमें स्वराज्यकी हवा फैलानेके लिअे है, यह बात भूलकर हम कुछ अैसा मानने लगते है कि शहरोमें बहुत देशभक्त रहते है और अुन्हें अपनी देशभक्ति दिखानेके लिअे खादीकी जरूरत है, अिसलिअे अुन्हें खादी मुहैया करके देश-भक्तिमें अुनके सहायक बननेके लिअे हम खादीका काम करते हैं।

वहासे यदि माग अधिक आती दिखाअी दे, तो हम कारीगर बढा देते हैं, सूत वगैराका हिसाब रखनेवाले होशियार मुनीम रख लेते है तथा चरखा वगैरा बनानेके लिअे निपुण कारीगर बैठा देते है। लोगोमें प्रचार करनेके लिअे भी अैसे होशियार आदमी रखते है, जो अनेक युक्ति-प्रयुक्तियोसे, रुपयेका लालच लगाकर, कातनेवालोकी सख्या बढा सकें। हमारा व्यवहार हमें विवश करता है कि हम देखकर होशियार कार्यकर्ता और होशियार कारीगर ही रखें। अिस तरह न रखें तो हमारी खादी खराब हो जाय, महगी पडे, आवश्यक मात्रामें अुसकी पैदावार न हो और अुसके ग्राहक नाराज हो जाय।

परतु ये होशियार आदमी स्वराज्यके काममें भी होशियार है या नही, यह देखनेसे हमारा काम नही चलेगा। कोअी कार्यकर्ता यदि अैसा होशियार होगा, तो वह कातने-वालोमें प्रचारके लिअे जायगा और वही अड्डा जमा लेगा। अुनके बीचमें किसीने शराब-ताडीकी दुकान लगा रखी हो और वह अुनके जीवनको बरबाद कर रही हो, तो यह देखकर अुसका दिल अुबल अुठेगा। वह अुनसे यह व्यसन छुडवानेके प्रयत्नमें लग जायगा। लोगोको समझायेगा और कदाचित् दुकानके सामने सत्याग्रह करने भी बैठ जायगा। कोअी सरकारी सिपाही या दूसरा अधिकारी लोगोको सताता या घूस-रिश्वत लेता पाया जाय, तो 'स्वराज्यका होशियार' सेवक तुरन्त अुससे टक्कर लेगा, लोगोकी

रक्षा करके अुनकी शक्ति वढायेगा। और किसे पता है कि अिस कारणसे वे अधिकारी अुसे बाधकर जेलखाने नही पहुचा देगे?

मान लीजिये कि जुलाहोके बच्चे बहुत ही गदे है, मैलसे अुनके शरीरो पर फोडे-फुसी हो गये है और अूपर मक्खिया भिनभिना रही है। मा-बाप अुन्हें साफ-सुथरे रखनेकी कला न तो जानते है और न अैसा करनेकी अुन्हें फुरसत है। स्वराज्यका होशियार कार्यकर्ता होगा तो अुससे यह देखा नही जा सकेगा। वह तो बच्चोको प्रेमसे नहलायेगा-धुलायेगा, अुनके मा-बापको बच्चोकी सार-सभालकी कला सिखाने लगेगा। जुलाहे अधिक खादी बुनकर अधिक कमानेके लोभमे बालकोको समय न देते हो, तो वह अुन्हे थोडे समयके लिअे करघा अेक तरफ रख देनेकी सीख देगा।

अब कार्यालयके सचालकने तो अुन्हे अधिक सूत कतवा लाने और अधिक खादी बुनवा लानेको भेजा था। अिसके बजाय वे तो अैसे काममें लग गये और कदाचित् वे अपनी प्रवृत्तियो द्वारा चरखे और करघेके काममें अुलटा विक्षेप भी खडा कर बैठे। हम खादीकार्यके केवल व्यावहारिक पहलूमें फसे होगे, तो स्वराज्यके अैसे होशियार कार्यकर्ता हम चुन नही सकेंगे। हम तो अैसे होशियार लोगोको ही तरजीह देंगे, जो किसी भी तरह अधिक खादी बनवा लायें अर्थात् जो बोलने-चालनेमें चतुर, बारीकीसे हिसाब करनेवाले और लोगोकी तकलीफे देखकर आडी-टेढी बातोमें फसनेवाले भावना-प्रधान न हो। हम अपनेमे, अपने साथियोमें, अपने सारे काममें और हमारे वातावरणमें स्वराज्यकी होशियारीको दूर रखेंगे, अुसकी हसी अुडायेंगे और व्यावहारिक होशियारीको ही महत्त्व देंगे।

अिससे हमारे कार्यमें, हमारी अुत्पन्न की हुअी खादीमें, स्वराज्यकी सुगध न आये, अुससे हमारे गावोमें स्वराज्यकी हवा न फैले, तो अिसमे आश्चर्यकी कोअी बात नही। अन्तिम स्वराज्य सरकारके साथ बडी लडाअिया लडनेसे भले ही आता हो, परतु स्वराज्यकी शक्ति तो अुपरोक्त छोटे-छोटे वीरकर्मोसे — सत्याग्रहोसे ही अुत्पन्न की जा सकेगी। अैसी तालीम जिन कार्यकर्ताओको और लोगोको मिली होगी, वे ही अतिम लडाअीमें भी विजय प्राप्त कर सकते है। खादी वगैरा रचनात्मक कार्य भी हम अिसीलिअे करते है कि अुन्हें करते हुअे हम ग्रामजनताके बीच रहें और अुसे स्वावलबन तथा स्वदेशीके, स्वराज्य और सत्याग्रहके पदार्थपाठ सिखा सकें।

प्रवचन ६२

सत्याग्रही शिक्षक

खादी और ग्रामोद्योगकी तरह कुछ सेवक राष्ट्रीय शिक्षाके द्वारा रचनात्मक कार्य करना पसन्द करते हैं। अिसमें भी मूल अुद्देश्य तो अुसके द्वारा स्वराज्यकी रचना करना ही है। अिसके लिअे सेवकको अपना शिक्षाका काम अिस ढगसे करना चाहिये कि अुसके विद्यार्थियोमें और ग्रामजनोमें स्वराज्यकी शक्ति बढे। स्वराज्यका नाश करनेवाले जो तत्त्व हमारे जीवनमे है, अुनका अुसे विचार कर लेना चाहिये और अुन सबको नष्ट करनेकी दृष्टिसे अपना पाठ्यक्रम तैयार करना चाहिये।

आज शरीर-श्रम और अुद्योग समाजमें नीचे माने जाने लगे हैं। जिसे देखो वही विना मेहनत किये कमानेका रास्ता ढूढता है। और लोगोकी यही मान्यता हो गअी है कि पाठशालायें विना मेहनत किये कमानेकी युक्ति सिखानेके कारखाने हैं। यह चीज स्वराज्यके लिअे बडी विघातक है। अिसलिअे राष्ट्रीय शिक्षकको चरखे करघे और दूसरे ग्रामोद्योगो तथा शरीर-श्रमके कामोको अपने पाठ्यक्रमके मूल आधार-स्तभ बनाना चाहिये।

गावोके अुद्योग करनेवाले लोग देख-देखकर और अभ्याससे अपने-अपने धधोकी परपरासे चली आ रही क्रियाओको जानते हैं। अुनके हाथ अुतनी तालीम पाये हुअे होते हैं। परतु साथ ही अुनकी बुद्धि तालीम पाअी हुअी नही होती। अिसलिअे किसान सीधी जुताअी कर सकता है, लेकिन अुसकी बुद्धि जुताअीकी तरह सीधी आरपार नही जा सकती। दूसरे सब अुद्योग-धधे करनेवालोका भी यही हाल होता है। अिसीसे किसान लोगोमें यह मान्यता फैल गअी है कि अुद्योग और बुद्धिमें सदा वैर होता है, अत जिसे बुद्धि बढानी हो अुसे अुद्योगको छूना ही नही चाहिये। अैसी गलत मान्यताके कारण लोग अपने बच्चोसे शिक्षाके भडार जैसे अपने घरके धधे छुडवा देते है और अुनकी बुद्धि बढानेके लिअे ही अुन्हें केवल बैठे बैठे पुस्तकें पढनेकी पाठशालाओमें भेजना पसन्द करते हैं। बच्चे पाठशालामें नियमित न जाय तो वे अुन्हें डाटते है 'पढेगा नही तो बैलकी पूछ मरोडनी पडेगी' अथवा 'चाक घुमाकर घडे अुतारते रहना पडेगा' अित्यादि।

राष्ट्रीय शिक्षक जानता है कि आज सारी प्रजा अुद्योगोकी अैसी निन्दा करती है।' और समूची नअी पीढी अुद्योगोसे विमुख हो रही है, यह बडीसे बडी राष्ट्रीय विपत्ति है। अिसलिअे अुसे अपना पाठ्यक्रम अिस ढगसे बनाना चाहिये, जिससे यह प्रत्यक्ष देखा जा सके कि अुद्योग बुद्धिको मन्द नही बनाते, किन्तु अुसे विकसित करते हैं।

अिसके सिवा, राष्ट्रीय शिक्षक देखता है कि लोगोमें यह विचार घर कर रहा है कि जैसे-तैसे स्वार्थ सिद्ध किया जाय और किसी भी अुपायसे रुपया कमा कर अैश-आराम किया जाय। अैसे लोगोमे स्वदेशीका प्रेम कैसे पैदा हो सकता है?

स्वराज्यकी शक्ति कैसे विकसित हो सकती है? अिसलिअे अुसे अपने पाठ्यक्रममें विद्यार्थियोको स्वदेश-सेवा करनेके मौके हमेशा देते रहना चाहिये, यह विचार अुनकी रग रगमें पैठा देना चाहिये कि जीवन सेवाके लिअे है, भोग-विलासके लिअे नही। अिसलिअे अुसे केवल पुस्तकें पढाकर सतोष नही होगा। वह अनेक प्रकारके ग्रामसेवाके काम हमेशा करता रहेगा और अुनमें अपने विद्यार्थियोको साथ रखकर अुन्हें बचपनसे सेवा-जीवनका रस लगायेगा।

राष्ट्रीय शिक्षक देखता है कि लोगोमें अूच-नीचके भेदका जहर अिस हद तक फैल गया है कि अुससे सुलगी हुअी अन्याय और द्वेषकी अग्नि देशकी स्वराज्य-शक्तिको जला रही है। अिसलिअे अुसे अपने विद्यार्थियोको अिस ढगसे तालीम देनी चाहिये कि अुनके विचारोमें वह जहर रहने ही न पाये। वे हरिजनो और दूसरी जातियोका तिरस्कार न करें, अितना ही नही, परन्तु अुनकी सेवाके अनेक काम करके अुनका प्रेम सम्पादन करें तथा हिन्दू, मुसलमान वगैरा अलग अलग धर्मोंके लोगोमें भी अेक-दूसरेकी सेवा करके और अेक-दूसरेके अच्छे गुणोको ग्रहण करके भाअीचारा बढायें।

राष्ट्रीय शिक्षक देखता है कि देशमें जहा-तहा भयका साम्राज्य फैला हुआ है। अग्रेज सरकारने अपने राज्यकी जडें गहरी जमानेके लिअे और अिस देशके लोगोको बिना किसी रोक-टोकके चूसनेके लिअे सेना, पुलिस और अदालतो वगैराके तत्रो द्वारा लोगो पर आतक बैठाकर अुन्हें नि सत्व और भयभीत बना दिया है। लोगोको हमेशा भयभीत रखकर थोडेसे आदमियोने अितने विशाल खडको अपने पजेमें रख छोडा है। सब तरफसे अुसकी प्रगतिको रोक रखा है। राष्ट्रीय शिक्षकको अपने पाठ्यक्रममें निर्भयताके गुणका विकास करनेकी कोशिश करनी चाहिये। अिसके लिअे विद्यार्थियोको गावका पहरा लगाने वगैराकी तालीम देनी चाहिये।

परतु निर्भयताकी तालीम देनेका काम वह केवल अपनी पाठशालासे चिपटे रहकर नही कर सकता। अिसके लिअे तो अुसे गाववालोका भी शिक्षक बनना चाहिये। लोगोको अुसे यह सिखाना चाहिये कि अैसा सोचकर निराश होने और भयभीत दशामें रहनेकी जरूरत नही कि हथियार न होनेके कारण अन्यायो और जुल्मोके विरुद्ध कैसे लडा जा सकेगा। सत्याग्रह, असहयोग तथा सविनय कानून-भग अन्य सारे शस्त्रोसे अधिक बलवान और कारगर है। ये शस्त्र अैसे नही हैं, जिनका अुपयोग शरीरबल वाले, राजसत्तावाले और धनसत्तावाले ही कर सकें। यदि हमारे हृदयमें स्वाभिमानकी गहरी भावना हो, ज्वलत देशभक्ति हो, हम सत्य और न्यायके अुपासक हो, तो हम अिन शस्त्रोका अुपयोग करनेके लिअे हर प्रकारसे योग्य है। दैनिक जीवनके छोटे-छोटे प्रसगोमें दबे बिना या अदालतोकी शरण लिये बिना हम सत्याग्रहके द्वारा लड लें, तो दिनोदिन हमारा साहस बढता जायगा, हममें आत्म-विश्वास आता जायगा और अुस तालीमके परिणामस्वरूप हममें बडे सामूहिक सत्याग्रह करनेकी शक्ति और कुश-लता भी आ जायगी। लोगोको यह शिक्षा देनेके लिअे सच्चे राष्ट्रीय शिक्षकको अन्याय और जुल्मका मौका आने पर स्वय अुसका विरोध करनेके लिअे सदा तैयार रहना

चाहिये। अिससे वह लोगोको सत्याग्रह सिखायेगा और विद्यार्थियोमें भी सत्याग्रहका बीजारोपण कर सकेगा।

राष्ट्रीय शिक्षा द्वारा स्वराज्यकी रचना करनेवाले सेवकके सर्वांग-सपूर्ण पाठ्यक्रमकी सारी बातें मुझे आज गिनानी नही हैं। मैंने यहा अिस बातकी मोटी रूपरेखा ही दी है कि अुसके मस्तिष्कमें कैसे तेज विचार होने चाहिये और कैसी पद्धतिसे अुसे शिक्षाका काम करना चाहिये।

अिस कार्यमें शिक्षक यदि जाग्रत न रहे, सत्याग्रही न रहे, तो अुसके शिथिल हो जाने, साधारण मास्टर बन जानेका पूरा खतरा है।

प्रथम तो यह स्पष्ट है कि अुपरोक्त शिक्षा लेनेके लिअे अुसके पास बहुत ही थोडे आदमी आयेंगे। लोगो पर असर डालनेवाले बल अितने जोरदार हैं कि वे प्रचलित प्रवाहमें वह जाते है। सच्ची शिक्षाको समझने और अुसे प्राप्त करनेकी आज अुन्हें हिम्मत कैसे हो सकती है? परिणामस्वरूप शिक्षक विद्यार्थियोकी वडी सख्याके विना घबराने लगता है और अपने मनमें तर्क करता है "लोगोको अच्छा लगनेवाला पाठ्यक्रम तैयार करके विद्यार्थियोकी सख्याको आकर्षित करनेमें क्या हर्ज है? सरकार अथवा विश्वविद्यालयसे सबद्ध पाठशाला क्यो न चलाअी जाय? विद्यार्थी मेरे पास आयेंगे तो मैं अुन्हें प्रत्येक विषय द्वारा राष्ट्रीय विचार ही दूगा।" अैसा सोचकर वह अपनी शिक्षामें से अुद्योगोको छुट्टी देता है अथवा नाममात्रके लिअे रखता है, अग्रेजी भाषा जारी करता है और विश्वविद्यालयकी परीक्षाओमें बैठनेमें विद्यार्थियोको वाधा न आये, यह बात ध्यानमें रखकर वहाकी पढाअी पक्की कराने लगता है। लोगोको नाराज न करनेकी दृष्टिसे हरिजनोके लिअे अपने द्वार बद रखनेकी हद तक भी वह पहुचता है।

विद्यार्थियोके वढने पर राष्ट्रीय विचार देनेकी अुसमें जो अुमग थी, अुसे भी वह पूरा नही कर सकता। क्योकि अब अुसे अनेक शिक्षक रखने पडते हैं। वे सब अुसके पाठ्यक्रम पर अमल करनेकी योग्यतावाले ही होने चाहिये। यह हो सकता है कि अुनमें से अधिकाशको सपनेमें भी राष्ट्रीय शिक्षा द्वारा स्वराज्यकी रचना करनेकी वात न सूझी हो।

साथ ही, अुसे अपना काम अिस प्रकार व्यापक वनानेके लिअे वहुत लोगोसे दान लेने पडते हैं, अुन्हें अिकट्ठा करनेमें अपना सारा समय होमना पडता है और पग-पग पर अपने स्वराज्य-रचनाके अुद्देश्यको दवाकर दाताओको राजी रखनेका ही प्रयत्न करना पडता है।

अिस प्रकार, मनुष्यमें अैसी होशियारी होगी तो वह अनेक विद्यार्थियो, अनेक शिक्षको, अनेक मकानो और अनेक केन्द्रोवाला अेक वडा तत्र तो खडा कर सकेगा, परन्तु स्वराज्यकी रचनाका अुद्देश्य वह हवामें अुडा देगा। अुसके विद्यार्थी भी अन्य किसी पाठशालाके विद्यार्थियोकी तरह श्रद्धा-विहीन, साहस-विहीन और किसी भी तरह पैसा

कमानेकी अिच्छा रखनेवाले ही होंगे। लोगो पर अैसी शिक्षा किसी भी प्रकारका अच्छा — स्वराज्यकी योग्यता बढानेवाला — असर नही डाल सकेगी।

फिर भी, शिक्षकके मनमें अपने कामका विस्तार देखकर अेक तरहका झूठा अभिमान रहा करेगा। अुसमें खलल डालनेवाले अशातिके मौकोसे वह डरता रहेगा। सत्याग्रहोके अवसर अुपस्थित होने पर स्वराज्यके शिक्षकको शौर्य चढना चाहिये, स्वराज्य-शिक्षाका ज्वार आया देखकर अुसे अुल्लास होना चाहिये, अिसके बजाय यह शिक्षक अुस पर अफसोस करेगा, चिन्तामें पड जायगा और अुस हवासे अपने कामको अलिप्त रखनेका प्रयत्न करेगा।

किसी भी पाठशालाको राष्ट्रीय कहने मात्रसे या अभ्यास-क्रममें राष्ट्रीय पाठोवाली पुस्तकें रख देनेसे ही अुसमें राष्ट्रीय हवा पैदा नही हो सकेगी और न अुसके द्वारा विद्यार्थियोके जीवनमें स्वराज्यकी रचना हो जायेगी। स्वराज्यकी रचना करनेवाली पाठशालाका पाठ्यक्रम पुस्तकोमें बन्द न रहकर हमारे ग्राम-जीवनमें फैल जायगा। स्वराज्य-शिक्षक पाठशालाके कमरेमें बैठा रहनेवाला नही होगा, परन्तु ग्रामसेवाकी अनेक प्रवृत्तिया करनेवाला ग्रामसेवक होगा, स्वराज्यका सैनिक होगा और सदा सत्याग्रही रहेगा।

प्रवचन ६३

सत्याग्रहीके राजनीतिक दावपेंच

अब रचनात्मक कार्यके अेक तीसरे ही प्रकारको देखें। वह है सरकारी और अर्धसरकारी सस्थाओमें भाग लेनेका। वे सस्थाअें सरकारी विधान-सभाअें, नगर-पालिकाअें, लोकल बोर्ड, स्कूल-कमेटिया, ग्राम-पचायतें आदि हैं।

यह स्पष्ट है कि देशमें स्वराज्य हो तब तो सचमुच राज्यके मुख्य तत्रकी अपेक्षा ये सस्थाअें ही अधिक महत्त्वकी बन जाती है। लेकिन देश पर परचक्र चल रहा हो, तब यही सस्थाअें जनताका काम करनेके बजाय अुसके भीतर फूट, अीर्ष्या आदि बढानेवाली बन जाती है। अिस कारण हमारे लिअे अधिकतर अिन सस्थाओके लालचसे दूर रहना ही अच्छा होता है।

हम विदेशी सरकारसे लडते आये हैं और सत्याग्रह करते रहे है, परन्तु अुसमें हमारी जनताकी तालीम कच्ची रह जानेसे हम अभी तक सम्पूर्ण स्वराज्य प्राप्त नही कर सके, अितने पर भी प्रत्येक लडाअीसे सरकारकी जडें अच्छी तरह हिल जाती हैं और अुसे अपनी सत्तामें से कुछ न कुछ अश छोडना पडता है। राजकाजमें लोक-प्रतिनिधियोको अधिकाधिक सख्यामें आने देना अुसके लिअे अनिवार्य हो जाता है। अलबत्ता, कअी बार तो वह अपनी सत्ताके बल पर खेल ही खेलती है, सत्ता

छोडनेका सिर्फ दिखावा भर करती है और पजेका अेक नख ढीला करती है, तो दूसरे सारे नख अधिक गहरे घुसाती है।

फिर भी कभी-कभी अैसी परिस्थिति पैदा हो जाती है जब हम सीधी लडाअी बन्द कर देते है, अुस समय सरकारकी छोडी हुअी सत्ताको हाथमें ले लेनेसे जनताकी स्वराज्य-शक्तिको बढा सकनेकी सभावना हमें दिखाअी देने लगती है। अैसी परिस्थितिमें वह कार्य अेक रचनात्मक कार्यके रूपमें हाथमे लेनेमें कोअी आपत्ति नही हो सकती। परन्तु दूसरे रचनात्मक कार्योकी तरह अिसमें भी सेवकोको सतत सावधान रहकर बारीक नजरसे यह देखते रहना चाहिये कि अुनके कामसे लोगोमें स्वराज्यकी योग्यता बढती है या नही।

सेवाका यह क्षेत्र सेवककी दृष्टिसे स्वराज्यमें भी खतरनाक है, तब विदेशी राज्यमें तो अुसे काजलकी कोठरीमें घुसनेके बराबर ही समझना चाहिये। अत्यत अूचे चरित्रवाले सेवक ही अुसमें घुसकर कालिख लगे बिना बाहर निकल सकते है। वह राजनीतिक दावपेंच अथवा कूटनीतिका क्षेत्र है, बडा जुआघर है। अिस खेलका नशा सब नशोंसे बढ जाता है। दुनियाके जबरदस्त कूटनीतिज्ञ सदा अुसमें अपना जाल बिछाकर मौजूद ही रहते हैं। राज्य विदेशी हो तब तो अिस राजनीतिक दावपेंचके खेलमें गदगीकी हद ही नही होती।

अिस क्षेत्रमें घुसनेका प्रवेश-द्वार है चुनाव। अिसके समान रस्साकशीवाला और गन्दा खेल दूसरा कौनसा होगा? केवल सेवा और चरित्रके बल पर अुसे जीतनेकी हिम्मत हो, तो ही सेवक अुसे स्वच्छ और शुद्ध खेल बना सकता है।

प्रवेश-द्वारमें दाखिल हुअे कि सरकारी सत्ताकी कोअी कुरसी हमारे सामने आ जाती है। अुस पर बैठ जाने पर सत्ताके मदसे मुक्त रहना आसान नही होता। जनताके प्रति तिरस्कार और अुद्धतता दिखाये बिना अुस सत्तामदका आनन्द मनुष्यको आता नही। महत्त्वाकाक्षीके लिअे वह आगे बढनेकी नसेनीकी अेक सीढी बन जाती है।

अिसके अलावा, विदेशी सरकार तो अैसे कमजोर लोगोको ढूढती ही रहती है। अुन्हें पुचकार कर, बडे पद पर बैठाकर अपनी भेदनीतिके पासे फेंके बिना वह कैसे रह सकती है? हमारे राजनीतिक जीवनमें अैसे बहुत अुदाहरण देखनेको मिल सकते है, जिनमें लोगोने जनताकी सेवा करनेका दिखावा करके अपना मार्ग बनाया है और बादमें सेवाका वेश अुतारकर अपनी महत्त्वाकाक्षाअे पूरी करनेमें लग गये है। अितना ही नही, अैसे भी अुदाहरण मिल जायगे, जिनमें लोगोने प्रारभ तो अच्छी सेवा-भावनासे किया था, परतु सत्तामदमें चूर होकर और भेदनीतिके जालमें फसकर वे जनसेवक न रहकर सरकारके हथियार ही बन गये।

जो मनुष्य अिस हद तक गिरनेवाले न हो, अुन्हें भी अिस क्षेत्रमें खतरा तो है ही। अेक बडे तत्रका कारबार चलानेमें — सरकारके किसी व्यवस्था-विभागका अथवा अेक नगर-पालिकाका ही नही, अेक छोटीसी ग्राम-पचायतका सचालन करनेमें — भी अेक

प्रकारका रस लग सकता है। सार्वजनिक धनका लेन-देन अपने हाथो हो, कर्मचारी वर्ग पर अपना हुक्म चलता हो, चपरासी सलाम करते हो, कारकुन कागजो पर हस्ताक्षर कराते हो, व्यर्थकी वातोमें फाजिलवाजी चलाकर अेक विभाग द्वारा दूसरे विभागको डाट-फटकार वतानेका खेल हो रहा हो——तो अितना रस भी साधारण मनुष्योको नशा चढानेके लिअे काफी हो जाता है। अिस पर प्रजाजनमें कोअी खुशामद करनेवाले मिल जाय, किसी जान-पहचानवालेका छोटासा काम कर देनेका मौका मिल जाय, तो अुन्हे जीवन धन्य हुआ जैसा लगता है।

साथ ही, अेक और खतरा भी याद रखने लायक है। अैसे सरकारी तत्र चलाने लगते है तब यह भी देखा जाता है कि अच्छे और समझदार आदमियोको भी अुस तत्रके लिअे अेक प्रकारकी सहानुभूति और ममता हो जाती है। वे अिस प्रकार कहने लगते है, "तत्रमें कुछ अन्याय तो होते ही है। हमें तत्रकी कठिनाअी भी देखनी चाहिये। सवको सतोष देने लगें तो तत्र अेक दिन भी नही चल सकता। पुलिसको अपराधोका पता लगानेमें कुछ ज्यादती तो करनी ही पडती है। किसानको हमें कुछ हद तक तो दबा हुआ रखना ही पडेगा। लोगो पर रोव जमानेके लिअे हमें कुछ तो सख्ती रखनी ही होगी। हर बातमें लोगोकी पुकार सुनने बैठें तो राज्य अेक घडी भी न चले। राजनीतिक दावपेंचमें शुद्ध सत्यसे चिपटे रहना सभव नही। विरोधियोके खिलाफ हमे कभी भेदनीति तो कभी दडनीतिके दाव खेलने ही चाहिये, अित्यादि।"

जो विदेशी नौकरशाहीके अधीन अैमे काम करने लगते है, अुनके मनमें अैसे विचार भी आने लगते है, "अग्रेजोका दावा है कि राज्यतत्र अुन्हीको चलाना आता है, हम हिन्दुस्तानियोको नही आता। अब हम बता देंगे कि हम भी अुसमें होशियार हैं। हम भी लोगो पर रोब डाल सकते है। क्या हम नही जानते कि कुछ न कुछ आतकके विना राज्य चल ही नही सकता? अग्रेज अपने मनमें चाहते है कि हम ढीले-ढाले और अकुशल सिद्ध हो, परन्तु अुनकी अिच्छाको हम मिट्टीमें मिला देंगे। वे राज्य-कोषमे घाटा ही रखते थे, हम बचत करके दिखा देंगे। फिर भी हम अैसी युक्तिसे बजट बनायेंगे कि राज्यकर्मचारियोको अधिक आराम और अधिक वेतन मिले। अप-राधो और दगे-फसादोमें हम अग्रेजोसे ज्यादा होशियारी और सख्तीसे काम लेकर बता देंगे। ये लोग समझते होगे कि हम अति अुत्साहमें आकर जैसे भाषण देते थे वैसे ही सुधार करने लग जायगे, कठिनाअियोमे फस जायगे और अन्तमें हसीके पात्र बनकर अपने ही हाथो अपनी अयोग्यता साबित करेंगे। परन्तु हम अैसे भोले नही। क्या हम नही जानते कि राजकाज-सवधी सुधारोके आम जल्दी नही पकते? हम राजकाजका स्तर निश्चित रूपसे पहले जैसा ही रखेंगे और फिर भी हमें अैसी युक्ति करना अच्छी तरह आता है जिससे लोगोको यह महसूस न हो कि हम सुधार नही कर रहे है, अित्यादि।" जो सेवक अैसे विचारोमें बह जाता है, अुसे नौकरशाहीके रास्ते लग जानेमें कितनी देर लग सकती है? अपना लक्ष्य भूलकर दूसरे ही खेलमें लग जानेमें अुसे कितनी देर लगेगी?

राजनीतिक दावपेंचका काम ही अैसा है कि लोगोको यह बतानेकी अपेक्षा कि प्रजाकी सेवा कितनी हुअी अथवा स्वराज्य कितना पास आया, हममें यह बतानेका अुत्साह अधिक होता है कि हम भोले नही, कच्चे नही, निर्बल नही, अकुशल नही, सचकी पूछ पकडकर बैठे रहनेवाले नही, परन्तु जमाना देखे हुअे हैं, सबको जेबमे रख लेनेवाले हैं और होशियार राजनीतिज्ञ हैं। अिस बातका केवल हमें अुत्साह ही नही चढता, बल्कि सच्ची देशभक्ति और सच्ची सिद्धान्त-निष्ठा भी हमें अैसा करनेमें ही मालूम होती है। हम सोचते है "हम शासन-तत्र पर अधिकार करके स्वराज्यका ही काम करना चाहते हैं, परतु हम जानते हैं कि स्वराज्यकी रचना घरमें बैठकर चरखा चलाने या हाथकुटे चावल खाने या सत्य-अहिंसाका जप जपनेसे ही नही होगी। भावुक बनकर सिद्धातोको जहा-तहा सामने लायेंगे, तो सरकारके साथ सघर्षमे आकर हाथमें आअी हुअी सत्ता जरासी देरमें खो बैठेंगे और फिर चरखा कातने लगेंगे। अिसके अलावा, सुधार करनेकी जल्दी मचायेंगे तो समाजके प्रभावशाली वर्गोमें हम अप्रिय बन जायगे और हमें तो चुनावोके समय फिर अुन्हीके मुहकी तरफ देखना होगा। अिसलिअे अिस तरह हमारा काम नही चल सकता।"

स्वराज्य-रचनाका प्रयत्न करनेवाले सेवकोको कैसे कैसे चक्करोमें फस जानेका खतरा है, अिसकी मैंने आपको थोडी कल्पना दी है। सपूर्ण स्वराज्य भोगते हुअे भी अिनमें से किसी न किसी चक्करमें फस जानेसे बचना आसान नही है, तब आज गुलामीके तत्रमें तो पूछना ही क्या? सच्चे सेवक यदि अिस क्षेत्रमें कदम रखेंगे तो यह दृढ सकल्प करके ही रखेंगे कि हमें अुसके किसी गन्दे खेलमें भाग लेना ही नही है। हम तो अिस पुरानी किन्तु मजबूत मशीनको जुल्म और अन्याय करनेवाली न रहने देकर अुसका सारा रुख ही बदल डालेंगे और अुसे जनताकी सेवामें लगा देंगे, हमें अुसके द्वारा गावोको स्वाभिमानी, बहादुर, सत्याग्रही और स्वशासन भोगनेवाले बनाना है, ग्रामोद्योगोको जीवनदान देना है, शिक्षाकी रुकी हुअी गगाको बहाकर गाव-गावमें अुसका पवित्र जल पहुचाना है, व्यसन, ऋण और भयभीत दशासे लोगोका अुद्धार करना है। अिस प्रकार यदि विश्वास हो कि हम स्वराज्यकी रचना कर सकेंगे और दीन-दलितोको स्वराज्यकी गरमी पहुचा सकेंगे, तो ही सेवकोको अिस खतरेवाले काममें पडना चाहिये। वहा जाकर हमें अपने अटल लक्ष्य जैसे सिद्धान्तो पर दृढ रहना चाहिये। यह देखते ही कि जनताको स्वराज्यकी गरमी पहुचानेके हमारे काममें रुकावट डाली जा रही है, हमें किसी भी समय सत्याग्रहका हथियार अुठा लेनेको तैयार रहना चाहिये। यह बनियाअी हिसाब हरगिज नही लगाना चाहिये कि यहा रहकर कुछ अच्छा काम हो सकता है, सत्याग्रहका शस्त्र अुठानेसे वह बन्द हो जायगा और फिर घर जाकर चरखा कातनेमें समय बिताना पडेगा, अथवा जेलमें बैठकर कीमती वर्ष बरबाद करने पडेंगे। अिस बातकी सावधानी रखेंगे तो ही हमारा राजनीतिक खेलमें अुतरना सार्थक होगा। तो ही हमारा राजनीतिक खेल स्वराज्यके अेक रचनात्मक कार्यकी गिनतीमें आ सकेगा।

जब तक यह महसूस होगा कि राजनीतिक खेलमें पडकर अिनमें से कोअी काम नही हो सकता — स्वराज्यकी रचना नही हो सकती, तब तक अेक सत्याग्रही कार्यकर्ता कभी अुस खेलमें अुतरनेको तैयार नही होगा। शासन-तत्रके आकर्षक ठाट-बाट अुसे कभी मोहित नही कर सकेंगे। वह तो जनताके बीच घुस जायगा, अुसके भीतर स्वराज्य-शक्तिका निर्माण करता रहेगा और अुसमे सत्याग्रहकी वीरता प्रेरित करता रहेगा। अुसका काम देशमें बहुत प्रसिद्ध नही हो, या अुसे जल्दी अपने काममें सफलता नही मिले, तो वह अधीर नही होगा। राष्ट्रीय काग्रेसके हमारे सर्वश्रेष्ठ नेताओकी मनोवृत्ति अैसी होनेके कारण ही वे राजनीतिक खेलमें जब-तब कूद नही पडते। दूसरे लोगोको अुसमे किसी भी अुपायसे घुस कर जो थोडी-बहुत सत्ता मिल जाय अुसे हाथमें ले लेनेका लोभ रहा ही करता है। राष्ट्रीय काग्रेसमें यह सत्ता लेनेकी ताकत होने पर भी वह अुसकी तरफ देखती तक नही, अिससे वे विचारमें पड जाते है। परतु राष्ट्रीय काग्रेस तो तभी अिस तरफ मुडती है जब अुसे विश्वास हो जाता है कि अुसमें पडनेसे राज्यतत्रको चोटी पकडकर स्वराज्य-रचनाके कार्यमें लगाया जा सकेगा, और जब वह अिस दिशामे मुडती है तब राज्य चलानेका अुसका ढग, अुसका जोश, अुसके कामका अूचा स्तर — सब अलग ही नजर आते हैं।

प्रवचन ६४

सत्याग्रही नेता

अब हम अपने रचनात्मक कार्यके अेक चौथे क्षेत्रका विचार करें। अिसमे भी सेवक यदि सदा तैयार — सदा सत्याग्रही न रहे, तो अुसके अनेक प्रकारसे अुलटे रास्ते लग जानेका बडा खतरा है। यह कार्य है हमारी राष्ट्रीय काग्रेसका तत्र चलानेका।

हमारी काग्रेस दुनियाके अितिहासमें अेक बेजोड सस्था है। अुसका अुद्देश्य हमारी मूक जनताको प्राणवान और स्वराज्य भोगनेवाली बनाना है। अुसका व्रत सत्य और अहिंसाके मार्गसे कभी विचलित न होनेका है। राजनीति या और किसी मामलेमें वह गदा खेल कभी नही खेलना चाहती। अिसलिअे अुसके साथ दगा-फरेब करनेवालोका हमेशा भडाफोड हो जाता है। वह स्वराज्यके लिअे किसीके घर रोने या भीख मागने नही जाना चाहती, बल्कि सत्याग्रहका युद्ध छेडकर देशकी आजादी हासिल करना चाहती हैं। अिसके लिअे वह धीरजसे रचनात्मक काम करके जनताको सत्याग्रहका युद्ध करनेकी तालीम दे रही है। अिसके लिअे हर प्रान्त, हर जिले, हर तहसील और देशके सात लाख गावोमें देशभक्तिकी भावनासे भरे हुअे सच्चे वीर सत्याग्रही और तालीम पाये हुअे सेवकोका जाल बिछा देनेका अुसका अविरत प्रयत्न चल रहा है।

अिस दृष्टिसे राष्ट्रीय काग्रेसने सारे देशमें अपनी समितिया स्थापित की हैं, तथा खादी, ग्रामोद्योग, राष्ट्रीय शिक्षा, मद्य-निषेध, किसान-सेवा, मजदूर-सेवा, हरिजन-सेवा

वगैरा अनेक रूपोमें रचनात्मक कार्य करनेवाली सस्थाअें भी फैलाअी है। काग्रेसकी समितिया लोगोके राजनीतिक अधिकारोकी सदा रखवाली करती है, स्वराज्यके लिअे सत्याग्रहकी लडाअिया लडती है और विदेशी सरकारका पजा देश पर दिन-दिन ढीला बनाती है। अिसके सिवा, विविध रचनात्मक कार्य करनेवाले सेवक लोगोके बीच गावोमें जाकर बसते हैं और विदेशी राज्यके रहते हुअे भी अुन्हें स्वाश्रय, स्वदेशी और स्वराज्यका स्वाद चखना सिखाते है, अुन्हें सत्याग्रह-युद्धकी तालीम देते है, अुनकी निराशा और भयको मिटाकर अुनमे अिस आशा और साहसका सचार करते है कि हम सत्याग्रहके शस्त्रसे अपना स्वराज्य अवश्य ले सकेंगे।

हमने दूसरे रचनात्मक कार्योंके सबधमे देख लिया कि यह काम केवल कारकुनो या गुमाश्तोसे नही हो सकता, परतु सच्चे सत्याग्रही सेवकोसे ही हो सकता है। अिसी प्रकार काग्रेसकी समितियोका काम भी सदा सज्ज रहनेवाले तथा सदा-सत्याग्रही सेवक ही कर सकते हैं। अुसमे भी यदि सेवक जागता न रहे, अपने सत्याग्रह-शस्त्रकी धारको तेज न रखे, तो अुसके कामके नि सत्त्व बन जानेका बडा खतरा है।

समितियोका अेक बडा काम है काग्रेसके सदस्य बनानेका। सेवक यदि गभीर नही होगे तो वे सदस्योके नामोंसे जैसे-तैसे रजिस्टर भर देनेका ही खयाल रखेंगे, वैतनिक कर्मचारी रखकर सदस्य बनानेका काम फैलायेंगे, शायद सदस्य-शुल्क भी बालावाला भरकर लोगोसे, अुन्हे समझाये बिना ही, हस्ताक्षर करा लेंगे। परतु सेवक यदि सच्चे सत्याग्रही होगे, तो वे सोचेंगे कि समितिके कार्यालयमें नामोसे भरे रजिस्टरोंके ढेर पडे होगे तो भी अुससे सरकार डर नही जायगी। वे कम सदस्य बननेकी परवाह नही करेंगे, परतु अैसे लोगोको ही सदस्य बनायेंगे, जो स्वराज्यके मत्रको समझ चुके हैं। वे यह समझेंगे कि सदस्य बनाना काग्रेसका सदेश फैलानेका ही अेक कार्यक्रम है। जिन्हें वे अिस ढगसे सदस्य बनायेंगे, अुनसे समय समय पर मिलते-जुलते रहेंगे, अुनकी सेवा करते रहेंगे, अुनके हकोकी रखवाली करते रहेंगे और अुन्हें स्वराज्यके लिअे कुछ करनेकी, बलिदान देनेकी तालीम देंगे। अैसे सदस्योके बल पर ही अुन्हें और काग्रेसको किसीके साथ भी लडाअी छेडनेकी हिम्मत हो सकती है।

समितियोका दूसरा काम चुनाव करनेका है। किसी समय समितियोके चुनाव बिना रस्साकशीका खेल थे। आज समितिया अितनी समर्थ हो गअी है कि वे देशकी राजनीति पर असर डाल सकती है और जब चाहें तब ग्राम-पचायत और लोकल बोर्डसे लेकर सरकारी विधान-सभाओ तक पर कब्जा कर सकती हैं। अिसलिअे अुनके चुनावोमें दिनोदिन रस्साकशी बढती जा रही है। अिसलिअे अुनमें गन्दी युक्तिया प्रवेश न करें, जातियो और वर्गोके बीच वैरभाव न फैलाया जाय, अिसकी सावधानी रखना पहले जैसा आसान नही रहा है।

सेवकके सामने अुसमें बह जानेका बहुत बडा प्रलोभन होता है। अुसका मन अैसी ललचानेवाली दलीलें करेगा "अधिकार हाथमें आये बिना मैं स्वराज्यका

काम नही कर सकूगा और जहा सभी गलत रास्ते अपनाते हो वहा मै सत्याग्रहसे ही चिपटा रहूगा तो चुनाव कभी जीत नही सकूगा।"

परन्तु अैसा सेवक अधिकार प्राप्त कर लेगा, तो भी लोगोमें अुसके विषयमें कैसा विचार बनेगा? अधिकसे अधिक लोग यही कहेगे, "हमारा नेता बडा युक्ति-वाला है। मौका पडने पर वह सच-झूठ देखने नही बैठेगा, किसी भी युक्ति-प्रयुक्तिसे सरकारको फसायेगा और हमारा काम कर आयेगा।" सेवकोके विषयमे अैसे विचार लोगोमें फैल जाय, तो अुनकी सत्याग्रहकी शक्ति हरगिज नही बढेगी। और काग्रेसको तो अुसी शक्तिको बढाना है। सच्चे सत्याग्रही सेवक तो अपनी सच्चाअी, चरित्र, सेवा और सत्याग्रहके शौर्यकी प्रतिष्ठा पर ही आधार रखेंगे। अैसा करते हुअे यदि चालाक लोग अुन्हें हरायेगे, तो भी वे सेवक बने रहकर लोगोकी लडाअिया लडते ही रहेंगे। वे सच्चे होगे तो जनता स्वय ही अुन्हें पहचान लेगी। वह समझ लेगी कि "सत्या-ग्रहकी लडाअिया लडे बिना धोखेबाजी और चालबाजीसे स्वतत्रता कभी नही मिलेगी, और सत्याग्रहकी लडाअीमे हमारा पथ-प्रदर्शन करनेवाले तो यही सेवक है"। और अुसे जरूरत होगी तो अगले चुनावमे वह अैसे सेवकोको सत्ताके पदो पर बैठायेगी।

चुनावकी धाधलीमे परस्पर निन्दा, कुप्रचार, वैरभाव फैलाना आदि मार्ग तो सत्याग्रही सेवक ले ही नही सकते। होशियार चुनावबाज हलके मनसे अिस बात पर मुस्करा कर कहते है "यह तो दो दिनका खेल है। हमारे मनमें कोअी वैरभाव नही है। परतु लोगोंके सामने तेज जोशीला भाषण दिये बिना क्या चुनाव जीता जा सकता है?" सत्याग्रही सेवकको चुनाव हार जाना मजूर होगा, मगर अैसा भयकर खेल खेलना मजूर नही होगा। वह जानता है कि खेलमें बोया हुआ जहर प्रजा-शरीरमें से आसानीसे नही निकाला जा सकता। मनुष्य-मनुष्यमे, जाति-जातिमें और वर्ग-वर्गमें अिस प्रकार घुसे हुअे चुनावके जहरसे देशके शहर और गाव दोनो सड गये है और अिसका लाभ विरोधी दल बराबर अुठा रहे हैं।

चुनावमें जीतने और मुख्यमत्री वगैराका अधिकार मिल जानेसे तो सेवककी जिम्मेदारी अेकदम बढ जाती है। काग्रेस कोअी विदेशी सरकारकी नौकरशाही नही है कि बडे वेतन लेकर आराम करने, कुर्सी-टेबल पर बैठकर किये जानेवाले काम करने और लोगोकी सलामें लेनेमें ही अधिकारका कर्तव्य पूरा हुआ मान लिया जाय। वह तो जनताके लिअे सदा लडनेवाली, अुसके भीतर सदा स्वराज्यकी रचना करनेवाली तथा सत्य-अहिंसाके ध्येयको अपनानेवाली महान सस्था है। अुसका अधिकारी न खुद चैन लेगा, न किसीको लेने देगा, जनताके हक और स्वराज्यके लिअे वह सदा सत्याग्रहका जामा पहने ही रहेगा, सत्य-अहिंसाके सिद्धान्तको अपने जीवनमें लगनके साथ अुतार कर अपनी योग्यता और अपनी काग्रेसकी प्रतिष्ठा बढायेगा, जनताकी शक्ति बढानेवाले रचनात्मक कार्योंके तत्त्व अपने जीवनमें लगनसे दाखिल करेगा और लोगोमें अैसे काम वेगसे जारी करेगा।

परन्तु ठडे आदमी चुनाव जीतकर अधिकारारूढ हुअे कि चादर तानकर सो जायगे। वे सोये कि जहा तक अुनके विभागका सबध है वहा तक काग्रेसको भी सुला देंगे।

असलमें अुन्होने काग्रेसको पहचाना ही नही है। अुसके सिद्धान्तो और कार्य-पद्धतिमें शायद ही अुनकी श्रद्धा होती है। वे कदाचित् दिखावेके लिअे खादी पहनेंगे, मगर चरखेको विधवाओका औजार मानेंगे। ग्रामोद्योगोकी वे हसी अुडायेंगे और अपने दिमागमें यही विचार बनाये रखेंगे कि मशीनोके बिना देशका अुद्धार नही होगा। काग्रेसके राष्ट्रीय शिक्षाके विचारोका भी वे मजाक ही अुडायेंगे। वे रचनात्मक कामकी और अुसे करनेवालोकी, अुन्हें भगत कहकर, सदा खिल्ली अुडायेंगे और अपने विभागकी भूमिको विनजुती ही रहने देंगे।

अुनके धधोको देखें तो अुन्हें भी वे काग्रेसके सिद्धान्तोका कोअी स्पर्श नही होने देंगे। किसानो, मजदूरो और हरिजनो आदि दलित वर्गोंके साथ अपने सबधोमें वे अपमान, अन्याय और शोषणका व्यवहार जारी रखेंगे। वे यही मानकर आचरण करेंगे कि "ये लोग कभी सुधर ही नही सकते, अिनका दबा रहना ही अच्छा है।" अैसी स्थितिमें वे किसानो, मजदूरो और हरिजनोमें काग्रेसकी प्रवृत्तिया तो चलाने ही क्यो लगे? और यदि दूसरे लोग अैसा करनेका प्रयत्न करेंगे, तो वे अपने विभागकी हद तक तो अधिकारके बल पर अुन्हें जरूर दबा देंगे।

हिन्दू-मुस्लिम-अेकताके बारेमें वे सदा अश्रद्धा रखेंगे। अिस सबधमें पास किये गये काग्रेसके प्रस्तावोको वे दिखाने भरके लिअे मानेंगे। तब फिर साम्प्रदायिक दगोंके समय वे साम्प्रदायिक जहरसे प्रभावित हुअे बिना कैसे रह सकते है?

सत्य-अहिंसाके काग्रेसके ध्येयोको तो वे मानने ही क्यो लगे? वे यो कहकर अुन्हें हसीमें अुडा देंगे कि "ये तो साधु-सतोके सूत्र हैं, ये राजनीतिके सूत्र नही हो सकते।" वे यह माननेकी हद तक भी चले जायगे कि सरकार और दुनियाको धोखा देनेके लिअे काग्रेसके चतुर नेताओने अिन सिद्धान्तोको प्रस्तावमें रख दिया है। वे यह देख ही नही सकेंगे कि अिनके अल्प पालनसे भी काग्रेस और जनताकी शक्ति कितनी बढी है। वे अैसे भ्रमोमें पडे रहेंगे कि काग्रेस हर वक्त सरकारको जो झुकाती है अुसका कारण जनबल नही है, सरकार झुकती है अुसे तग करनेसे, अुसके साथ छल-कपट करनेसे और सभाओ तथा अखबारोकी फुफकारोमे। सत्याग्रहकी लडाअिया लडना हमें और लोगोको आ सकता है, अुतनी हिम्मत बढा लें तो ही किसी दिन स्वराज्य हासिल किया जा सकता है, और अिन लडाअियोका मूल आधार सत्य और अहिंसाका पालन ही है — चतुराअी और छल-कपट हरगिज नही, यह देखने और समझनेको वे कभी तैयार ही नही होंगे।

अैसे अधिकारी काग्रेस जब सामूहिक सत्याग्रहकी लडाअिया छेडेगी, तब युक्ति-प्रयुक्ति करके अधिकारसे खिसक जानेकी कोशिश करेंगे, अथवा लाचार होकर, लोक-लाजके खातिर, समाजमें अपना नाम बनाये रखनेके लिअे अुनमें भाग लेंगे और अुन कारणसे जेलमें जायेंगे तो वहा बडे दुखमें दिन बितायेंगे, काग्रेसकी कार्य-पद्धतिकी निंदा

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

ग्यारहवां विभाग

आत्मबल

करेंगे, नेताओंकी भूलें गिनाते रहेंगे और नेताओंने लोगोंकी शक्ति देखे बिना ही अवापन किया है आदि चर्चाओंमें समय बितायेंगे। अिस शंकाका हल अुन्हें कभी मिलेगा ही नहीं कि जेलमें पड़े रहकर रोटियां खानेसे सरकार कैसे झुकेगी। अैसा करते-करते अुनका मन दिनोंदिन निर्बल होता जाय और कभी कभी चाहे जैसी शर्तें लिखकर बाहर निकलनेकी भी पैरवी करे तो क्या आश्चर्य है?

यद्यपि हमारे लोगोंमें कांग्रेसके लिअे बड़ी भक्ति है, फिर भी अुसके ध्येय और कार्य-पद्धतिके विषयमें, अुसकी अिन मान्यताओंके विषयमें बड़ा अविश्वास है कि हमें रचनात्मक कार्य द्वारा लोगोंका बल बढ़ाना है, अुस बलके द्वारा सत्याग्रहकी लड़ाओ लड़नी है और अुससे स्वराज्य जीतना है। अिससे कांग्रेसके जिम्मेदार कार्यकर्ताओंके जीवनमें भी अुपरोक्त दोष आये बिना नहीं रहते। सचमुच, अिस बारेमें सेवकोंको गफलतमें कभी नहीं रहना चाहिये।

अिसमें शक नहीं कि समितियां कांग्रेसकी सबसे अधिक प्रत्यक्ष रचनात्मक प्रवृत्ति हैं, कांग्रेसके अर्थात् जनताके समूचे विशाल शरीरमें रक्तसंचार करनेवाले हृदयके जैसी हैं। परन्तु कब? तभी जब अुनके अधिकारी समितियोंके कार्यालय ही चलाकर संतोष न मानते हों, परन्तु कांग्रेसके वीर सत्याग्रही सैनिक बनकर सदा सज्ज रहते हों, अपने अिलाकेमें रचनात्मक कार्योंका जाल बिछाकर सदा जनताका निर्माण करते हों, अुसे सदा स्वराज्यके मंत्र देते हों और अुसके स्वाभिमान तथा अधिकारोंके लिअे सत्याग्रही लड़ाअियां लड़ते हों।

परंतु यदि समितिका अर्थ केवल चुनाव जीतना, वैतनिक कर्मचारियों द्वारा सदस्य बनाना, कार्यालय चलाना और विशेष त्यौहारों पर झंडा फहरानेकी रस्म अदा करना ही हो, तो वह कांग्रेसका हृदय हरगिज नहीं है — फिर भले ही अुसका कार्यालय कितना ही अच्छा हो और अुसमें कितने ही अच्छे नोट-पेपरों पर पत्र-व्यवहार किया जाता हो और अुसने भव्य कांग्रेस-भवन भी खड़ा कर दिया हो।

समितिका अर्थ कार्यालय नहीं, परंतु कांग्रेसकी लड़ाओकी छावनी है। वहां सेवक सदा सजग रहकर जनताके अधिकारोंकी रक्षा करनेके लिअे तैयार रहेंगे, अन्यायोंके विरुद्ध छोटे और बड़े, स्थानीय और देशव्यापी, व्यक्तिगत और सामूहिक सत्याग्रहोंकी योजना बनाओ जाती होगी और लड़ाअियां छेड़ी जाती होंगी। लोगोंको सत्याग्रहकी तालीम देनेके लिअे अुन समितियोंके पथ-प्रदर्शनमें जगह जगह रचनात्मक कार्य किये जायंगे। और रचनात्मक कार्यके केन्द्रोंका अर्थ केवल खादी अित्यादिके कार-खाने या दुकानें नहीं, परन्तु जनताकी सत्याग्रह-शक्ति बढ़ानेवाले तालीमखाने होगा। वहां सेवकों और जनता दोनोंमें अिस बातका ज्ञान फैलाया जायगा कि स्वराज्य क्या है और अुसे कैसे लाना है। यह सच्चा रचनात्मक कार्यक्रम है। अैसी समितियां चलाओ जायं और अैसे रचनात्मक काम किये जायं, तो ही अुनसे स्वराज्यकी गरमी निश्चित रूपसे पैदा होगी।

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

ग्यारहवां विभाग

आत्मबल

प्रवचन ६५

सार्वजनिक जीवनमें सिद्धान्त हो सकते हैं?

हम रोज प्रार्थनामें आश्रमके अिन ग्यारह व्रतोका पाठ करते है

१ सत्य, २ अहिंसा, ३ अस्तेय, ४ अपरिग्रह, ५ ब्रह्मचर्य, ६ अस्वाद, ७ शरीर-श्रम, ८ अभय, ९ स्वदेशी, १० अस्पृश्यता-निवारण, ११ सर्वधर्म-समभाव।

ये मनुष्य-जीवनके सच्चे सिद्धान्त हैं। हमारे जीवनमें यदि अिन सिद्धान्तोकी सुगध निरतर महकती न रहे, तो हम मनुष्य कहलानेके अधिकारी नही, अैसी हमारी श्रद्धा है।

मनुष्य सनातन कालसे अिन सिद्धान्तोके बारेमें अैसी श्रद्धा रखता आया है। आज भी चाहे जिस देशमें जाय, वहाके लोग किसी भी धर्म और आचार-विचारको मानते हो, सभ्य और सुसस्कृत हो या पिछडे हुअे हो, परन्तु वे अिन्ही सिद्धान्तोके आगे सिर झुकाते दिखाअी देंगे। क्या अिससे यह सूचित नही होता कि यह ससारके सभी युगो और सभी देशोके मनुष्योके अनुभवकी आवाज है?

हम अिन सिद्धान्तोका पालन कर सकते हो या कमजोरीके कारण न कर सकते हो, परन्तु अन्तरात्मा तो लगातार यही गवाही देती है कि मानव-जीवनमें यदि कोअी सिद्धान्त पालन करने लायक हो तो वे यही हैं, जीवनकी कोअी बुनियाद हो, जीवनका कोअी सार-सर्वस्व हो तो यही सिद्धान्त हैं। अिसीलिअे यदि कोअी मनुष्य अिन सिद्धान्तो पर आग्रहपूर्वक और सच्चाअीके साथ अपने जीवनमें अमल करता दिखाअी देता है, तो हम स्वभावत अुसके प्रति पूज्यभाव प्रगट किये बिना नही रह सकते। वह किस देशका है, किस धर्मका है, कौनसी भाषा बोलता है, क्या धधा करता है, अथवा जन्मसे अूचा है या नीचा — कुछ भी देखनेको हम रुकते नही। वह स्त्री है या पुरुष, सफेद दाढीवाला कोअी माननीय बुजुर्ग है या आजकलका नौजवान है, विद्वान है या अविद्वान — कुछ भी अिसमें बाधक नही होता, हम अैसे आदमीको अपनेसे श्रेष्ठ, हमारे पूज्यजनके रूपमें स्वीकार किये बिना रह ही नही सकते।

हिन्दुस्तानमे तो अैसे पुरुषोका हम प्राचीन कालसे आदर करते आये है। हम अुसे ऋषि, मुनि और योगी कहते हैं और अीश्वरके अवतारका पद भी देते हैं। परन्तु हिन्दुस्तानमें ही नही, दुनियाके किसी भी देशमें अैसा पुरुष मान-सम्मान और पूजा प्राप्त किये बिना नही रहता।

अिस प्रकार ये सिद्धान्त तो सर्वमान्य हैं, परतु जीवनमें अुन्हें अुतारनेका प्रश्न आता है तब अुनसे दूर भागना भी मानो सब देशोका सर्वकालीन नियम ही बन गया है। लोग अुनके पालनमें होनेवाली कठिनाअियोसे डर जाते हैं और तरह तरहके बहाने बनाते हैं "यह तो महात्माओका, साधु-सन्यासियोका और आश्रमवासियोका काम है। हम तो ससारमें फसे हुअे जीव है। अिन सिद्धान्तोके अनुसार चलनेकी हमारी शक्ति

नही। चलने लगें तो अपना और अपने बाल-बच्चोका पेट भरना भी कठिन हो जाय, तब सुख-समृद्धिमे रहनेकी तो बात ही क्या कही जाय?"

यह खानगी अथवा व्यक्तिगत जीवनकी बात हुअी। परतु हमारी तो यह भी श्रद्धा है कि मनुष्यके सार्वजनिक जीवनकी बुनियादमे भी ये ही सिद्धान्त होने चाहिये, हमारा स्वराज्य भी अिन्ही सिद्धान्तो पर खडा होना चाहिये, हमारे धधे और व्यापार अिन्ही सिद्धान्तोके अनुसार चलने चाहिये और हमारे समाजकी रचना अिन्ही सिद्धान्तो पर होनी चाहिये।

यह सुनकर लोग "असभव, असभव!" बोल अुठते है। "यह बिलकुल वाहियात, बिलकुल मूर्खताकी बात है! व्यक्तिगत जीवनकी हद तक तो आपके सिद्धात माननेको हम तैयार है। भले हम खुद अुनका पालन न कर सकें, परन्तु जो करते है अुनके प्रति हमें पूज्यभाव है। परन्तु देशका — समाजका सवाल अलग चीज है। राजकाज और व्यापार जैसे मामलोमें हम अिन सिद्धातो पर आधार रखने लगें, तो बलवान जातिया हमें निगल जायगी, देशके भीतर भी दुष्ट काबूमें नही रहेंगे और दुनियाके पट पर हमारा नामोनिशान भी बाकी न रहेगा।"

अिस प्रकार जब देश-देशके — राष्ट्रोके व्यवहारका प्रश्न आता है, तब आम तौर पर कोअी यह नही मानता कि अिन सिद्धान्तोके अनुसार चलना चाहिये, न कोअी अैसी आशा ही रखता है। अिन व्यवहारोमें अपने देशका स्वार्थ सिद्ध होता हो, तो ग्यारहो सिद्धातोका भग करनेमें भी शरम नही मानी जाती। झूठ बोला जा सकता है, युद्ध करके मानव-सहार किया जा सकता है, बलवान देश निर्बल देशको धोखा दे सकता है, चूस सकता है और हडप भी सकता है। अैसी चोरीसे लोग शरमाते नही, परन्तु यह कहकर अभिमान प्रकट करते है कि 'हमने देश जीत लिया'।

परतु यदि हमारा देश अैसे व्यवहारको मानता है, तो दूसरा देश भी अुसीको मानता है, और रोज अुठकर लडाअी लडना सभव नही होता, हमेशा अुसमें अपने देशका स्वार्थ सिद्ध होनेका भरोसा भी नही होता। अिसलिअे दोनोको कुछ समय तक अमुक नीतिका पालन करना ही पडता है। अिस व्यवहारका नाम है राजनीति अथवा मुत्सद्दीगिरी। अर्थात् अूपरसे तो सत्य-अहिंसा वगैराके पालनका दिखावा करना, परतु अदरसे अपने देशके स्वार्थके लिअे जो करने योग्य हो वही करते रहना। व्यक्ति अैसा व्यवहार करते हुअे पकडा जाय तो वह बदमाश गिना जाता है, परतु राज्य या देश जैसा बडा समूह अैसा करते हुअे पकडा जाय तब लोग अुसके व्यवहारको राजनीतिका नाम देते है और अुसकी तारीफ करते है।

अैसी राजनीतिका व्यवहार करनेकी स्वतत्रताका प्रारभ कहासे हो? अिस मामलेमें स्वतत्रता लेनेवाला समूह कमसे कम कितना बडा होना चाहिये? — अिसका कोअी पैमाना हो अैसा मालूम नही होता। यह साधारण नीति हो गअी है कि अेक पूरा देश दूसरे देशके प्रति अैसा आचरण करे। परतु देशके भीतर भी किसी न किसी

कारणसे मनुष्योके गुट बन ही जाते है। रक्त-सबधसे जातियोके समूह बन जाते हैं। धधोके समूह भी होते हैं। धर्म-सम्प्रदायोके भी समूह बन जाते है।

क्या अिन समूहोको भी अपने अपने स्वार्थके लिअे सत्य, अहिंसा आदि सिद्धात छोडकर मुत्सद्दीगिरीकी नीति पर चलनेकी छूट होनी चाहिये? और यदि अिन समूहोको छूट दी जाय तो अुनसे छोटे समूहोको क्यो न दी जाय? कुटुम्बोका समूह अपने पडोसियोके साथके व्यवहारमें क्यो सत्य-अहिंसा पर कायम रहें?

कोअी देश यदि पतनके रास्ते लग गया हो, तो अुसके भीतरके छोटे समूह अैसी नीति पर चलने लग ही जाते है और जनताके समग्र जीवनको बिगाड देते है। परतु प्रजा-शरीर आरोग्य और चेतनयुक्त होगा, तो देशाभिमानी नेता देशके जीवनको अिस तरह बिगडने नही देंगे। वे कहेंगे, "देश देशके बीचके व्यवहारोमें सत्य-अहिंसाके सिद्धात न पालनेकी और राजनीतिसे चलनेकी बात भले ही स्वीकार की जाय, परतु देशके भीतरके अुप-समूह हमारा अनुकरण न करें, अुन्हें तो साधारण व्यक्तिगत व्यवहारके सिद्धान्तो पर ही चलना चाहिये।"

अिन देशाभिमानी नेताओसे पूछना चाहिये कि "समूचे देशकी दृष्टिसे आप जिस तरह अिन अुप-समूहोको व्यक्तिगत स्वार्थ छोडकर सत्य-अहिंसा पर चलाना चाहते हैं, अुसी तरह क्या समस्त मानव-परिवारकी दृष्टिसे आपको भी अिन्ही सिद्धातोके अनुसार नही चलना चाहिये? आप देश देशके समूह बनाकर जब सत्य-अहिंसाके मानव-धर्मोका द्रोह करते है, तब क्या आप मानव-परिवारका जीवन नही बिगाडते?"

थोडा गहरा विचार करें तो मालूम होगा कि समूह और देश व्यवहार चाहे जैसा करते हो, परतु माननेमें तो वे भी व्यक्तिकी तरह सत्य-अहिंसा वगैरा सिद्धातोको ही सच्चा आचरण मानते है। अैसा न हो तो वे अूपरसे अुनके पालनका दिखावा क्यो करें? अुनकी राजनीतिका क्या यही अर्थ नही है कि अुन्हे व्यक्तियोकी तरह सत्य-अहिंसाके पालनमें होनेवाले कष्ट, त्याग वगैरा नही चाहिये, परतु अुनके पालनका दिखावा करना अुन्हें पसद है? वे अच्छी तरह जानते है कि अुनके पालनसे मान और प्रतिष्ठा मिलती है।

फर्क अितना ही है कि अपने व्यक्तिगत जीवनमें जब हम दुर्बलतावश अिन सिद्धातोको छोडते हैं, तब मनमें शरमाते है, और पकडे जाते है तब सिर अूचा नही कर पाते। परन्तु देश देशके बीचके व्यवहारोमें हम राजनीति अर्थात् असत्य और हिंसा वगैरा करनेमें शरम नही मानते। जहा तक सुविधा हो अिन सिद्धातोके पालनका दिखावा करते हैं और देशकी स्वार्थ-सिद्धि अुन्हे छोडनेसे होती हो तो खुल्लमखुल्ला अूपरी दिखावा करना छोड देते हैं। अैसा करके हम कोअी शरमकी बात करते है अैसा मनसे भी नही मानते।

अिस मामलेमें हमारी मान्यता अिससे अलग है। हम यह मानते हैं कि देशके नामसे — सार्वजनिक जीवनमें भी सिद्धान्तो पर खडे रहनेमे ही सच्चा मनुष्यत्व है।

स्वार्थ साधनेकी सुविधा देखकर सच्चा व्यवहार छोड देना हमारे मानव-जीवनमें भी शरमकी बात है, मनुष्यकी मनुष्यताको कलंकित करनेवाला है, तब देश अथवा समूहके व्यवहारमें अैसा आचरण नीचा न रहकर अूचा कैसे हो सकता है ?

हमारा सकल्प है कि हम अिसी श्रद्धासे चलेंगे। अिसलिअे हमारा यह भी सकल्प है कि हमे अैसे स्वराज्यकी रचना करनी है, जिसकी जडमें सत्य-अहिंसा आदि अेकादश सिद्धान्त हो। दूसरे भले ही सत्य-अहिंसाके पालनको असभव कहकर अिसका तिरस्कार करें, परतु हम जानते है कि जो राष्ट्र असत्यके मार्ग पर चलकर स्वार्थ-सिद्धिका प्रयत्न करेंगे, अुन्हें कभी न कभी अुस मार्गसे वापस लौटना ही पडेगा, क्योकि यदि अेक राष्ट्रको अपने स्वार्थके लिअे सत्य-अहिंसाको छोडनेमें बाधा नही होगी, तो दूसरे राष्ट्रोको भी क्यो होगी ? वे क्यो पहले राष्ट्रोसे अिस मार्गमें पीछे रहेंगे ? अैसे राष्ट्र कभी न कभी अनुभवकी ठोकरें खाकर जानेंगे कि स्वार्थ साधनेके लिअे असत्य और हिंसाका मार्ग छोटा और आसान दिखाअी देता है, परतु असलमें वह छोटा भी नही होता और आसान भी नही होता। अुसमें महासहारो, महादु खो और महापतनसे वे बच नही सकेंगे। आखिरमें तो सत्य और अहिंसाका मार्ग ही छोटा है। अुसमें कष्ट जरूर होगे, परन्तु वे अपने बुलाये हुअे होनेके कारण मीठे लगेंगे, हमें अूचा अुठायेंगे और मानव-परिवारको आजकी अपेक्षा थोडा अधिक अुन्नत और अधिक सुखी बनायेंगे।

सार्वजनिक जीवनमें सिद्धान्तोके लिअे कोअी स्थान नही है, स्वराज्य मिलता हो तो किसी भी रास्ते पर चलनेमें हर्ज नही, अैसा माननेवाले लोग हमारे देशमें भी थोडे नही हैं। वे हमारे व्यवहार पर हसेंगे। अुन्हें हसनेसे अेकदम कैसे रोका जा सकता है ? परन्तु हम सत्य, अहिंसा आदि सिद्धातो पर अडिग रहकर अुनके द्वारा स्वराज्यकी रचना करनेकी शक्ति पैदा करके दिखायेंगे; और जब तक वह करके दिखा न सकें, तब तक धीरजसे अुनका हसना सहन करते रहेंगे।

प्रवचन ६६

'नीतिके रूपमें'

कल मैंने कहा था कि सार्वजनिक जीवनमें — स्वराज्यके काममे सिद्धातोको [ब]ाधक न होने दिया जाय, अैसा कहनेवाले दुनियामें और हमारे देशमें भी बहुत लोग [ह]ै। अैसा कहना दुनियाका अेक प्रचलित फैशन ही हो गया है। सबको डर लगता है [कि] अैसा न कहें तो भोदू माने जायगे। सार्वजनिक जीवनमें धूर्तता, चतुराअी और [च]ालाकीसे काम लेकर कोअी फायदा अुठा लेता है, तो लोग अुसकी अिस होशियारीसे [ख]ुश हो जाते है और शाबाशी देकर अुसकी तारीफ करते हैं। अुसकी धूर्तताको [म]ुत्सद्दीगिरी और राजनीतिके बडे नाम देते हैं। पचतत्रमें गीदडकी चतुराअीकी बातें पढकर कौन गद्गद नही हो जाता?

सार्वजनिक जीवनमे बताअी जानेवाली चालाकीकी अैसी प्रशसा मनुष्य-जातिका वडा रोग ही है। वह अितना फैल गया है और अैसा सक्रामक है कि हमारे अपने मन भी अुसके जहरीले जतुओसे मुक्त नही है, हम सिद्धान्तो पर श्रद्धा कायम करना चाहते हैं, परन्तु हमारे मनका रुख दूसरी ही तरफ होता है।

आअिये, आज हम जो स्वराज्य-रचनाके सीधे काममें लगे हुअे है अपने मनका जरा पृथक्करण करें। हमारे काममें सत्य-अहिंसा आदि सिद्धान्तोके लिअे हमें अधिक आकर्षण है अथवा राजनीति या मुत्सद्दीगिरीके नामसे पहचाने जानेवाले सिद्धान्त-भगके लिअे, अिसकी जाच करें।

हमें क्या मालूम होता है? सत्य-अहिंसाकी बातें सुनकर हम अेक-दूसरेकी तरफ शरारतभरी आखोसे देखते है और मूछोमें हसते हैं। सत्य-अहिंसा आदिका नाम देशके प्रश्नोमें हम चलने देते हैं, अिसका अेक कारण तो यह है कि देशमें दूसरे मार्ग पर चलने लायक शस्त्र, धन आदिका वल पैदा कर सकनेका आज कोअी रास्ता हमें मिल नही रहा है, और दूसरा कारण यह है कि हमारे भाग्यसे हमें नेता अैसे मिले हैं, जो अुठते, बैठते, सोते, जागते अिन सिद्धातोका जप छोडते ही नही। अिसलिअे हम माथे पर हाथ रखकर कहते है "देशमें स्वराज्यका नाम लेनेवाले तो दूसरे वहुतसे नेता है, परतु अुसके लिअे लडने और आगे वढकर लोगोको लडानेवाले कोअी नही है। अिसलिअे अिन नेताओके मस्तिष्कमें जो भी तरगें अुठती है अुन्हें स्वीकार किये सिवा कोअी चारा नही है। यदि आप स्वराज्य ला देते हो तो आपके सत्य-अहिंसा हमें मजूर है, परन्तु हम तो अुन्हें कामचलाअू नीतिके रूपमें ही स्वीकार करते हैं, आपकी तरह हम अुन्हें धर्म समझकर शिरोधार्य करनेको तैयार नही है।" अर्थात् "सार्वजनिक राजनीतिमें ही हम अुसका पालन करेंगे, खानगी जीवनमें तो अनुकूल होगा वैसा ही आचरण हम करेंगे। और राजनीतिमें भी अवसर देखेंगे तो किसी भी समय आपके सिद्धान्त आपको सौप देंगे।"

नेता जानते है कि ये सिद्धान्त मुहसे स्वीकार करनेसे तुरन्त हृदयमें अुतर नही सकते। बीज बोनेके बाद अुन्हें धीरे-धीरे अुगने देना चाहिये। अिसलिअे वे हमारे साथ धीरज रखते हैं, हमे झूठे और बेवफा कह कर हमारा त्याग नही करते। वे आशा रखते हैं कि देशका कार्य सत्य और अहिंसाकी पद्धतिसे करते-करते अुस पर हमारी श्रद्धा जमती जायगी और हमें अिस बातका प्रत्यक्ष अनुभव होगा कि सिद्धान्तोंके पालनसे हमारा अपना और देशका बल बढ रहा है।

परतु हमारा दिमाग कैसे विचित्र ढगमे काम करता है!, वह किसी भी तरह श्रद्धाकी पकडमें आनेको तैयार नही होता। जिस प्रकार रोगीका शरीर अमृत जैसा अन्न खिलाने पर भी अुसमें से अपने लिअे जहर ही बना लेता है, अुसी प्रकार जो भी परिस्थिति अुत्पन्न होती है अुसमे से हमारा मस्तिष्क अपने लिअे अश्रद्धा ही पैदा कर लेता है।

सत्य-अहिंसाके आन्दोलनोके कारण जनतामें स्वराज्यकी कुछ गरमी दिखाअी देती है, तब हम यही मानते हैं कि अमुक राजनीतिक दावपेंच लगाकर सरकारको चक्करमें डाल देनेसे ही यह गरमी आअी है। जब आन्दोलनमे पीछे हटना पडता है, तब हम यही मानते है कि नेता सिद्धान्तोसे चिपटकर बैठ जाते हैं, अिसीलिअे हमें पीछे हटना पडता है।

नेता सिद्धान्तो पर जोर दिया करते हैं, क्योकि वे जानते है कि अुनमें आत्म-बलका गोला-बारूद छिपा हुआ है और हमारे जैसे कार्यकर्ताओंमें तथा हिम्मत हार बैठनेवाली जनतामें भी वे सत्यका शौर्य भर देगे। परन्तु हमारे निर्बल और अश्रद्धालु मन अुन सिद्धान्तोका अलग ही अर्थ लगाते है।

अब ग्यारहो सिद्धान्तोको हमारे राजनीतिके अुलटे चश्मेसे देखने पर हम कैसे भद्दे और निर्जीव बनाकर देखते है सो सुनिये।

१. **सत्य**—यह सच बात है कि हम अेक विजित और नि शस्त्र प्रजा है। यह भी सच है कि अग्रेज अेडीसे चोटी तक शस्त्रसज्ज है, धन और विज्ञानके बलमें पूर्ण है। हम कितने ही प्रयत्न क्यो न करे, अुन्हें दावमें फसाना हमारे लिअे सभव नही। हमारे पास अेक ही दाव बाकी है और वह यह कि अुन लोगो पर अैसा असर डाला जाय "हम सत्यके सिद्धान्तोको माननेवाले है, आपके साथ स्वराज्यके लिअे हम झगडा करेंगे, परतु जितना झगडा करेंगे वह खुले तौर पर करेंगे, आपको कपट-नीति चलाकर कभी धोखा नही देंगे।" अैसा प्रभाव डालनेके लिअे हमें सत्यको अमुक मात्रामें तो पकडे ही रहना होगा। अुतना हम अुसे पकड सकते है, परन्तु कअी बार यह विश्वास होने पर कि अब अग्रेजोको छकानेका मौका आ गया है दावके रूपमें पकडा हुआ सत्य हाथसे छूट जाता है और बुर्केके नीचे छिपा हुआ हमारा कपटी मुह खुल जाता है।

२. **अहिंसा**—अग्रेजोके साथ लडाअी करनेका बल या सामान हमारे पास है ही नही, अिसलिअे हम चाहें तो भी लडाअी नही कर सकते। अत आज तो

अहिंसाकी नीति अपनानेमें ही है। अिससे विरोधी पक्ष पर अैसी छाप अच्छी तरह डाली जा सकेगी "हम सिद्धान्तोके रूपमें अहिंसाके पुजारी हैं, अिसीलिअे अंग्रेजोके विरुद्ध अुगली भी नही अुठायेंगे। कभी कभी लडाअी करेंगे, परन्तु अुसमें हिंसासे काम नही लेंगे।" परतु छाप डालनेके लिअे धारण की हुअी अहिंसाको विचलित होनेमें कितनी देर लगती है? अैसे कअी मौके आ जाते हैं जब अंग्रेज शिकजेमें आये हुअे दिखाअी पडते हैं और अैसा लगता है कि जरासी हिंसा कर लेंगे तो अुनका किला ढह जायगा। अैसे समय अहिंसाका नकाब अुतार कर अन्दरके नख-दत दिखा देनेका लालच हमसे रोका नही जा सकता, यद्यपि अिन नख-दतोंसे खुरसटोके घाव करनेसे ज्यादा हानि हम अंग्रेजोको पहुचा नही सकते। अिससे केवल हमारे भीतरी विचारोकी कलअी खुल जाती है और वर्षोंके अहिंसा-पालनसे बनी हुअी प्रतिष्ठा मिट्टीमे मिल जाती है।

३. **अस्तेय** — "अंग्रेजोकी तरह हम किसी और राज्य या धनकी चोरी नही करना चाहते," अैसा हम कहते हैं और यह देखनेके लिअे आखें अूची करते हैं कि दुनियामें हमारे निर्दोष होनेकी छाप कितनी अच्छी पडी है। परन्तु कमजोर लोगोके मुहमे अैसी बडाअी सुनकर दुनियाके बलवान लोग मजाक अुडाते हैं। हम खुद भी अपना बोलना सुनकर शरमाते हैं। और चूकि हमने राजनीतिके तौर पर ही अस्तेयको स्वीकार किया है, अिसलिअे हम अपने देशमें जो लोग हमसे कमजोर हैं अुनकी चोरी तो जारी ही रखते हैं। तब अस्तेय कहते समय वह शब्द हृदयमे से दृढ आवाजमें कैसे निकल सकता है? जिनकी चोरी हम करते हैं, वे हमारे स्वराज्य पर कैसे आस्था रख सकते है?

४. **अपरिग्रह** — अिस सिद्धान्तको तो हम मूलसे ही नही मानते। नेता अुसका बार बार नामोच्चार नही करते, केवल अपनी प्रार्थनामें रोज रटकर और अपने निजी जीवनमें अुसे अुतारकर शान्त रहते हैं। अिसलिअे अुनके विरुद्ध आवाज अुठानेकी हमें जरूरत नही पडती। वैसे हम यही मानते है कि अपरिग्रहका विचार व्यक्तिगत जीवनमें और अुसी तरह सारे देशके जीवनमें मनुष्यको बिलकुल जगली दशामें ले जानेवाला विचार है। हमारा आदर्श यही है कि हमारे लिअे सुख-सुविधाके साधन जितने मिलें अुतने थोडे है और हमारा देश भी दुनियाके सब देशोंसे मालदार हो जाय तथा बडे बडे कारखानो और जगमगाते शहरोंसे सुशोभित हो जाय। परन्तु हमारी यह अश्रद्धा अैन वक्त पर बाधक हुअे बिना नही रहती। हमारे परिग्रह — धनदौलत स्वराज्यकी लडाअीमे होम देनेका अवसर आता है तब हम टिक नही सकते।

५ **ब्रह्मचर्य** — ब्रह्मचर्यका तो नाम सुनकर ही हम चिढ जाते हैं। "अिस सिद्धान्तका राजनीतिके साथ क्या सबध है? किसी भी प्रजाके सामने ब्रह्मचर्यका आदर्श रखना निरा पागलपन है। अिसके सिवा, नेता तो ब्रह्मचर्यके अर्थको विशाल बताकर बात-बातमें अपने पर सयम रखनेको समझाते हैं। अिस प्रकारका सन्यासी जीवन स्वीकार करनेको हम तैयार नही हैं। स्वराज्यकी लडाअीके लिअे जब जितना अैश-आराम

छोडना पडेगा अुतना हम छोड देंगे। परतु ब्रह्मचर्यको अपने जीवनका आदर्श वनानेको हम तैयार नही है।" हम आवेशमें अिस तरह कह तो देते है, परन्तु जब स्वराज्यके सैनिकका कठिन जीवन वितानेकी नौबत आती है, जेल जानेका अथवा घरके धधे आदिके नाशका समय आता है और देशके खातिर मारे-मारे भटकते फिरनेका दिन आता है, तव हम निकम्मे सावित होते है। देशमे जब लडाअी छिडती है, तव सैनिकोका अकाल ही मालूम होता है।

६ **अस्वाद**—अस्वादकी बात सुनकर तो हमें अितना क्रोध आता है कि स्वराज्यकी बातमे जो अस्वादको भी सिद्धान्तके रूपमे घुसेंडनेकी हिम्मत करते है, अुनके साथ मानो हम किसी भी तरहका सबध नही रखना चाहते। हम चिल्ला अुठते है· "यह राजनीति चलती है या विधवा-आश्रम ?" परतु छोटीसी तुच्छ जीभने हमारे जीवन पर कितना साम्राज्य जमा रखा है, यह अैन मौके पर परख लिया जाता है। हमें चाय-बीडी जैसी चीजें न मिलें, तो भी हम बिलकुल कायर बन जाते है।

७ **शरीर-श्रम**—यह गोली भी स्वराज्यके सिद्धान्तके रूपमें निगलना हमारे लिअे सभव नही होता। हम बोल अुठते है "यदि मेहनत-मजदूरी करनेसे स्वराज्य मिलता, तब तो हिन्दुस्तानकी आवादीका बडा भाग वर्षोसे लोगोका पानी भरने और लकडिया फाडनेका काम करता आया है, फिर भी स्वराज्य क्यो नही आया ?" शरीर-श्रमके चिह्न-स्वरूप अधिक नही तो रोज आधा घटा स्वराज्यका प्रत्येक अिच्छुक शरीर-श्रम करे, और चूकि कडी मेंहनत सबसे नही हो सकती अिसलिअे चरखा कातनेकी ही मेहनत करे—यह सूचना आअी, तब हम बडे विचारमें पड गये और आखिर जब अिस सूचनाको रद करा दिया तभी हमें चैन मिला। परतु हम यह नही देखते कि अैसा करके हमने स्वराज्यको भी दूर फेंक दिया है। हम अपने करोडो श्रमजीवी भाअी-बहनोसे हर तरह अलग हो गये है, सफेदपोश बनकर अुनसे अूपर ही अूपर रहते है, अुन्हें अपने नजदीक हम नही खीच सकते, अुन्हें समझ नही सकते और अुनमें स्वराज्यके लिअे तथा हमारे अपने लिअे विश्वास पैदा नही कर सकते। अुनके जैसे मेहनती बनें तो हम अुनका प्रेम प्राप्त कर सकते है। परतु वैसे बननेके लिअे हम क्यो तैयार होने लगे ?

८. **अभय**—ग्यारहो सिद्धान्तोमें यही अेक अैसा है, जिसे कोअी अस्वीकार नही कर सकता। लोगोमें निर्भय वीरके नाते सम्मान प्राप्त करना किसे अच्छा नही लगता ? परतु अच्छा लगनेसे ही वह सम्मान मिल नही जाता और न मुहसे बडी-बडी बातें करने और छाती फुलानेसे ही अभय आ जाता है। हम सत्य, अहिंसा आदि सिद्धान्तोको दृढतासे क्यो नही पकड सकते ? क्यो अुन्हें बात-बातमें छोड देते है ? क्यो हम हमेशा सुविधा-धर्म पर ही जीते हैं ? क्या अिसका कारण यही नही है कि हमने अपने हृदयमें अभयको जीवनका सिद्धान्त बनाने लायक बल पैदा नही किया है ? हमें देशभक्ति तो करनी है। परन्तु वैसा करनेमें हमारी जमीन-जायदाद और जीवनको नुकसान पहुचता देखकर हमारे विचार बदल जाते है। हमारे अैश-आराममें कमी हो वहासे हम पलायन कर जाते है। कोअी अिस ढगसे प्राण न्योछावर करके देशकी अथवा

अपने किसी भी प्रिय ध्येयकी भक्ति करनेवाला निकलता है, तो हम अुसे पागल समझकर अुसकी हसी भी अुडाने लगते हैं। अिसीलिअे हमारे कामोमें और हमारी लडाअियोमें कोअी ताकत पैदा नही होती। वे बिना रीढके धड जैसे ढीले और अस्थिर रहते हैं।

९. **स्वदेशी** — स्वदेशीके लिअे जबानी वफादारी तो हम सभी प्रकट करते है, परतु अुसके लिअे मुसीबतें सहने और विलासमें कमी करनेको क्या सभी तैयार हैं? मशीनोके मालका मुकाबला करनेवाली चीजें अिस्तेमाल करने तक हमारा स्वदेशी-धर्म पहुचता होगा, परतु अपने गावोंके कारीगरोको मरनेसे बचानेके लिअे अुनके हाथके मोटे मालको भी प्रिय समझकर अिस्तेमाल करने, अुसमें दो पैसे ज्यादा लगाने पड़ें तो भी प्रेमसे लगाने तथा विदेशी अथवा शहरी मशीनोकी घातक स्पर्धामें आज वे जो पिसे जा रहे हैं अुससे हमारे स्वदेशी सिद्धान्तकी ढाल अडाकर अुनकी रक्षा करने तक क्या हमारा स्वदेशी-धर्म पहुचता है? मरते हुअे कारीगरोको प्रोत्साहन देने, अुनके कामको प्रतिष्ठा दिलाने और अुसमें सुधार करनेके लिअे हमें खुद अुनके काम करने चाहिये — यहा तक भी हमारा स्वदेशी-धर्म जाना चाहिये। अिसी दृष्टिसे अिस बात पर जोर दिया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति स्वय काते। फिर भी क्या हम अिस बातको हसीमें नही अुडा देते? तैयार खादी काममें लेते हैं, तो भी हमारी वृत्ति कैसी होती है? निर्वाह-वेतनका 'विचित्र और अव्यावहारिक' मापदण्ड रखकर खादीको महगी कर डालनेके लिअे हम चरखा-सघ पर आलोचनाके प्रहार करते रहते हैं, अुसकी तहमें जो स्वदेशीकी सूक्ष्म दृष्टि है, अुस दृष्टिसे अिस मापदण्डको देखनेको तैयार ही नही होते। शायद अप्रमाणित खादी अिस्तेमाल करनेको भी तैयार हो जाते हैं। और यदि सयोगसे कातने तक पहुचते हैं, तो भी खादीकेन्द्र अच्छी, बढिया और सस्ती पूनिया घर बैठे मुहैया नही करते, अिसके लिअे हम अुन पर हमेशा वाग्बाण चलाते रहते हैं। हमारा स्वदेशी-धर्म पीजने तक पहुचना चाहिये, अिसकी तो कल्पना करनेको भी हम तैयार नहीं होते।

हमारा स्वदेशीका पालन अैसा सुविधा देखनेवाला ही हो, तो फिर अुससे देशके गाव सजीव कैसे बनेंगे? सूतके तारमें से स्वराज्यकी ताकत कहासे पैदा होगी?

१० **अस्पृश्यता-निवारण** — यह सिद्धान्त भी हम अुससे स्वराज्यकी शक्ति पैदा हो अिस हद तक पालन करनेको तैयार नही होते। ज्यादासे ज्यादा हम हरिजनोका स्पर्श करने तक गये हैं। अुन्हे सार्वजनिक सभाओमें और रेलगाडियो वगैरामें सहन कर लेनेसे अधिक आगे हम नही बढे हैं।

अिसकी जडमें रहनेवाला अूच-नीचके भेदका जहर अकेले हरिजनोका ही जीवन हरण करता हो, सो बात नही। वह सारे समाजमें फैला हुआ है। गावोके मेहनती लोगोके साथ हमारे पढे-लिखे लोग कितनी तुच्छताका बरताव करते हैं? क्या हमारे अधिकाश धधे और व्यापार अुनके अज्ञानका लाभ अुठाकर अुन्हें धोखा देने पर आधार नहीं रखते? अुन्हें सुधरते और सभ्य बनते देखकर हमारे मुह अुतर नही जाते? विधर्मियो और विदेशियोके साथ भी हम जो तिरस्कार और अपमानका व्यवहार करते हैं, वह अैसा है जिसे कोअी भी स्वाभिमानी लोग सह नहीं सकते। मुसलमान हिन्दुओका

है और हम धर्मके नाम पर अुनसे झगडा करनेको कमर कस लेते है। परन्तु यह विचार नही करते कि यदि हम अिन सबके प्रति सच्चे धर्मका पालन करते, तो गरीब लोग जरा-जरासी बातमें आसानीसे परधर्ममें क्यो चले जाते? तब तो हमारे मनमे हमेशा यह भरोसा रहता कि हमारा रुपया खरा है, हमारे लोगोको कोअी फुसलाकर या ललचाकर परधर्ममें खीच ही नही सकता। परतु हमारे हरिजन, भील, रानीपरज आदि कितनी आसानीसे अीसाअी बन गये है? यदि हम सच्चा हिन्दूधर्म पालन करनेवाले हो, तो अिस दशा पर हमें शरम आये और हम अुनके प्रति अपना व्यवहार अैसा बना लें जो धार्मिक लोगोको शोभा दे। अुसके बजाय हम करते क्या है? राज्यसत्ताके भयसे पादरियोके साथ तो हमारी लडनेकी हिम्मत नही होती, केवल मनमें हम अुन्हे गालिया देते है, और अपनी सारी बहादुरी गरीब हरिजनो पर जुल्म बढानेमे बताते है।

धर्म-पालनका यह तरीका नही हो सकता। अैसे धर्माभिमानसे न स्वधर्मियोको बलवान बनाया जा सकता है, न विधर्मियोके साथ प्रेम-सबध स्थापित किया जा सकता है। और जहा ये दोनो न हो वहा स्वराज्यके दर्शन होनेकी आशा कैसे रखी जाय?

"सिद्धान्तोको हम केवल नीतिके रूपमें ही मानेंगे," हमारे अिस कथनका यही अर्थ है। ग्यारहो सिद्धान्त आत्मबलका तेज गोला-बारूद है, फिर भी हमारे हाथमें आते ही वे निकम्मे बन जाते है। राजनीति और युक्ति-प्रयुक्तिके पुजारी हम सिद्धान्तोको भी अपनी अेक युक्ति ही बना देते है, अपनी राजनीतिका अेक दाव बना डालते है। अैसी हालतमें ये सिद्धान्त हममे सत्याग्रहकी शक्ति कैसे पैदा कर सकते है? जिसे मनुष्य प्राणोको सकटमें डालकर भी पालन करने जैसा सिद्धान्त न माने, परतु अेक युक्ति या दाव ही माने, अुसके लिअे वह सिरकी बाजी लगानेको कभी तैयार हो सकता है? और अिस तरह वह तैयार न हो तब तक अुसके वचन या कर्ममें बल कैसे पैदा हो सकता है? शौर्य कैसे प्रकट हो सकता है?

अिसीलिअे — अिस सत्याग्रह-बलकी कमीके कारण ही, अिन सिद्धान्तोका गोला-बारूद निकम्मा हो जानेके कारण ही, हमारी स्वराज्यकी लडाअिया सफल नही हो पाती। हम कुछ हद तक सत्याग्रहका दिखावा करते है, परन्तु जब सच्ची परीक्षाका समय आता है, तब दिखावेकी कलअी खुल जाती है और हमारी कमजोरी सामने आ जाती है।

हमारे जैसे झूठे सिपाहियोके कारण स्वराज्यकी लडाअिया हमेशा पिछड जाती है, यह देखकर सेनापतियोको कैसा लगता होगा? वे घबराकर कअी बार कहते है "यदि अभी तक हमारी लडाअीके फलस्वरूप जिन सिद्धान्तोमें आपकी श्रद्धा न जम पाअी हो, अब भी अुन्हें केवल नीतिके रूपमें ही आप मानते हो, तो अुन्हें छोडकर आप जिसे श्रद्धापूर्वक मानते हो अुस मार्गको क्यो नही अपना लेते?" परन्तु सेनापति सैनिकोका कभी तिरस्कार कर सकता है? और वे जानते है कि हमारी अश्रद्धा जितनी हमारे झूठेपनके कारण है अुससे अधिक हमारी दुर्बल सहनशक्तिके कारण है। अिसलिअे वे हमारे प्रति धीरज बनाये रखते है। वे अब भी आशा रखते है कि सत्याग्रह-शक्तिका सीधा अनुभव होने पर हममें सिद्धान्त-बलका अुदय होगा।

प्रवचन ६७

हमारे सेनापति

आजकल हम अपने ग्यारह सिद्धान्तोकी बात कर रहे है। अुसमें मैंने अिन सिद्धान्तोके लिअे 'आत्मबलका गोला-बारूद' शब्दोका अनेक बार प्रयोग किया है। सिद्धान्तोको हम किस प्रकार समझें और अुनका पालन करें तो अुससे हममें आत्मबल पैदा हो सकता है, अुस बलके द्वारा लडाअिया लडते-लडते हम किस प्रकार स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं और लोगोमें किस तरह स्वराज्य-शक्ति पैदा हो सकती है, यह हम आज देखेंगे।

जब हमारे सामने सत्य, अहिसा आदि सिद्धान्तोकी बात रखी जाती है, तब वह किसी छाप और तिलकधारी, खीर-मालपुअेके भक्त साधुबाबाकी तरफसे नही आती, परतु स्वराज्यकी लडाअीके अेक सेनापतिकी तरफसे आती है, यह हम नही भूल सकते। सिद्धान्तोके जो अर्थ और जो भाव अुसके मनमें हो, वही हमें अपनाने चाहिये। हमने स्वय बातूनी भक्तो और गजेडी जोगियोको देखकर अुन सिद्धान्तोकी जो चित्र-विचित्र कल्पनाअें मनमें बनाअी हो, अुन परसे अुनका मूल्याकन नही करना चाहिये।

आअिये, हमारे सेनापतिको जरा अधिक पहचान लें। वे भक्त है, अीश्वरका नाम लेते है और रात-दिन अुसकी पूजा करते है। परन्तु वह अीश्वर कोअी देवालयोका देवता नही, बल्कि भारतकी झोपडियोमें रहनेवाला दरिद्र-नारायण है। अुसे पेटभर नैवेद्य पहुचाना ही अुसकी पूजा है। वे तपस्वी है, परतु अुनका तपोवन हिन्दुस्तानके सात लाख गाव है। वे योगी है, परतु अुनकी धूनी सत्याग्रहकी है और अुस धूनीके तापमें वे स्वराज्यकी साधना कर रहे है। वे सन्यासी है और हर क्षण मोक्षके लिअे छटपटाते हैं, परन्तु जब तक भारतकी कोटि कोटि दीन-हीन जनता स्वतत्र होकर अैसी ही छटपटाहटकी अधिकारिणी नही बन जाती, तब तक अुन्हें मोक्षसुख भी अच्छा नही लगता। वे कौपीनधारी है, परतु अुनकी कौपीनके पीछे अर्धनग्न दरिद्रोके साथ अेकरूप हो जानेकी आतुरता है। वे माला फेरते हैं, परतु अुनकी माला चरखेके चक्रकी है। अुसे चला-चलाकर वे अुलटे रास्ते लगे हुअे जगतके लोगोको सीधी राह पर लानेकी कोशिश कर रहे है। वे अुपवास करते है, परतु अुनके अुपवास स्वराज्यके कार्यके लिअे अपना आत्मबल अधूरा सिद्ध होनेके कारण अधीर बनी हुअी आत्माका आर्तनाद है। वे प्रार्थना करते है, परतु अुनकी प्रार्थना यह है कि 'हे प्रभो, मुझे अितना प्रेम और अितनी सहन-शक्ति दे कि मै अग्रेजोके स्वार्थसे शुष्क बने हुअे हृदयको भी आर्द्र बना सकू।' वे भगवानकी अगम्य लीलाकी महिमा सदा गाते है, परतु अुनका गाना भजनोमें पूरा नही हो जाता। अुनका भजन अुनकी श्रद्धा है, अुनका आशावाद है। "अेक दिन अकल्पित रूपमें अीश्वर जरूर कृपावृष्टि करेगा। अुस दिन निराशाके बादल बिखर जायगे और आशाका

प्रभात निकल आयेगा। आज भारतीय जनताको किसी भी तरह सत्याग्रहका शौर्य नही चढता। परतु अुस दिन वह अपने-आप चढने लगेगा, क्योकि अुसके भीतर आत्मा है और आत्मामें वह शौर्य सुप्त रूपमें विद्यमान है। अुस दिन अग्रेज अपने-आप पिघलने लगेगे, क्योकि सत्याग्रहके सामने पिघलना आत्माका स्वभाव है। मैं नही जानता कि अीश्वर वह कृपावृष्टि कब करेगा। परतु यह आशावाद मुझसे कभी छूटता नही कि कभी न कभी वह जरूर करेगा। अिसलिअे प्रयत्न करनेमें मुझे कभी थकावट नही होती। पीछे हटते हटते भी मैं फिर आशाके साथ काममें लग जाता हू।" यह भजन अुनका रोम-रोम सदा गाता है। अिसलिअे जब दूसरे पीछे हटते हैं, तब वे सदा आगे ही आगे दौडते हैं। दूसरे जब अुदासीमें डूब जाते है, तब वे सदा आनन्दी रह सकते है। दूसरे बूढे होते जाते हैं, तब वे सदा नौजवान बनते जाते हैं। औरोको मार्ग नही सूझता, तब अुन्हें प्रत्येक नअी परिस्थितिके लिअे नया मौलिक मार्ग सूझे बिना कभी नही रहता। अिसीलिअे वे महात्मा हैं। अुनकी श्रद्धा हम सबमें श्रद्धा भरती है। अुनके प्राण हम सबमें प्राणोका सचार करते हैं। वे हमें मिट्टीसे मनुष्य बनाते हैं।

यह मैंने किसका चित्र खीचा है? अिसमें शका ही नही कि यह पूज्य गाधीजीका चित्र है। परन्तु यह न समझिये कि यह अकेले अुन्हीका चित्र है। अैसे दूसरे भी अनेक सेनापति हमारे सौभाग्यसे अीश्वरने हमे दिये हैं। वे सब कौपीन पहननेवाले नही हैं, अुठते-बैठते वे मुहसे रामनाम नही लेते और अुपवास भी नही करते। परतु अिससे कोअी भुलावेमें न आये। अुनके अन्तरकी परीक्षा करेंगे, तो मालूम होगा कि अुनके हृदय भी अिसी मिट्टीसे बने हैं। अुतनी ही गहरी दरिद्र-नारायणकी भक्ति, अुतनी ही तीव्र स्वराज्य-योगकी भावना, अुतना ही प्रबल सत्याग्रहका शौर्य, अुतना ही प्रखर आशावाद — अिन सारे तत्त्वोंसे अुनके तन-मन-प्राणकी रचना हुअी है।

परतु अुनका बाहरी रूप कौपीनधारीका न होनेसे हम यह माननेकी भूल कर बैठते है कि वे गाधीजीकी अपेक्षा किसी दूसरी ही मिट्टीके बने हुअे है। हम मान लेते है कि वे गाधीजीकी अपेक्षा हमारी ही जातिके अधिक है, अर्थात् हमारी तरह वे भी युक्ति-प्रयुक्ति और राजनीतिके ही अुपासक है। गाधीजी सत्य, अहिसा आदि सिद्धातोकी बात करते हैं, तब तो हम यह माननेको तैयार हो जाते है कि यह अुनके दिलकी बात है, परतु जब दूसरे सेनापति वही बात करते है, तब हम अेक-दूसरेकी तरफ देखकर आंखोकी पुतलिया घुमाते है। नेतागण सिद्धान्तोको अेक दावके रूपमें ही सामने रखते है, ये अेक तरफ गाधीजीके बलको बोतलमें अुतारकर देशके काममें अुसका अुपयोग करते है और दूसरी तरफ हम सब सत्य और अहिसाके पालनेवाले साधु लोग है, अिस भ्रममें सरकारको जल्लाद लोगोको अुनकी मारसे बचा रहे है, यही जब हम पुकार सुना देते है और हमारे नेता कितने घुटे हुअे है, यह कहकर मन ही मन हम अुनकी महत्ताका अंकन करते है।

अिस प्रकार हम अपनी होशियारी और चतुराअीमें मग्न रहते है। परन्तु अुसका परिणाम यह होता है कि हम खुद अपने [illegible] पानी अुडेलते है। गाधीजीको

हमने शुरूसे ही साधुबाबाओमे गिन लिया है। "वे तो सिद्धान्तोकी बात करेंगे ही, वे राजनीतिके व्यवहारको क्या समझें? परतु सिरफिरे आदमी हैं, अिसलिअे जब लडनेके लिअे कहे तब अुतनी देरके लिअे अुन्हें निभाकर हमें लडना चाहिये। जब वे सिद्धातो पर जोर दे, तब हम केवल बाहरसे सिर हिलाये, परतु अुन पर गभीर कभी न बनें।" अिस प्रकार हम अुनका गोला-बारूद बिगाड देते हैं। और दूसरे नेता सत्य-अहिसाकी बातें करते हैं, तो अुसे राजनीतिका दाव समझकर अुनके गोला-बारूदको भी हम गीला करके निकम्मा बना देते हैं।

अैसा न करके जब वे सिद्धान्तोकी बातें कहते है, तब अुनके मनमें सचमुच क्या क्या भाव क्रीडा करते हैं, अिसे समझकर हम अुन्हे अपनायें, अिसीमें हमारा और देशका कल्याण है। तो आअिये, अब नेताओके हृदयोमें जरा डुबकी लगायें और ग्यारह सिद्धान्त वहा किस रूपमें विद्यमान है, अिसका परिचय करें।

प्रवचन ६८

सत्यमें कौनसा बल है?

सत्य नारायण है, आत्माका गुण है। अग्निमें जैसे गरमी रहती है, वैसे ही मनुष्यमें यह गुण स्वभावत रहता है। अिसलिअे प्रत्येक मनुष्य स्वभावसे ही सत्यका पुजारी होता है। सत्यके सामने अुसका मस्तक झुके बिना रह ही नही सकता। झूठा आदमी कितने ही हथियारोसे सुसज्जित हो और कैसा ही राज्यसत्ताका कवच पहने हुअे हो, चाहे जैसी राजनीतिके अिद्रजालमें अुसने अपना असली रूप ढक लिया हो, परतु सत्यके सामने वह शरमाता है, लज्जित हो जाता है, अुसके हाथोमें हथियार काममें लेनेका जोर नही रह जाता, अुसके मनसे राजनीतिका कपट फटकर निकल जाता है और अुसके दिलमें वैरका जहर शात हो जाता है।

यह सुनकर आप हसिये नही, अिसे श्रद्धासे मानिये। अपने निजी जीवनमें, परिवारमें, धधेमें, समाजमें अिसकी जाच कीजिये। जहा देखें वहा क्या सत्यनिष्ठ मनुष्यके लिअे आदर नही है? अुसके साथ लोगोका बरताव क्या दूसरी ही तरहका नही होता? दूसरोके धन या बलसे दबकर लोग जो काम करनेको तैयार नही होते, वही अुसके अेक वचनसे करनेको तैयार नही हो जाते? अुसकी आखें देखकर झूठे लोग क्या चुप नही हो जाते? गुडे और शरारती सयाने और आज्ञाकारी नही बन जाते? अुलटे लोग सीधे नही हो जाते?

अिसका परिचय गाधीजी जैसोके जीवनमें तो क्षण-क्षण पर मिलता है। परतु आज आप अिसे देखनेके लिअे अुनकी तरफ न जाअिये। क्योकि तब आपको व्यर्थ ही यह भ्रम होगा कि यह अुनके महात्मापनका प्रभाव है। आप अपने आसपास — घरमें, मुहल्लेमें, गावमें ही नजर डालिये। कोअी न कोअी सत्यका अुपासक वहा होता ही है। किसी जगह कोअी पुरुष होगा, किसी जगह कोअी स्त्री होगी, तो किसी जगह

कोअी बालक भी हो सकता है। अुसके सत्यबलसे अैसे ही न मानने लायक परिणाम निकलते हैं।

सत्यके बलका अैसा दर्शन आपको प्रत्यक्ष हो, तो भी क्या आप माननेको तैयार नही होंगे कि अन्य बलो जैसा ही यह भी अेक बल है? सत्य गुरुत्वाकर्षणके जैसा ही, बिजलीके जैसा ही अेक बल है। अुनसे अधिक अद्‌भुत गुणोवाला और अधिक सूक्ष्म तथा अिसीलिअे अधिक तेज यह बल है।

यह तो आप फौरन मान लेते हैं कि सख्त जमीन अुससे भी अधिक सख्त कुदालीसे खोदी जाती है, परन्तु आपने यह भी देखा होगा कि सेवाके पीछे पागल बना हुआ मनुष्य हाथमें कुदाली लेकर जब आगे हो जाता है और पुकार लगाता है, तब घर-घरसे लोग कुदालिया लेकर निकल पडते हैं और खेलते-खेलते गावकी सुन्दर सडक बना देते हैं। सत्यका यह बल न आया होता, तो लोगोमे अुत्साह पैदा न होता और कुदालिया घरोमें से अपने-आप बाहर न निकली होती। आप यह तो मानते हैं कि किसी नल पर बिजलीका बल जोड देनेसे वह पानीका प्रपात बहा देता है। परन्तु क्या आपने यह दृश्य कभी नही देखा कि अेक सेवा-परायण मनुष्य जब आवाज लगाकर आगे हो जाता है, तब घर-घरसे लोग पानीकी बाल्टिया लेकर निकल पडते हैं। जो लोग अब तक मुह बाये आगका तमाशा देखते रहे थे, अेक भावनाहीन अव्यवस्थित टोलेके समान थे, वे तुरन्त मनुष्य बन जाते हैं, व्यवस्थित, अेकदिल और दृढ निश्चयवाला सघ बन जाते है और खेलते-खेलते आग बुझा देते हैं। अच्छी तरह जोडी हुअी बिजलीने जो काम किया, वही काम — अमुक गैलन पानी खीचनेका काम — क्या अिस दूसरे प्रकारके बलने भी नही किया?

कोअी थानेदार या तहसीलदार गावमें जाकर शोर मचाये और लोगोको गालिया दे, तो अुससे गावके लोग दब जाते है, बडे बडे तीसमारखा तक घबरा जाते हैं, यह आप रोज देखते हैं और अिसीलिअे यह मानते हैं कि राज्यसत्तामें बल है। सत्ताके सामने सयानापन क्या काम देता है? — यह कहकर आप चुप रहते है। परन्तु गावमें अेकाध आदमी भी सत्यके बलवाला निकल पडता है और हिम्मतसे बोलता है, तो वह अधिकारी अुसके तेजके सामने घिघिया जाता है। लोग भी स्वाभिमानकी रक्षा न कर सकनेके लिअे शरमाते हैं और मनुष्यकी तरह व्यवहार करने लग जाते हैं। अैसे दृश्य भले कभी-कभी ही देखनेको मिलते हों, परन्तु प्रत्येक गावके आगनमें किसी न किसी दिन अैसी घटना होनेका स्मरण प्रत्येक मनुष्य जरूर कर सकेगा। किस बलसे यह सारी हवा बदल जाती है? अुस आदमीके पास कोअी हथियार नही होता, कोअी सत्ता नही होती। अुस अफसरको यह डर भी नही रहता कि अुस आदमीके नेतृत्वमें विद्रोह करके गाववाले मुझे मार डालेंगे। वह अफसर चाहे तो आवाज लगानेवालेको पकड सकता है, मार सकता है। परन्तु सत्यबलके सामने सत्ताकी गुडागिरी लज्जित हो जाती है, अुसके भीतर सोअी हुअी निष्ठा, सदाचार, न्यायबुद्धि और देशभक्ति अुस आदमीके सत्यके प्रभावसे जाग्रत हो जाती है।

ये तो हुअे सार्वजनिक जीवनके दृष्टान्त। वे लवी गुलामीके कारण कभी-कभी ही देखनेको मिलते है, जैसे आषाढके घनघोर बादलोमें से सूर्यकी किरणें कभी-कभी ही चमक अुठती है। परतु पारिवारिक जीवनमें सत्यवलके अुदाहरण वहुत अधिक सख्यामें देखे जाते है। पति द्वारा अपनी पत्नीको दवानेकी घटनायें तो आप रोज देखते है, परतु जव अेक अवला सती अूचे स्वरसे सच्ची वात कहती है, तव क्रोधी, लपट, शराबी और अत्याचारी पति भी निस्तेज और असहाय जैसा वनकर नीचे देखने लगता है। अैसे दृश्य भी गाव-गाव और मुहल्ले-मुहल्लेमें कम नही देखे जाते। वडो द्वारा छोटोके दवाये जानेके दृश्य तो हम देखते ही है। परतु छोटे वच्चे भी जव सत्यकी सत्ताकी आवाज अुठाते है, तव गावको गुजा देनेवाला घरका कठोर वुजुर्ग भी अुसके सामने आदरसे सिर झुका लेता है। ये दृश्य भी अितने कम नही होते कि कभी देखनेमें ही न आवें। मालिककी डाटसे थर-थर कापनेवाले दुवलो* को तो सव लोग रोज ही देखते है। परतु कभी-कभी कोअी सच्चा खेत-मजदूर भी अूची आवाजसे कुमार्ग पर जानेवाले मालिकको अुलाहना देता है, तव अुसके सत्यके तेजके सामने मालिक जमीन कुरेदने लगता है। अैसे दृश्य भी अपने गावमें क्या आप सालमें दर्जन आधी दर्जन बार नही देखते?

अिस प्रकार अपने आसपास रोज देखने पर भी सत्यमें रहनेवाले तेज अथवा आत्मवलको न मानना क्या अैसा ही नही है, जैसे कोअी नासमझ वालक बिजलीके तारको सादा तार माननेका हठ करके अुसे पकडने लगे?

सत्य तो सारे जगतमें, आकाशमें वायुकी तरह, व्याप्त है। अुसमें अनत वल भरा होने पर भी वह वैसे ही नही दिखाअी देता। हवाको कोअी खीचे या दबाये तभी अुसमें रहनेवाला बल प्रगट होता है। पहियोमें हवाको भरते है, तब वह दौडती हुअी मोटरका भार अुठाती है। अिस शीतल मन्द मधुर वायु पर जब कुदरतकी गर्मी-सर्दीके शोषण काम करते है, तब वह भयकर आधीका रूप धारण करती है, छप्पर अुडा देती है, पेड अुखाड देती है और समुद्रमें जहाजोको अुलट देती है। सत्य भी अैसा ही है। अुसका बल तभी अुत्पन्न होता है, जब हम कोअी अुसका आग्रह पकडते हैं। जैसे बिजलीसे तावेका तार सचारित होना चाहिये, वैसे ही किसी मनुष्यका अथवा मनुष्योके किसी सघका जीवन सत्याग्रहसे सचारित होना चाहिये। तभी सत्यका बल प्रगट होता है और तभी अुस बलके सामने झूठे, अन्यायी, अत्याचारी, कितने ही बलवान हो तो भी, शरमिन्दा हो जाते है, लज्जित हो जाते है, अुनके अग ढीले पड जाते हैं। सत्ताके सामने सयानपन काम नही देता होगा, परन्तु सत्ताके सामने सत्याग्रह जरूर काम देता है। वह सत्ताको शरमिन्दा कर देता है, निस्तेज बना देता है, लज्जित कर देता है, चुप कर देता है। सत्याग्रह सत्ताके जैसा ही अेक बल है। वह सत्तासे अधिक सूक्ष्म, अधिक तेज, प्रकार और गुणमें अुससे भिन्न होते हुअे भी अेक स्पष्ट वल है। अर्थात् यदि हम अुस बलके गुण-धर्म अच्छी तरह पहचानें और अुससे अपने जीवनको

* दुबला नामक आदिम जातिके लोग, जो खेतोमें मजदूरी करके अपना निर्वाह करते है।

प्रचारित करें, तो वह अैसा विश्वासपात्र बल है कि अुससे गणितकी निश्चितताके साथ कल्पित परिणाम लाया जा सकता है।

अिस पर हमें झट विश्वास नही होता। दूसरोके अनुभवोको देखकर अुस पर विश्वास नही हो सकता। सत्याग्रहका स्वय अनुभव किये बिना अुस पर हमारी सजीव श्रद्धा बैठ ही नही सकती। चखे बिना मिश्रीकी मिठासमें हमारा विश्वास नही जमता। गाधीजीने सत्याग्रहके बलसे चम्पारनमें बिहार सरकारको लज्जित किया होगा, तो भी अुस घटनाका मूल्याकन हम अपनी अश्रद्धासे ही करेंगे। बिहारका गवर्नर दिलका कमजोर रहा होगा, अिसलिअे वह झुक गया, गाधीजीको पकडेंगे तो लोग विद्रोह कर देंगे, अिस डरसे सरकारने कदम पीछे हटा लिया होगा, वगैरा अर्थ हम लगायेंगे। जब तक हम स्वय सत्याग्रहका अनुभव नही करेंगे, तब तक हमारी अैसी अश्रद्धाकी मान्यताओको कौन दूर कर सकेगा? सत्याग्रहका बल पहचाननेके लिअे हमें स्वय अपने जीवनमें अुसका अनुभव करना होगा, परिचय करना होगा।

हमारे चाहे जो आग्रह करनेसे, चाहे जैसा हठ पकडनेसे अुपरोक्त परिणाम नही आयेगा। हम सचमुच सत्यका आग्रह रखेंगे, तो ही अुस सत्याग्रह-बलके सामने झूठे, अन्यायी और अत्याचारी लोग शरमायेंगे, ठडे पडेंगे। कभी-कभी हम कथित सत्याग्रह करते है, फिर भी अैसा परिणाम नही देखते। जाच करेंगे तो पता चलेगा कि अुस समय सत्याग्रहमें से 'सत्य' शब्द हमारे मस्तिष्कसे निकल जाता है। कुछ भी हठ करना, कुछ भी झगडा करना, अिसीको हम सत्याग्रहका नाम दे देते है।

कोअी विद्यार्थी, जो आवारोकी तरह मशहूर है और जिनके प्रतिदिनके जीवनमें देशभक्ति कभी देखी नही गअी, अिस वृत्तिसे पाठशालामें किसी राष्ट्रीय प्रसग पर हडतालका आन्दोलन छेडते है कि तूफान मचानेका अेक अच्छा मौका मिला है, तब पाठशालाके व्यवस्थापको पर अुसका कुछ भी असर नही होता। परतु अेक ही विद्यार्थी, जो नियमित और अुद्योगीके नाते मशहूर है और रोज गावके हरिजन-वासमें सेवा करनेका जिसका नियम भी सबको मालूम है, पाठशालाकी तरफसे चरखा-द्वादशीकी छुट्टी और अुत्सवके लिअे माग करता है, तब अुसकी मागमें, अुसके सारे बरतावमें, अुसकी सचाअी प्रगट होती है। व्यवस्थापको पर अुसका प्रभाव पडे बिना नही रहेगा। वे या तो अुसके सत्याग्रहके सामने झुक जायगे, और नही झुकेंगे तो भी गावके लोगोके सामने अपना पक्ष पेश करते समय अुनके मुह अुतर जायगे और अपनी आवाजमें ही अपने अपराधी होनेकी वे गवाही देंगे।

अथवा अेक और अुदाहरण घरमें से लीजिये। अेक बालककी घरमें चोरी करके [illegible] आदत सबको मालूम है। तालेमें से पेटा गुम हुआ देखकर मा अुस पर अिल्-जाम लगाती है। और लडका साधुपनका दिखावा करके अुसका खूब विरोध करता है, [illegible] गुस्सा होता है और 'सत्याग्रह' के तौर पर खानेसे अिनकार कर देता है। [illegible] 'सत्याग्रह' [illegible] होनेसे, [illegible] अुसके झूठा साबित होनेसे और [illegible]

ये तो हुअे सार्वजनिक जीवनके दृष्टान्त। वे लवी गुलामीके कारण कभी-कभी ही देखनेको मिलते हैं, जैसे आषाढके घनघोर बादलोमें से सूर्यकी किरणें कभी-कभी ही चमक अुठती हैं। परतु पारिवारिक जीवनमें सत्यबलके अुदाहरण बहुत अधिक सख्यामें देखे जाते हैं। पति द्वारा अपनी पत्नीको दबानेकी घटनायें तो आप रोज देखते हैं, परतु जब अेक अबला सती अूचे स्वरसे सच्ची बात कहती है, तब क्रोधी, लपट, शराबी और अत्याचारी पति भी निस्तेज और असहाय जैसा बनकर नीचे देखने लगता है। अैसे दृश्य भी गाव-गाव और मुहल्ले-मुहल्लेमें कम नही देखे जाते। बडो द्वारा छोटोके दबाये जानेके दृश्य तो हम देखते ही हैं। परतु छोटे बच्चे भी जब सत्यकी सत्ताकी आवाज अुठाते हैं, तब गावको गुजा देनेवाला घरका कठोर बुजुर्ग भी अुसके सामने आदरसे सिर झुका लेता है। ये दृश्य भी अितने कम नही होते कि कभी देखनेमें ही न आवें। मालिककी डाटसे थर-थर कापनेवाले दुबलो* को तो सब लोग रोज ही देखते हैं। परतु कभी-कभी कोअी सच्चा खेत-मजदूर भी अूची आवाजसे कुमार्ग पर जानेवाले मालिकको अुलाहना देता है, तब अुसके सत्यके तेजके सामने मालिक जमीन कुरेदने लगता है। अैसे दृश्य भी अपने गावमे क्या आप सालमें दर्जन आधी दर्जन बार नही देखते?

अिस प्रकार अपने आसपास रोज देखने पर भी सत्यमें रहनेवाले तेज अथवा आत्मबलको न मानना क्या अैसा ही नही है, जैसे कोअी नासमझ बालक बिजलीके तारको सादा तार माननेका हठ करके अुसे पकडने लगे?

सत्य तो सारे जगतमें, आकाशमें वायुकी तरह, व्याप्त है। अुसमें अनत बल भरा होने पर भी वह वैसे ही नही दिखाअी देता। हवाको कोअी खीचे या दबाये तभी अुसमें रहनेवाला बल प्रगट होता है। पहियोमें हवाको भरते हैं, तब वह दौडती हुअी मोटरका भार अुठाती है। अिस शीतल मन्द मधुर वायु पर जब कुदरतकी गर्मी-सर्दीके शोषण काम करते हैं, तब वह भयकर आधीका रूप धारण करती है, छप्पर अुडा देती है, पेड अुखाड देती है और समुद्रमें जहाजोको अुलट देती है। सत्य भी अैसा ही है। अुसका बल तभी अुत्पन्न होता है, जब हम कोअी अुसका आग्रह पकडते हैं। जैसे बिजलीसे ताबेका तार सचारित होना चाहिये, वैसे ही किसी मनुष्यका अथवा मनुष्योके किसी सघका जीवन सत्याग्रहसे सचारित होना चाहिये। तभी सत्यका बल प्रगट होता है और तभी अुस बलके सामने झूठे, अन्यायी, अत्याचारी, कितने ही बलवान हो तो भी, शरमिन्दा हो जाते हैं, लज्जित हो जाते हैं, अुनके अग ढीले पड जाते हैं। सत्ताके सामने सयानपन काम नही देता होगा, परन्तु सत्ताके सामने सत्याग्रह जरूर काम देता है। वह सत्ताको शरमिन्दा कर देता है, निस्तेज बना देता है, लज्जित कर देता है, चुप कर देता है। सत्याग्रह सत्ताके जैसा ही अेक बल है। वह सत्तासे अधिक सूक्ष्म, अधिक तेज, प्रकार और गुणमें अुससे भिन्न होते हुअे भी अेक स्पष्ट बल है। अर्थात् यदि हम अुस बलके गुण-धर्म अच्छी तरह पहचानें और अुससे अपने जीवनको

---

* दुबला नामक आदिम जातिके लोग, जो खेतोमें मजदूरी करके अपना निर्वाह करते हैं।

सचारित करें, तो वह अैसा विश्वासपात्र बल है कि अुससे गणितकी निश्चितताके साथ कल्पित परिणाम लाया जा सकता है।

अिस पर हमें झट विश्वास नही होता। दूसरोके अनुभवोको देखकर अुस पर विश्वास नही हो सकता। सत्याग्रहका स्वय अनुभव किये बिना अुस पर हमारी सजीव श्रद्धा बैठ ही नही सकती। चखे बिना मिश्रीकी मिठासमें हमारा विश्वास नही जमता। गाधीजीने सत्याग्रहके बलसे चम्पारनमें बिहार सरकारको लज्जित किया होगा, तो भी अुस घटनाका मूल्याकन हम अपनी अश्रद्धासे ही करेंगे। बिहारका गवर्नर दिलका कमजोर रहा होगा, अिसलिअे वह झुक गया, गाधीजीको पकडेंगे तो लोग विद्रोह कर देंगे, अिस डरसे सरकारने कदम पीछे हटा लिया होगा, वगैरा अर्थ हम लगायेंगे। जब तक हम स्वय सत्याग्रहका अनुभव नही करेंगे, तब तक हमारी अैसी अश्रद्धाकी मान्यताओको कौन दूर कर सकेगा? सत्याग्रहका बल पहचाननेके लिअे हमें स्वय अपने जीवनमें अुसका अनुभव करना होगा, परिचय करना होगा।

हमारे चाहे जो आग्रह करनेसे, चाहे जैसा हठ पकडनेसे अुपरोक्त परिणाम नही आयेगा। हम सचमुच सत्यका आग्रह रखेंगे, तो ही अुस सत्याग्रह-बलके सामने झूठे, अन्यायी और अत्याचारी लोग शरमायेंगे, ठडे पडेंगे। कभी-कभी हम कथित सत्याग्रह करते हैं, फिर भी अैसा परिणाम नही देखते। जाच करेंगे तो पता चलेगा कि अुस समय सत्याग्रहमें से 'सत्य' शब्द हमारे मस्तिष्कसे निकल जाता है। कुछ भी हठ करना, कुछ भी झगडा करना, अिसीको हम सत्याग्रहका नाम दे देते हैं।

कोअी विद्यार्थी, जो आवारोकी तरह मशहूर हैं और जिनके प्रतिदिनके जीवनमें देशभक्ति कभी देखी नही गअी, अिस वृत्तिसे पाठशालामें किसी राष्ट्रीय प्रसग पर हडतालका आन्दोलन छेडते हैं कि तूफान मचानेका अेक अच्छा मौका मिला है, तब पाठशालाके व्यवस्थापको पर अुसका कुछ भी असर नही होता। परतु अेक ही विद्यार्थी, जो नियमित और अुद्योगीके नाते मशहूर है और रोज गावके हरिजन-वासमें सेवा करनेका जिसका नियम भी सबको मालूम है, पाठशालाकी तरफसे चरखा-द्वादशीकी छुट्टी और अुत्सवके लिअे माग करता है, तब अुसकी मागमें, अुसके सारे बरतावमें, अुसकी सचाअी प्रगट होती है। व्यवस्थापको पर अुसका प्रभाव पडे बिना नही रहेगा। वे या तो अुसके सत्याग्रहके सामने झुक जायगे, और नही झुकेंगे तो भी गावके लोगोके सामने अपना पक्ष पेश करते समय अुनके मुह अुतर जायगे और अपनी आवाजमें ही अपने अपराधी होनेकी वे गवाही देंगे।

अथवा अेक और अुदाहरण घरमें से लीजिये। अेक बालककी घरमें चोरी करके खानेकी आदत सबको मालूम है। ताकमें से पेडा गुम हुआ देखकर मा अुस पर अिल-जाम लगाती है। चोर लडका साधुपनका दिखावा करके अुसका खूब विरोध करता है, रोता है, गुस्सा होता है और 'सत्याग्रह' के तौर पर खानेसे अिनकार कर देता है। अुसके अैसे 'सत्याग्रह' रोजके होनेसे, रोज अुसमें अुसके झूठा साबित होनेसे और भूख

लगने पर सत्याग्रहको भूल जानेसे मा पर कोअी असर नही होगा। घरके दूसरे आदमियोके सामने भी माका हृदय लज्जा क्यो अनुभव करेगा? परतु अेक दूसरे लडकेका अुदाहरण लीजिये। वह सच बोलनेवाला है, कहना माननेवाला है, सयाना और विवेकी है। वह छात्रालयमे रहता है। वहा अुसके हाथसे काचकी रकाबी टूट जाती है। वह गृहपतिसे सही बात कह देता है। गृहपति बहुत गहरा आदमी नही है। क्रोधी है। वह क्रोधमें आकर अुसे कडी डाट पिलाता है। लडका दु खी होता है। अेक समयका खाना छोडकर क्षतिपूर्ति करनेके लिअे वह सत्याग्रह करता है। गृहपति कितना ही सख्त हो, तो भी अिस घटनासे अुसका मुह अुतरे बिना नही रहेगा। छात्रालयकी सस्थामें यह भाव प्रत्येकके मुह पर छा जायगा कि अुस विद्यार्थीकी योग्यता अूची और गृहपतिकी नीची है और अुसके असरसे गृहपति शरमिन्दा दिखाअी देगा। वह मुहसे शायद स्वीकार न करे, परतु अुसकी आखोमें, अुसके प्रत्येक हावभावमें यह असर दिखाअी दिये बिना नही रहेगा।

आग्रह वास्तवमें सत्यका ही हो, तो सामनेवाला अन्यायी मनुष्य लज्जित हुअे बिना रहेगा ही नही। जैसे बडे दियेके सामने छोटा दिया मन्द पड जाता है, अैसा ही यह अेक वैज्ञानिक नियम है। अनुभव और प्रयोगसे ही अैसी प्रतीति हो सकती है। हम सब सेवकोको अपने जीवनमें प्रयोग करके यह श्रद्धा दृढ बना लेनी चाहिये, क्योकि सेवाका मार्ग हमेशा सुख-शातिका नही होता। अुसमें सत्याग्रहके युद्ध भी करने पडते है।

सत्यके बलमें जैसे झूठेको शरमिन्दा और ढीला करनेका गुण है, वैसे अुसका अेक और अद्भुत गुण भी जाननेके लायक है। सत्याग्रही छोटा हो या बडा, अेक हो या अनेकका बना हुआ सघ हो, अुसका सत्याग्रह अेकसा तेज असर पैदा करता है। सख्या या शरीर-बलके साथ सत्याग्रहका कोअी सबध नही है। छोटे दियेका प्रकाश भी अुतना ही और बडेका भी अुतना ही — अैसी यह विचित्र बात है। परतु जड दियेकी अपेक्षा सत्यके दियेके गुणधर्म बहुत ही भिन्न होते है। अग्रेजी सल्तनतके जुल्मके विरुद्ध सारा हिन्दुस्तान सत्याग्रह करता है, तब अुससे सल्तनत शरमिन्दा होती ही है। परतु अिस जबरदस्त सल्तनतके खिलाफ अेकाध महात्मा गाधी जैसा सत्यप्राण मनुष्य जब सत्याग्रह छेडता है, तो अुससे भी वह अुतनी ही शरमिन्दा होती है, यह हम बहुत बार देखते है। हमारे देशमें बडे-बडे सामुदायिक सत्याग्रहोने सरकारको अच्छी तरह नीचा दिखाया है। परतु किसी किसी व्यक्तिगत सत्याग्रहीके शुद्ध सत्याग्रहने भी अुसका तेज कम हरण नही किया।

सत्यके बलका यह परिचय भी जीवनमें अनुभव और प्रयोग करनेसे ही मिल सकता है। हम सेवक अैसी श्रद्धा बना सकें, तो हमारी सेवाशक्ति कितनी बढ जाय? अकेले होने पर भी हम यदि सच्चा सत्याग्रह करना जानते हो, तो सारी हुकूमतको हिला देनेकी शक्ति हममें पैदा हो सकती है। अिसे हम समझ ले तो हमारा आत्म-विश्वास कितना बढ जाय?

ग्यारह सिद्धान्तोमें जब सत्य पर जोर दिया जाता है, तब आप यह कहकर अुसकी हसी न अुडाअिये कि वह केवल सत्यनारायणकी कथा कराकर प्रसाद खानेकी बात है। वह हमारे सामने अेक अुग्र और तेज युद्धबलके रूपमें ही पेश किया जाता है। सैनिक बलसे किसी अत्याचारी तत्रको ढीला बनाया जा सकता है, वही परिणाम सत्याग्रहके बलसे भी लाया जा सकता है। पहली बात आप फौरन मान लेते है, परतु दूसरी बात कोअी कहता है तो आप अुसके सामने अविश्वासभरी आखोसे देखने लगते है। हम अनुभव और प्रयोग करें तभी यह अविश्वास मिट सकता है। तभी हम मान सकते हैं कि वह बल हमारी जनता आजमाये, तो अुसके तेजके सामने जालिमका मुह अुतर जायगा और अुसके हाथमें से जुल्मका हथियार गिर पडेगा। हम थोडेसे सेवक भी यह बल धारण कर ले, तो यही परिणाम ला सकते है। हमारी सख्या कम होनेसे अिसमें कोअी फर्क नही पडेगा।

प्रवचन ६९

अहिंसामें कौनसा चमत्कार है?

यह भी कोअी माला फेरने या चीटियोको आटा खिलानेकी बात नही है, यह भी अेक अलौकिक युद्धबलकी ही बात है। सत्यबलके साथ अहिंसा-बलको मिला दें, तो अुसमें कुछ अनोखा चमत्कार अुत्पन्न किया जा सकता है। अकेले सत्याग्रहमें झूठेको नीचा दिखानेकी शक्ति है, परतु यदि सत्याग्रहको अहिंसामय बना दें, तो झूठा प्रतिपक्षी पूरी तरह बदल जाता है। अुसके विचार बदल जाते हैं, अुसका हृदय-परिवर्तन हो जाता है। वह झूठा न रहकर सच्चा बन जाता है, वह शत्रु न रहकर हमारा मित्र बन जाता है। अकेले सत्याग्रहसे सरकार शरमा कर जुल्म करना बद कर सकती है, परतु अहिंसामय सत्याग्रह तो अुसे सरकार न रहने देकर सेवक बना देता है।

सैनिक बलसे मित्रराज्योने अिटलीको शत्रुपक्षसे अलग करके अपने पक्षमें आकर लडनेको मजबूर किया। सैनिक बल अिस परिणामको अपनी बडीसे बडी सिद्धि मानता है और अुस पर अभिमान करता है। अहिंसामय सत्याग्रह, अपने दूसरे ही ढगसे सही, परतु प्रत्यक्ष परिणाम तो यही अुत्पन्न करता है। वह भी प्रतिपक्षीको हमारे विरुद्ध लडनेसे रोक कर हमारे पक्षका बना देता है।

सैनिक बल शत्रुका गला पकड कर, अुसे अपने मातहत रहकर लडनेको मजबूर करता है, लेकिन अुसका हृदय तो पहले जैसा शत्रु ही रह जाता है और सदा भाग निकलनेका ही मौका देखता रहता है। अिसलिअे सैनिक बल अुसकी ओरसे कभी निश्चिन्त नही हो सकता। अुसे शत्रुकी गरदन हमेशा दबाये रखनी पडती है। अपना बल सतत अुस पर खर्च करते रहना पडता है।

अहिंसामय सत्याग्रह जो परिवर्तन लाता है, वह अिससे कही अूचे प्रकारका है। क्योकि वह प्रतिपक्षीको बलात् गला पकडकर बदलनेको विवश नही करता, परतु अुसके

हृदयका ही परिवर्तन कर देता है। वह अपनी अिच्छासे अपना असत्य पक्ष छोडता है और जैसे पहले हमारा दुश्मन था, वैसे ही स्वेच्छासे हमारा हिमायती, सहायक और मित्र बन जाता है।

अहिंसाका रसायन किस प्रकारकी क्रिया शुरू करता है? हम सत्यबलका आग्रह जितने जोरसे रखते है, अुतने ही जोरसे असत्यके पक्षका परदा-फाश होता है और वह नीचा देखने लगता है। परतु सत्याग्रह अहिंसापूर्ण हो तो वह शरमिन्दा ही नही होता, बल्कि दिलसे पछताने भी लगता है। अुसे भीतरसे सत्यपक्षके लिअे आदर अुत्पन्न होता है। वह सत्याग्रहीको दु ख देनेके लिअे स्वय अपनेको धिक्कारने लगता है। अब अुसकी हर तरहसे मदद करके अपने दिये हुअे त्रासका परिशोध किये बिना अुसके दिलको चैन ही नही पडता। अहिंसाके रसायनका काम करनेका यह ढग है। अुससे शत्रु शत्रु नही रहता, अितना ही नही परतु पछताकर वह हमारा मित्र बन जाता है। फिर अुसकी चिंता करने या अुसका गला पकड रखनेकी बात ही नही रहती। वह हमसे भी हमारा अधिक हितचिंतक बन जाता है, क्योकि अब तक किये हुअे द्रोहका प्रायश्चित्त करनेका अुसमें अधिक अुत्साह होता है।

अिटली तो जब तक मित्रराज्योका पजा अुसकी गरदन पर रहेगा, तब तक मनमे अपनेको अपमानित और हारा हुआ मानेगा। दुनियामें कोअी अुसके सामने देखे या अुसकी स्थितिका सहज ही अुल्लेख कर दे, तो वह लज्जित होगा, अुसे धरतीमें समा जानेकी अिच्छा होगी। वह दबावके वश होकर मित्रोके पक्षमें जोर लगायेगा, तो भी अुसमें कुछ दम नही होगा। परतु अहिंसामय सत्याग्रहका बल यदि हम अंग्रेज सरकार पर चला सके, तो अुस पर कैसा असर होगा? अुसे मानभग या पराजय जैसा बिलकुल नही लगेगा। अब वह बुरे कृत्यसे मुक्त हो गअी है और अिसका बदला सत्याग्रही भारतको सहायक बनकर दे सकती है, अैसा मानकर अुसके अत करणमें अुल्लास ही होगा, अभिमान ही होगा। दुनियामें कोअी अुसके सामने देखे तो अुसे शरम बिलकुल नही आयेगी। अुसे अैसा ही लगेगा, जैसे किसी सत्कृत्यके लिअे जनताकी तरफसे मिलनेवाली बधाअी जनार्दनके आशीर्वाद जैसी लगती है। अुसके मनमें यह अपेक्षा भी स्वाभाविक रूपमें रहेगी कि कोअी अुसे धन्यवाद और अभिनन्दनके दो शब्द कहेंगे। जिसके हृदयका अैसा परिवर्तन हो गया हो, अुसके मुह पर हार या अपमानकी शर्म क्यो होगी?

क्या अहिंसामें सचमुच अैसी शक्ति है? अहिंसाका अर्थ है 'न मारना'। न मारनेसे अैसा परिणाम कैसे पैदा हो सकता है?

जो मारनेकी शक्ति होते हुअे भी यह व्रत लेकर जीता है कि 'मै दुनियामें किसीको नही मारूगा', अुसके साथ ससारको दूसरी ही तरहका बरताव करना पडता है। अीश्वरने हमारी रचना ही अिस ढगसे की है कि अैसा व्रत पूरी तरह कोअी पाल नही सकता। जीनेके लिअे जाने-अनजाने कही न कही तो हम किसी न किसीको मारते ही है। परतु अपनी मर्यादामें रहकर भी हम अहिंसाका काफी हद तक पालन कर सकते

है। "किसी मनुष्यकी हिंसा तो मैं हर्गिज नहीं करूंगा", यह प्रतिज्ञा लेना और अुसे पालना हमारे बूतेके बाहर नहीं है। अैसा करना कठिन तो बहुत है, सिरका सौदा है, परन्तु असंभव नहीं है। लेकिन अगर हम सचमुच अिस प्रतिज्ञाका पालन करके दिखा दें, तो लोग हमारी तरफ अिज्जतसे देखे बिना नहीं रहते, हमारे प्रति अपने मनमें वैरभाव नहीं रख सकते और हम पर हाथ नहीं अुठा सकते। अर्थात् वे हाथ अुठाना चाहें तो हम अुन्हें रोकेंगे यह डर अुन्हें नहीं लगेगा, परन्तु विरोधमें हाथ न अुठानेकी जिसकी प्रतिज्ञा है, अुस पर हाथ अुठानेका विचार ही मनुष्यको नहीं आ सकता। अिसमें अुसके मनुष्यत्वकी हीनता मालूम होती है।

यह अहिंसाका महान बल है। हम किसीको मारने लगें तो वह हमें बदलेमें जरूर मारेगा, यह जितना निश्चित है अुतना ही निश्चित यह भी है कि 'मैं किसी भी मनुष्यको नहीं मारूंगा' अिस व्रतका पालन करनेवालेको कोअी मारने नहीं आयेगा। प्राचीन कालमें लोग गांवके चारों ओर परकोटा खींचकर अुसके बल पर अेक हद तक निश्चिन्त रहते थे। वे छाती ठोककर कह सकते थे कि 'जब तक शत्रु अिस परकोटेको तोड़ सकनेवाली तोपें नहीं लाता और जब तक परकोटेको लांघनेके साधन अुसके पास नहीं हैं, तब तक हमें किसीका डर नहीं है'। अुन्हें अनुभवसे मालूम रहता था कि भारीसे भारी तोपोंका बल तोड़ सके अुससे ज्यादा मजबूत हमने अपना परकोटा बनाया है, और अनुभवसे अुन्हें यह भी ज्ञात होता था कि अितनी अूंचाअीको लांघने लायक साधन आसपास किसीके पास हो नहीं सकते। अिसी प्रकार जिसे मनुष्य-जातिके स्वभावका अनुभव है, वह विश्वासपूर्वक अुसके अिस स्वभाव पर आधार रखकर निश्चिन्त रह सकता है कि अगर मैं किसी मनुष्यको न मारनेके व्रतका पालन करता हूं, तो यह संभव ही नहीं कि मुझे मारने आनेकी किसीको अिच्छा हो। किलेवालोंका अंदाज गलत साबित हो सकता है, लेकिन यह अन्दाज कभी गलत हो ही नहीं सकता। यदि अैसा हो तो क्या अहिंसा किले जैसा ही अेक रक्षात्मक बल नहीं हो जाती?

अिस बातके विरुद्ध आप तुरंत आपत्ति अुठायेंगे "अहिंसाके प्रतिज्ञाधारियोंको हमने बहुत बार मार खाते और दुःख सहन करते देखा है, अुन्होंने अहिंसाकी प्रतिज्ञा ली है, यह खयाल करके हिंसक लोग अुन्हें बचाते नहीं देखे जाते। वे सामना नहीं करते, अिससे तो हिंसक लोगोंकी बन आती है, अुन पर जुल्म करना अुनके लिअे आसान हो जाता है।"

"मैं किसी मनुष्यको मारूंगा नहीं", अिस तरह हमारे कहनेसे ही अत्याचारी कैसे बदल जायगा? भले हम छत पर चढ़कर बोले हों, अखबारोंमें हमने हस्ताक्षर करके घोषणा की हो, तो भी हिंसक लोग अथवा दुनियामें कोअी भी हमारी बात तुरंत तो कभी नहीं मान सकते। हम जब किसीको न मारनेका संकल्प करते हैं, तब अुसका यही अर्थ होता है कि "कुछ भी हो जाय, सारा धन और सम्पत्ति चली जाय, तो भी मैं किसीको नहीं मारूंगा, सुख चला जाय, आराम चला जाय

तो भी नही मारूगा, मेरा सिर चला जाय तो भी मै किसीको नही मारूगा।" अैसे अैसे कष्ट आ पडें तो भी हम अुन्हे सहन कर लें और फिर भी न मारनेकी प्रतिज्ञाको न छोडे—कष्ट सहन करे और वह भी हसते-हसते सहन करें, तभी लोगोको यह विश्वास होगा कि हम सचमुच अिस प्रतिज्ञासे वधे हुअे है। कष्ट सहन करते समय हम रो पडें, तव तो लोग हमारी निर्वलताको तुरत पहचान लेंगे और हमे मारनेमें अुन्हें मजा आयेगा। क्योकि अुन्हें विश्वास हो जायगा कि काफी वलका प्रयोग करके वे हमे वशीभूत कर सकेंगे।

और जो महा हिंसक होगे, महा अत्याचारी और अन्यायी होगे, वे तो तभी माननेको तैयार होंगे जव हम वहुत वडी मात्रामें और अेक नही परतु अनेक वार कसौटी पर खरे अुतरेंगे और फिर भी अपनी प्रतिज्ञा पर डटे रहेंगे। वे पहले तो हमे अपने गजसे ही नापेंगे, और यह विलकुल स्वाभाविक है। वे शुरूमे तो यही मान सकते है कि हम सिर्फ मुहसे न मारनेकी वात करते है, परतु अवसर मिल जाय तो मारे विना नही रहेंगे। हमारी सहिष्णुताको भी वे अेक हद तक ढोग ही मानेंगे अथवा हमारी अेक युक्ति ही समझेंगे। वहुत समय तक तो वे यही मानते रहेंगे कि हम लोगोकी नजरमे अपनेको अच्छा और अुन्हें वुरा दिखानेकी युक्ति कर रहे है।

अितना ही नही, हमारे हसते-हसते कष्ट सहन करनेसे भी हिंसक लोग हम पर विश्वास रखनेको तैयार नही होगे। वे हमारे जीवनमें हमारी अहिंसाके अधिक स्पष्ट चिह्न ढूढना चाहेंगे। वे वारीक नजरसे जाच करेंगे कि हमारी अहिंसाकी प्रतिज्ञा हमारे समूचे जीवनमें कहा तक प्रकट हुअी है। हम अूपरसे कुछ भी दावा करते रहें, कुछ भी घोषणा करते रहे, परतु यदि हमारे मनमें तिरस्कार और अीर्ष्या-द्वेषरूपी हिंसा छिपी होगी, तो हमारी वोलचालमें, हमारे हावभावमे, हमारी आखोकी पुतलियोमे वह प्रकट हुअे विना नही रहेगी। सामान्य लोगोकी अपेक्षा अुनमें यह पहचाननेकी कला वहुत अधिक विकसित होती है। अगर हमारे मनके गहरेसे गहरे कोनेमें भी अुन्हें हिंसाकी गध आ गअी, तो वे तुरत सावधान हो जायगे और यह जान लेंगे कि हमारी अहिंसा केवल धोखा देनेके लिअे है। हमारी कीमत वे यही आकेंगे कि मौका मिलते ही हम विल्लीकी तरह नाखून वाहर निकाले विना नही रहेंगे और फिर वे अुसी ढगसे हमारे साथ व्यवहार करेंगे। अिसमें हम अुनको दोष तो दे ही नही सकते। अुनके लिअे यही रवैया स्वाभाविक है। हम अैसी आशा तो रख ही नही सकते कि वदलेमें न मारनेवालेको मारनेमे शरम अनुभव करनेवाला मनुष्य-स्वभाव हमारे सवधमें अुन पर काम करेगा।

हमारी अहिंसाकी प्रतिज्ञा सच्चे अन्त करणकी होगी, तव तो अुसे हमारे प्रत्येक शव्दमें, हमारे प्रत्येक कृत्यमे, प्रेम और सेवाके स्पष्ट रूपमें प्रगट होना चाहिये। जव तक अिस रूपमें अुसके स्पष्ट दर्शन न हो, तव तक हिंसक लोग हमारी अहिंसा पर कैसे विश्वास करें? वे अपनी सलामतीके लिअे हमे शकाकी दृष्टिसे क्यो न देखें? वे केवल शकाकी नजरसे ही हमे नही देखेंगे, परतु हमें वार-वार अुलट-पलट कर, चिढा-कर, खिजाकर हमारी सच्ची परीक्षा लेंगे। अिस कडी परीक्षामें भी अुन्हें विश्वास हो

जाय कि हमारे मनके किसी कोनेमें भी हिंसाकी अिच्छा नही है, अीर्ष्या-द्वेष या तिरस्कार सूक्ष्म रूपमें भी नही है, अिस कसौटी पर चढने पर भी हमारे हृदयमें अुनके प्रति प्रेमके सिवा कोअी भाव नही होनेके स्पष्ट चिह्न वे देखें, और अिस वातका भी प्रत्यक्ष प्रमाण अुन्हें मिल जाय कि अुनकी तरफसे सताये जाने पर भी मौका पडने पर हम अुनकी सेवा करनेमें नही चूकते और अुनकी कठिनाअी देखकर हम खुश नही होते, तभी अुनके अन्त करणमें यह विश्वास जमेगा कि हम सचमुच ही अहिंसाका पालन करनेवाले है।

परतु जिस क्षण अुन लोगोके अन्त करणमे यह विश्वास हुआ कि हम सच्चे अहिंसावादी हैं, अुसी क्षण हमारे प्रति हिसा करनेका अुनका अुत्साह न जाने कहा अुड जाता है। अुनके मनमे हमारे लिअे अेक प्रकारकी अूची राय वन जाती है। अुनका अन्त करण अपने साथ हमारी तुलना करने लगता है, "मेरी भुजाओमें जोर हो, तो मैं अिसकी तरह दु ख सहन करनेको कभी तैयार न होअू। प्रतिज्ञाको तिलाजलि देकर विरोधीको मारने लगू। मैं तो चाहू तो भी अितना दु ख सहन नही कर सकता। वेशक, यह आदमी बदलेमें मारने नही आता, परतु अुसमें कष्ट सहन करनेकी शक्ति मुझसे वहुत अधिक है। अुसे अपनेसे निर्बल समझनेमें मैंने भूल की है। वह हथियार नही अुठाता, परतु मुझसे अधिक बलवान है। वह मुझसे ज्यादा वहादुर है। और सबसे वडी बात तो यह है कि वह मेरे द्वारा अितना सताये जाने पर भी मेरे प्रति प्रेम रख सकता है। सचमुच वह अिस योग्यतामें भी मुझसे श्रेष्ठ है।"

अिस प्रकार हमारे बारेमे अुनकी राय बदलने पर वे हमारे प्रति पहलेकी तरह हिंसाका व्यवहार कैसे रख सकते हैं?

तो किसीको न मारनेकी प्रतिज्ञाका हम पालन करे और अुसके साथ आनेवाले दु ख हसते-हसते सहन करें, तभी हिंसक लोगो पर हमारी अहिंसा-शक्ति अपने-आप वैसा अद्भुत शुभ प्रभाव अुत्पन्न करेगी, जैसा वसत ऋतु वनके वृक्षो पर करता है,— अर्थात् अुनका हृदय-परिवर्तन कर देगी। हमारे प्रति अुनके हृदयमे सम्मान पैदा होगा, प्रेम पैदा होगा और हमारे प्रति वैर छोडकर मित्रता रखनेमें ही अुन्हें आनन्द आयेगा।

यह कितनी सम्पूर्ण, शत-प्रतिशत विजय कही जायगी? कोअी भी हिंसक युद्ध अितनी सम्पूर्ण विजय कभी प्राप्त कर ही नही सकता।

अहिंसाके अिस अलौकिक बलको सत्याग्रहके वलके साथ मिला दें, तो अिन दो शुभ वलोका मिश्रण अितना शक्तिशाली वन सकता है कि अुसके द्वारा हम अपनी तमाम लडाअिया लड सकते हैं और जीत सकते हैं।

प्रवचन ७०

अिससे स्वराज्य मिलेगा?

अिस बलका परिचय व्यक्तिगत और कौटुम्बिक जीवनमें तो थोडा-बहुत सबको होता ही रहता है। अिस बलसे पत्निया अपने पतियोको, बच्चे अपने मा-बापको, और शिष्य अपने गुरुओको जीतते है। अैसे अुदाहरण सब कोअी याद कर सकेंगे। मनुष्य सत्य-अहिसाको जीवनमे विकसित करनेमें शिथिल रहते है, अिसलिअे अैसे अुदाहरण बडी सख्यामे तो नही मिलते। परतु अुनका सर्वथा अभाव भी नही होता।

अिससे जरा बडे क्षेत्रमें देखें, तो जाति जैसी सस्थाओमें भी कभी-कभी वे देखनेको मिलते है। जब कोअी आदमी जाति-बहिष्कारकी असुविधायें और मानहानि सहन करनेको तैयार हो जाता है और अुसका आधार सत्य तथा अहिसा पर होता है, तब अन्तमें जातिके समर्थ पच भी नरम पड जाते है।

राजाओके जुल्मोके विरुद्ध भी यह हथियार बहुत बार आजमाया गया है। सत्य-निष्ठ पुरुष अपने पास कोअी सत्ता न होने पर भी केवल अपने सत्यके प्रभावसे गलत रास्ते जानेवाले राजाओको अुलाहना देते थे और रोकते थे। अैसा हमारे देशमें हमेशा होता रहा है। आज भी देशीराज्योमें अिसका सर्वथा अभाव नही हो गया है। गावबाले राजाके दुराचार या अन्यायके विरोधमें गाव खाली करके चले गये है और बादमें राजा पछता कर लोगोको मना लाये है, अिसके अुदाहरण भी अितिहासमें और आजके रज-वाडोमें ढूढने पर मिल सकेंगे।

परतु अेक शका अुत्पन्न होती है — अैसी सब घटनाओका सम्बन्ध व्यक्तियोके साथ होता है। और अुनके बीच खूनकी या प्रेमकी कोअी गाठ भी होती है। रजवाडोमें भी, जहा राजाका व्यक्तिगत राज्य होता है, अुसके और प्रजाके बीच अेक प्रकारका कौटुम्बिक प्रेमसे मिलता-जुलता प्रेम-सबध होता है। अैसी परिस्थितिमें सच्ची बात पर डटे रहकर अहिसक रीतिसे कष्ट, अन्याय आदि सहन कर सकें, तो व्यक्तिके हृदयको हिला सकना असम्भव नही, यह तो समझमें आता है। परतु स्वराज्यकी लडाअीमें सत्य या अहिसा काम दे सकती है, यह सभव नही लगता। अेक कारण तो यह है कि अग्रेज शासक विदेशी है, अिसलिअे अुनके साथ हमारा कोअी प्रेम-सबध नही है। अुनका स्वभाव भी अैसा है कि वे हमारे साथ अैसा सबध कायम करनेके लिअे तुरन्त तैयार ही नही होते। अिसके सिवा, अुनका राज्य किसी अेक मनुष्यके द्वारा नही चलता कि अुसके हृदय पर हम असर पहुचाने जायें। वह तो हजारो हाथो और हजारो सिरोसे काम लेनेवाली अेक जड यत्र जैसी नौकरशाही है।

परतु नौकरशाही हो या और कोअी शाही हो — आखिर तो वह मनुष्योकी ही बनी होती है न? और अग्रेज कितने ही विदेशी क्यो न हो, परतु वे सत्य-अहिसाके प्रभावसे परे राक्षस नही बल्कि मनुष्य ही है।

दूसरी शका यह होती है कि हम खुद सत्य और अहिंसाका सपूर्ण पालन करनेकी शक्ति कहा रखते हैं? अेक बातमे अुनका पालन करने लगते है, तो दूसरीमें अुनका भग हो जाता है, और अेक आदमी अुनका पालन करता है, तो सौ आदमी अुनका भग कर देते है। अैसे हम लोग स्वराज्य जीतने लायक बल अपने सत्य और अहिंसामें से कैसे और कब पैदा कर सकेंगे?

सत्य और अहिंसाका अितना सपूर्ण पालन हम करेंगे, तब तो भव-बधनसे मुक्ति प्राप्त कर लेंगे। पराये राज्यके बधन तोडनेके लिअे आवश्यक बल पैदा हो, अितना सत्य-अहिंसाका पालन करना हमारे लिअे ज्यादा मुश्किल नही है। "स्वराज्यकी लडाअीकी हद तक तो सत्यको हम जरा भी नही छोडेंगे, हिंसाका मार्ग कभी नही अपनायेंगे, जो भी सकट आ पडेगा अुसे आनन्दसे सहन करेंगे" — अितना मर्यादित बल दिखाना हमारे लिअे जरा भी असभव नही, और वह हमारा बधन-मुक्तिका कार्य सिद्ध करनेके लिअे पर्याप्त सिद्ध हो सकता है। हमारे देशकी करोडो मूक जनता अितना बल दिखा सके, तब तक हमें अिंतजार करनेकी भी जरूरत नही है। हम सेवक काफी सख्यामें तैयार हो जाय, तो भी जनताकी लडाअी लड सकेंगे।

यह बात अब केवल अनुमानकी नही रही, परन्तु अनुभवकी हो गअी है। हमारे सेनापतियोने सत्य-अहिंसाके गोला-बारूदसे लडनेके अनेक व्यूह खोज निकाले है और अुनकी हमें तालीम दी है। अुनके नेतृत्वमें हम महान स्वराज्य-सग्रामकी अनेक लडाअियोके प्रयोग अब तक कर चुके है।

हमने अहिंसक सत्याग्रहो द्वारा सरकारको झुकाकर स्थानीय अन्याय दूर कराये हैं। हमने अन्यायी और अपमानजनक कानूनोका सविनय भग करके अुन कानूनो और अुन्हें बनानेवाली सरकारका तेज हरण किया है। असहयोग करके हम सरकारके तत्रको काफी ढीला कर सके हैं। जब हमने अपने नि शस्त्र युद्ध व्यक्तिगत रूपमें लडे हैं, तब सरकारको बडी परेशानीमें डाला है, कानूनोका विरोध अुससे सहा नही जाता और सामने वार करनेमें अुसे शरम लगती है। हमने जब सामूहिक रूपमें अैसे युद्ध किये है, तब सरकारको, अुसका विशाल सैनिक बल होते हुअे भी, हमने ठडा पडते देखा है। अैसे समय वह अिस मौकेकी ताकमें रहती है कि हममें से कोअी मोहमें पडकर सत्य और अहिंसाका रास्ता चूके, और जब अैसा हो जाता है तो अुसकी बन आती है। क्योंकि तभी तो नि शस्त्र लोगोके विरुद्ध अपनी सेनाका अुपयोग करनेके लिअे वह अपने मनको मना सकती है न? अिस नये बलसे हम स्वराज्य हासिल नही कर सके है, परन्तु अुसका स्वाद हमारी जीभको लग गया है। हमें अैसा विश्वास होने लगा है कि यह बल पूरी मात्रामें पैदा कर लेने पर हम जरूर स्वराज्य हासिल करेंगे।

स्वराज्यकी लडाअीका नाम सुनते ही आनदके मारे आपके रोअें खडे हो जाते है। आपको शौर्य चढ़ जाता है। आप अपने मनमें निश्चय करते हैं कि बस लडाअी करनी ही है, सेनापतियोने आवाज लगाअी कि अुनके सिपाही बन जाना है। और

अुसके नशे ही नशेमें आप स्वराज्यके सपने देखने लगते है "वस, अव गुलामीका कलक मिटा देंगे। अग्रेजोको भारतसे विदा कर देंगे। अुनके दम घोटनेवाले वधनसे देश-शरीरको मुक्त करेंगे। देशकी लगाम हमारे अपने चुने हुअे नेताओके हाथमें देंगे। सेना, पुलिस और तमाम अधिकारी हमारा हुक्म मानेंगे। विधान-सभाओमें अैसे कानून बनायेंगे जिनसे लोग थोडे ही समयमें दारिद्र्यसे मुक्त हो जाय, कोअी अपढ नही रहे, सब लोग हथियार रखने लगें, देश-विदेशमें भारतके लोगो और नेताओका असर पडने लगे। "

परतु सावधान! सपनोमें बहुत ज्यादा बह जाना अच्छा नही। सच्चे सैनिकोको तरगी न बनकर अपने शस्त्रोसे सुसज्जित होनेमे, अपने गोला-बारूदको सभालनेमें अधिक लगे रहना चाहिये। हम तरगमे आ जायगे, तो हमारे शस्त्रोको, जो नये ही प्रकारके हैं, हम भूल जायगे। मुहसे आप सत्याग्रह शब्द बोलेंगे, परतु आपकी कल्पनायें तो आप अखबारोमें रोज जिनकी बाते पढते हैं वैसी स्थलसेना, जलसेना और वायुसेनामें ही रमती रहेंगी, मानो वैसी सेनायें खडी करके आप अग्रेजोके साथ युद्ध कर रहे हो, मानो अुस युद्धमें आप अखबारोमें रोजाना पढी जानेवाली तरह-तरहकी कपट-नीतिका कुशलतासे अुपयोग कर रहे हो, रेडियोकी झूठी बातोमें भी मानो आप अुन लोगोसे सवाये हो गये हो—अिस तरहके सपने देखनेमें आप लग जायेंगे। आप सब चौंककर अैसे गगन-विहारसे जागेंगे तभी आपको पता लगेगा कि अरे! आप तो जमीन पर खडे है, आपके शरीर पर बख्तर नही परतु शुद्ध और सादी खादी है, आप विमानमें अुडकर लन्दन पर बम नही बरसा रहे है, परतु अपने गावमें अथवा किसी जेलखानेमे बैठकर चरखा चले रहे है। आप सैनिक जरूर हैं, परतु सत्य और अहिंसाके गोला-बारूदसे लडनेवाले सैनिक है। आपके युद्धका प्रकार कोअी अनोखा ही है।

अुसमें सत्य आपका सबसे पहला बल है। आपकी लडाअी छोटी और व्यक्तिगत हो या देशव्यापी हो, परतु वह पूरी तरह सत्यकी, न्यायकी लडाअी है। अुसमें आपका हरअेक कदम सत्यके आधार पर, न्यायके आधार पर ही होता है। आपका सत्य अितना प्रकाशमान और स्पष्ट होता है कि सूर्यकी तरह वह कभी छिपा रह ही नही सकता। अुसके प्रकाशके सामने असत्य-पक्ष रातके तारोकी तरह मद पड जाता है। अुसका अपना मन ही अुससे कहने लगता है कि वह झूठा है और सत्य सत्याग्रहीके पक्षमें है। आपकी अपने सत्यके अिस बल पर श्रद्धा जमेगी अथवा अखबारो और रेडियोकी झूठी बातें करके अपनी बातको सच्ची सिद्ध करनेका लालच आपको होगा?

आपका दूसरा बल यह है कि आप अपने सत्यको मरते दम तक भी नही छोडते। आप सत्याग्रही है। प्रतिपक्ष जब आपकी कडी कसौटी करेगा, तब आप अपने अिस बलको टिकाये रख सकेंगे न?

आपका तीसरा बल यह है कि आप विरोधी पक्ष पर अुगली तक नही अुठाते। आप सपूर्ण अहिंसाका व्रत लिये हुअे हैं, अिसका अुसे पक्का विश्वास हो गया है। अिसलिअे आप पर वार करनेके लिये अुसका मन ही तैयार नही होता। परतु लडाअीके

दरमियान छोटे-बडे अैसे अनेक अवसर आपको जरूर मिलेंगे, जब आप विरोधीको कुछ न कुछ हानि पहुचा सकते है, परेशान कर सकते हैं। अितनी बडी हजारो सिरोवाली सरकारको वह हानि हलकी-सी चिमटी जैसी लगेगी। परतु आपको शत्रुके अेकाध अंगको, अेकाध मनुष्यको सतानेकी लज्जत जरूर आयेगी। क्या अैसे लालचको रोककर आप अपने अिस अहिंसा-बलको टिका सकेंगे ?

आपका चौथा बल यह है कि विरोधी आपको जेल, मार, दड, घरबार-हरण आदि दु ख देकर अुकसाता है, फिर भी आप हसते-हसते सब कुछ सहन करते हैं और अुस पर अुत्तेजित होकर हिंसाका मार्ग नही अपनाते, अिसके कारण अुसके दिलमें आपके लिअे आदर पैदा होता है। आपके साथ लडना अुसे अपने ही मनमें नीचता मालूम होती है। हसते-हसते कष्ट सहन करते रहनेमे, लबे समय तक लगातार सहते रहनेमें आपकी अच्छी तरह परीक्षा होती है। अिसमें आप कायरता दिखायें तो दुश्मन आप पर जरूर चढ बैठेगा और आपके सत्याग्रहको कुचल डालेगा।

आपका पाचवा बल यह है कि विरोधी कितना ही सताये तो भी आप अपने मनकी गहराअीमें भी अुसके लिअे वैरभाव नही रखते। आपका प्रेम वह स्पष्ट देख सकता है। अिससे पूरी तरह अुसका हृदय-परिवर्तन हो जाता है। वह अपने मनसे आपका दुश्मन नही रहता, आपका हितचिन्तक बन जाता है और आपको स्वराज्यका भोक्ता बनानेमें अपना अहोभाग्य समझने लगता है।

अैसे है हमारे बल। अैसा है हमारा सत्य-अहिंसाका गोला-बारूद। अैसा है हमारा अहिंसामय सत्याग्रहका युद्ध। अिसी अर्थमें हमारे सेनापति सत्य और अहिंसाके सिद्धान्त हमारे सामने रखते हैं। अुन्हें आप कमरेमें बन्द होकर, आखें बन्द करके जपनेके साधु-सतोके मत्र न समझिये। वे तो हमारा शक्तिशाली गोला-बारूद हैं। हमारी यह श्रद्धा है कि अिससे हम अपना स्वराज्यका युद्ध जीत सकते है, और अुसे जीतनेकी हमारी दृढ प्रतिज्ञा है। हमारी तो यह भी महत्त्वाकाक्षा है कि सारी दुनियाकी सब दलित प्रजायें भी हमारा युद्ध देखकर अहिंसामय सत्याग्रहके युद्धकी अलौकिक कला सीख लें।

हम क्यों जीतते और क्यों हारते हैं ?

सत्य और अहिंसा केवल साधु-सन्यासियोके मत्र नही, परतु स्वराज्यके युद्धमें अिस्तेमाल करनेका तेज गोला-बारूद हैं, यह विचार हम कर चुके। आजसे पहले जब जब भी हमने अुनका प्रयोग किया, तब तब हमने देखा कि हम लगभग स्वराज्यके निकट जा सके हैं, परन्तु अन्तमे हमारा बल हमेशा कम हो गया है, कच्चा साबित हुआ है। अैसा क्यो होता रहता है? हममे से कुछका मन तो अिस प्रकार बार-बार पीछे हटनेके प्रसगोसे विचलित हो जाता है। बहुतसे यह कहकर हट गये हैं कि यह मार्ग स्वराज्यकी लडाअीके लिअे अुपयोगी नही है। हम गहरे पैठकर अिसके कारण नही ढूढेगे, तो देर-सवेर हमारा भी यही हाल होनेवाला है।

मूळ कारण यही है कि जिस बलसे हमें लडना है, अुसका सग्रह पूरी मात्रामे करनेकी हम कुछ भी योजना नही बनाते। हमारे हृदयमें स्वाभाविक रूपमें ही जो थोडा-बहुत सत्य-अहिंसाका मसाला अीश्वरने रख दिया है, अुसी पर आज तक हमारा व्यापार चला है।

अत्यत थोडी पूजीसे भी हम कअी बार विजयके नजदीक पहुच गये हैं, अिससे कभी कभी खुद हमीको आश्चर्य होता है। हमारी ताकतको देखते हुअे हमें कभी-कभी आशातीत सफलताअें मिल गअी हैं। अुस समय हमारे मन अुसका अिस तरह स्पष्टीकरण कर लेते मालूम होते हैं कि हम अपने बलसे नही जीते हैं, सिर्फ हमारे शोरगुल और प्रचारसे सरकारके घबरा जानेसे ही हमारी जीत हुअी है।

हमारा मन अैसा मानने लगे, अिसके जैसी भयकर बात हमारे लिअे और कोअी नही हो सकती। अिससे तो हम अीश्वरने हमारे अन्दर जो थोडा-बहुत सत्य-अहिंसाका प्रेम रख दिया है, अुसे भी खो बैठते हैं, और शोरगुल, अखबारोकी अतिशयोक्तियो, झूठी बातो और अैसी दूसरी थोथी चीजो पर हमारा विश्वास जम जाता है। हम लडाअियोमें अपनी स्वाभाविक निर्बलताके वश होकर छोटी-छोटी बातोमें झूठ बोलते हैं, झूठे नाम देते हैं, माल-असबाब छिपाते हैं, छिपे रूपमें घूमते हैं और अचानक अपने कार्य-क्रमोके छापे मारकर पुलिसवालोको छकाते हैं तथा अधिकारियो और विरोधियोका कही कही तगडा बहिष्कार करके अुनसे तोबा बुलवाते हैं — और अिन सबके प्रतापसे ही हमारी जीत होती है, अैसा भ्रम हमारी बुद्धिमें पैठ जाता है। अिस रास्तेमें हममे से कुछ लोग छोटे-छोटे व्यक्तिगत पराक्रम करते हैं और अनेक कष्ट अुठाते हैं, अुसके नशेमें अिस रास्तेमें कुदरती तौर पर हमारी दिलचस्पी बढती है, और अिस बार अिस रास्तेमें हमारी जो जो खामिया रह गअी अुन्हें आगेकी लडाअीमें न रहने दिया जाय, भविष्यमें पूरी होशियारीसे काम किया जाय, अनेक नअी नअी युक्तिया भी अुसमें शामिल की जाय — अिस तरहकी योजनायें हम अपने दिमागमें गढने लगते हैं।

यह न तो सत्याग्रह है और न अहिंसा है। ये तो सैनिक युद्धोके प्रकार हैं। अिनमें हमे मजा आता है, परतु युद्धकौशल तो आजकल अितना आगे बढ गया है कि हमारे ये प्रकार अुसके दारुण व्यूहोके सामने छोटे बालकोके खेल जैसे लगते हैं। अिसके अलावा, कअी बार तो हम यह मान कर चलते हैं कि हमने अिस तरह जो कुछ किया वही अहिंसात्मक सत्याग्रह है। हम यह समझकर चलने लगते हैं कि हमारे सेनापति भीतरसे अैसा ही करनेको हमसे कहते हैं। लडाअीमें थोडी-बहुत जीत हो जाय, तब तो अुसके नशेमें अैसी भ्रमित मान्यता हमारे मनमें अच्छी तरह जम जाती हैं। हमने अपने सेनापतियोको अभी तक अितना भी नही पहचाना कि यदि वे सचमुच सैनिक ढगके युद्धमें विश्वास रखते, तो वे अितने समर्थ हैं कि अुस दिशामें हमें कोसो आगे ले गये होते, हमें छोटे बच्चोके खेल न खेलाते रहते।

असलमें हमारी लडाअियोमें जब हम जीतके नजदीक पहुचते हैं, तब अुसका कारण हमारी यह होशियारी नही होती, अुसके कुछ और ही कारण होते हैं।

पहला कारण तो यह होता है कि हमारी लडाअियोकी जडमें सत्य है। अग्रेज हमें अितने खुल्लमखुल्ला कुचलते हैं और चूसते हैं कि अुनके पजेसे छूटनेका हमारा प्रयत्न हमारे सच्चे और असदिग्ध हककी बात है। हमारा यह सत्य अितना ज्वलन्त और स्पष्ट है कि अग्रेज अुसके सामने नीचा देखने लगे हैं। वे कितना ही जोर क्यो न दिखायें तो भी अुनके मनको यह खयाल अपराधी और निस्तेज बनाये बिना नही रह सकता कि वे स्वय असत्य पक्षमे हैं और हम सत्य पक्षमें है।

और यद्यपि हम सैनिक-गण और देशकी जनता लडाअीकी अनेक बातोमें सत्यनिष्ठाकी बहुत कचाअी दिखाते हैं, परन्तु सौभाग्यसे हमारे सेनापतियोकी सत्यनिष्ठा अितनी देदीप्यमान है कि हमारी छोटी-मोटी कचाअीसे हमारा काम बिलकुल नष्ट नही होता। फिर भी हम आखें खोलकर देखेंगे तो मालूम होगा कि सत्याग्रहीके नाते हमारी प्रतिष्ठामे अुससे धक्का लगा है, सत्यनिष्ठाकी वह कचाअी सेनापतियोके पैरोमें पत्थर बाधने जैसी सिद्ध हुअी है।

हम अपने सत्याग्रहके खातिर काफी दुख जरूर सहन करते है, फिर भी हमारे अपने हिसाबसे — हम जो परिणाम चाहते हैं अुसके हिसाबसे — वे काफी नही हैं। अिसमें भी हमारे सेनापतियोके त्याग और कष्ट-सहनकी मात्रा अितनी बडी है कि हमारी निर्बलता अुससे ढक जाती है और अग्रेजोके चित्त पर अुसका असर होता है। अग्रेजोको अपने हिसाबसे हम जो थोडा-बहुत कष्ट सहन करते हैं वह भी बडी बात लगती है, क्योकि वे जानते हैं कि बदलेमें जवाब दिये बिना अपने सत्याग्रहके लिअे वे स्वय कष्ट सहन करनेको तैयार नही हैं। अिसकी अुन्हें परम्परासे कभी शिक्षा नही मिली।

हमारा अहिंसा-बल पूरी तरह कारगर सिद्ध हो, अिसके लिअे हमारे मनमें भी हिंसा नही होनी चाहिये, वैरका लेश भी नही होना चाहिये। तो ही हम अग्रेजोका हृदय-परिवर्तन होनेकी आशा रख सकते है। यह चीज तो हममें लगभग शून्यवत् ही है। सेनापतियोने अपने भीतर अिसका बहुत अच्छी मात्रामें विकास किया है और अुसका

प्रत्यक्ष प्रमाण भी अनेक अवसरो पर दिया है। परन्तु हम सबके भीतर छिपी हुआी हिंसा-वृत्ति अुनके अहिंसा-बलको बहा ले जाती है और हृदय-परिवर्तनका फल हमें देखनेको नही मिलता। अथवा मिलता भी है तो वह फल बिलकुल मुरझाया हुआ, रस-हीन और सडा हुआ ही होता है। हम खास प्रयत्न करके अपने सत्य और अहिंसाके गोला-बारूदके सग्रहको बढायेंगे नही और केवल अीश्वरकी दी हुअी पूजीसे ही काम चलाते रहेंगे, तो अिससे अधिक फल कभी नही मिलेगा। अधिक मिलनेकी आशा रखनेका हमें अधिकार नही होगा। हम सदा विजयके किनारे पहुचकर वापस धकेल दिये जायगे। अितना ही नही, सग्रह बढायेंगे नही, तो जितनी पूजी हमारे पास है अुसे तेजीसे खो बैठेंगे। हमारी कमजोरी कहा कहा है, यह चतुर सरकार दिनोदिन अधिक जानने लगी है और अुस परसे अुसने हमारी लडाअीको कुचल डालनेके अुपाय ढूढ निकाले हैं, और दूसरे नये अुपाय भी वह ढूढ लेगी।

अिसलिअे यह अत्यत आवश्यक है कि हम गफलत छोडकर सावधान हो जाय और यह विचार करने लगे कि हमारा अहिंसाका बल दिनोदिन कैसे बढ सकता है। यह बाहरी शस्त्रो अथवा साधनोसे अुत्पन्न होनेवाला बल नही कि अुसके कारखाने खोले जा सकें। वह तो हमारे अपने हृदयमें अीश्वरका भरा हुआ आत्मबल है। हमने अपनी अश्रद्धासे, आलस्यसे, भीरुतासे, भोग-विलाससे अथवा शास्त्रकारोकी भाषामें काम, क्रोध, लोभ, मद, मोहसे अुस बलको दबा दिया है। यह सब गदगी दूर करके हमें अपने आत्मबलको मुक्त करना पडेगा, अर्थात् अपना व्यक्तिगत जीवन शुद्ध करके अुसे सत्य और अहिंसाके मार्ग पर चलाना होगा।

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

बारहवां विभाग

आश्रमी शिक्षाका अभ्यासक्रम

[अेकादश व्रत]

प्रवचन ७२

आत्म-रचनाकी बुनियाद

[सत्य-अहिंसा]

कल हम स्वराज्यकी लडाअीकी बात परसे कामक्रोधादिको जीतकर आत्मबल जगानेकी बात पर चले गये। अैसी भाषा सुनकर लोग चौंकते हैं। वे कह अुठते हैं: "हम तो स्वराज्यके सैनिक हैं। हम कोअी आत्मशुद्धि करनेके लिअे निकले हुअे साधु-सन्त नही है। हमारा व्यक्तिगत जीवन कैसा भी हो, अुसका स्वराज्यको लडाअीके साथ क्या सबध? अुस लडाअीके लिअे तो हम हर समय तैयार है। अुसमें हम बडेसे बडा त्याग और कुर्बानी करनेके लिअे तैयार हैं। अुस लडाअीके लिअे जितना सत्य-अहिंसाका पालन करना पडेगा अुतना हम करेंगे। अिससे अधिककी हमसे आशा नही रखनी चाहिये।"

परतु अहिंसात्मक सत्याग्रहके मार्ग पर चलकर ही स्वराज्यका युद्ध करना स्वीकार करनेके बाद और अुस युद्धके सेनापतियोके मातहत सत्याग्रही सैनिकोके रूपमे भरती होनेके बाद हम अिस तरह आसानीसे छटक नही सकते। यदि हमारा युद्ध जीतनेके लिअे सत्य और अहिंसाकी शक्ति जनतामें खूब बढाना आवश्यक हो और जनतामें अुसे बढानेके लिअे हम सैनिकोको अपने निजी जीवनमे सत्य और अहिंसाको ओतप्रोत करना जरूरी हो, तो यह कहकर हम अपने फर्जसे हट नही सकते कि 'यह तो आत्मशुद्धिकी बात है, साधु-सन्यासियोकी बात है।'

यह तो स्पष्ट ही है कि यदि अहिंसामय सत्याग्रहमें हम सत्यका पालन न करें, तो अुसमें लडाअीका बल नही आ सकता। भले लडाअीके जितना ही सही, परन्तु अुतने सत्यकी रक्षा करना तो हमारा कर्तव्य है ही।

परतु लडाअीके लिअे आवश्यक सत्यकी रक्षा करना भी क्या प्रयत्नके बिना हो सकता है? हमारा आज तकका अनुभव क्या कहता है? सेनापति निरन्तर जाग्रत रहकर रात-दिन लडाअी पर नजर रखें और हम जरा भी विचलित हो कि तुरन्त हमें जाग्रत करें, तो ही हम सत्य पर टिक सकते हैं। जीवनकी छोटी और तुच्छ बातोंमें सत्यका आग्रह रखनेकी — असत्यसे सर्वथा बचनेका आग्रह रखनेकी — आदत न होनेसे हम बडी बातोंमें असत्याचरण करनेका लालच रोक नही सकते। दो पैसेके तुच्छ फायदेके लिअे हमें नौकरके साथ झूठसे काम लेने या ग्राहकको धोखा देनेमें आपत्ति न होती हो, या छोटी-छोटी तकलीफोसे बचनेके लिअे हमें घरके स्त्री-बच्चोके साथ झूठ बोलनेमें सकोच न होता हो, तो स्वराज्य जैसी बडी बातमें हमें झूठसे काम लेनेमें हिचकिचाहट क्यो होगी? अुसमें तो असत्याचरण करनेका मोह अधिक प्रबल होगा। जरा झूठ बोलनेसे यदि लडाअीमें वेग आनेकी सभावना दिखाअी दे, सरकारको परेशानीमें

डालकर हमारे जीत जानेकी सभावना मालूम हो, तो वह मोह हम कैसे छोड सकेंगे? सरकारने लोगोके कुछ प्रिय और आदरणीय नेताओको मरवा दिया है, यह झूठी बात अुडानेसे लोग बहुत अुत्तेजित हो जायेगे और लडाअीमें बडी सख्यामें शरीक होगे — अैसा लोभ क्या हमे नही होगा? दूर दूरके दूसरे प्रान्तोमें जोरोसे लडाअी चलनेके झूठे बयान प्रकाशित करके अपने यहाके लोगोमें लडाअीमें शामिल होनेका अुत्साह बढानेका मोह क्या हमे नही होगा? अितना ही नही, सत्यके सबधमें समझौता करने लग जाने पर, स्वय लडाअीमें शामिल रहते हुअे भी, हमें अपना माल-असबाब बचानेके लिअे कैसी भी झूठी कार्रवाअी करनेमें बाधा क्यो होगी? दो पैसोंके लाभके लिअे या छोटी-सी असुविधासे बचनेके लिअे जिसे झूठा आचरण करनेकी आदत हो, वह अिस सार्वजनिक हितके बारेमें झूठ बोलनेका लालच छोड ही नही सकता। अैसे समय हमारा मन हमे यही सलाह देगा कि देशकी लडाअी जीतनेका मौका हो अुस समय सत्य-असत्यकी पूछ पकडे रखना निरी मूर्खता होगी।

फिर हम अपनी छोटी बुद्धिसे यह भी हिसाब लगा लेते है कि हमारा झूठ प्रकाशमें कहा आनेवाला है? लोगो और सरकार दोनोकी नजरमें हम सत्यनिष्ठ ही रहेगे। अिसलिअे अुन पर तो हमारे सत्यका जो असर पडनेवाला होगा वह पडेगा ही।

अिससे अधिक धोखा देनेवाला हिसाब शायद ही दूसरा कोअी होगा। सत्य तो अेक स्वय-प्रकाशित — सूर्यसे मिलती-जुलती वस्तु है। वह अकल्पित रूपमें प्रकट हो ही जाता है। अुसके पूरी तरह प्रकट होनेसे पहले हमारी आखोमे, हमारी आवाजमे, हमारी प्रत्येक क्रियामें अुसकी झलक आये बिना नही रहती। झूठसे लोग अुत्तेजित होकर लडाअीमें शरीक होनेके बजाय हमारे प्रति विश्वास खो बैठने है और जिस लडाअीमें हमारे जैसे झूठे सिपाही हो अुसमें कभी न शामिल होनेका निश्चय कर लेते हैं। सरकार भी लबे समय तक धोखा नही खायेगी। अितना ही नही, घरके छोटे बच्चोसे भी हमारा झूठ बहुत समय तक छिपा नही रह सकता। हमारी आखोके कोने देखकर वे पहचान लेते हैं। तो चतुर सरकारसे यह कैसे छिपा रह सकता है? वह जान लेती है कि हम जेलमें जानेके लिअे तो तैयार है, परतु घरबार खोकर जगल-जगल भटकनेको तैयार नही है। और वह तुरत हमारी अिस दुर्बलता पर प्रहार करके हमें और हमारी लडाअीको कुचल देती है।

हम याद करेंगे तो देख सकेंगे कि हमारे खानगी जीवनमें सत्यके आग्रहका आन्तरिक शौक बढा हुआ न होनेके कारण अपनी सार्वजनिक लडाअियोमे हम सत्यका आग्रह नही रख सके, और सत्याग्रहकी लडाअीमें से यदि सत्य अुड गया तो अुसका सच्चा बल ही अुड गया। अिसलिअे आपको यह साधु-फकीरोकी तरह हसनेकी बात लगे या किसी बडे राजनीतिक मुत्सद्दीकी तरह प्रतिष्ठाकी बात लगे — परतु यदि आपको सत्याग्रह-युद्धके सैनिक बनना हो, तो छोटी-छोटी व्यक्तिगत बातोमें सत्यका आग्रह रखनेकी आदत डालनी ही पडेगी। आदत ही नही, अुसका शौक भी बढाना होगा। अर्थात् सत्य-पालनके खातिर जब आप कुछ न कुछ तकलीफ अुठायें, तब आपको अेक प्रकारका

आन्तरिक आनन्द हो, अिस हद तक अुस शौकको ले जाना पडेगा। सत्याग्रह-युद्धके सैनिककी योग्यता प्राप्त करनेके लिअे यह आपकी तालीम है — कवायद है। अुसमें माफी मिल ही नही सकती।

अहिंसाकी आपकी शक्ति भी अिसी तरह छोटी-छोटी व्यक्तिगत बातोमे अुसका पालन करके आपको विकसित करनी होगी, ताकि स्वराज्यके लिअे किये जानेवाले सत्याग्रहोमें वह हमें धोखा न दे। अपने अहिंसाके पालनसे हमें सरकारी तत्र चलानेवाले लोगोके अन्त करणोमें परिवर्तन कर डालना है। परन्तु क्या हमने अपने सबधियो, अपने मित्रो, अपने पडोसियो, अपने धधेके साथियो, अपने गुरुभाअियो, अपने ग्राम-बधुओ आदि पर अिसके प्रयोग किये है?

अुनके प्रति हमारा स्वाभाविक प्रेम और सहानुभूति होनेके कारण अुनके प्रति सूक्ष्मसे सूक्ष्म अहिंसाका पालन करना हमारे लिअे आसान होता है। अुनके लिअे असुविधाअें और दु ख सहन करना भी हमारे लिअे अपेक्षाकृत बहुत आसान होता है। लेकिन अुनके सबधमें भी अहिंसाका प्रयोग करनेमें हम कहा विश्वास करते है? अुस समय हम कैसा व्यवहार करते हैं? हठ करनेवाले बच्चोको, स्त्रीको या विद्यार्थियोको मारने, डाटने या अुनका तिरस्कार करने और अुन्हें अपमानित करनेमें हम हिंसाका अुपयोग छूटसे करते है। अैसा करनेकी हमने आदत ही डाल ली है। बात-बातमें अिस तरह हिंसाका व्यवहार करनेवाले हम सत्याग्रहके समय अपने विरोधियोके प्रति और अपने कार्यमें बाधक होनेवालोके प्रति अहिंसाकी वाणी और अहिंसाका व्यवहार रखनेकी आशा कैसे कर सकते है?

यदि अूपर कहे अनुसार हम मारपीट नही करते, तो कायर बनकर अुनकी हठ चलने देते है। बीचमें पडेंगे तो तकरार होगी, अनबन हो जायगी, वे नाराज होगे, अुनकी ओरसे मिलनेवाली सुख-सुविधामें बाधा आयेगी, गावमें हमें बुरा कहा जायगा — अैसे-अैसे विचारोसे हम कायर बन जाते हैं। अैसी कायरतासे कितने मा-बाप अपने बच्चोको दृढतापूर्वक शिक्षा न देकर अुनके जीवनको पतवारहीन नाव जैसा बना डालते हैं? विद्यार्थियोमें अप्रिय हो जानेके डरसे कितने शिक्षक अुनका दृढतापूर्वक पथ-प्रदर्शन करनेके कर्तव्यसे चूकते है?

हम नौजवान हो अथवा विद्यार्थी हो, तो हम बुजुर्गों और गुरुजनोके साथ कैसा बरताव करते है? हमें देशभक्ति जैसी प्रेरक भावनाओका अिस अुम्रमें आकर्षण होता है और बडे-बूढे हमें लकीरके फकीर ही बने रहनेको दबाते हैं, यह अनुभव तो प्रत्येक युवकको होता ही है। अधिकाश युवक अुस समय अपनेको रोकनेवाले बुजुर्गोंसे झगडा करते है, परन्तु वह झगडा अहिंसाका नही होता। वे अुन्हें न कहने लायक वचन कहने लगते है, अुनका अपमान करते हैं, वे लाठी लेकर केवल अुन्हें मारते ही नही, बाकी तो हर तरहकी हिंसा करते है। अुनका हिंसाका अुबाल देखकर घडीभर तो सबको चिन्ता हो जाती है कि पता नही वे क्यासे क्या कर डालेंगे। परतु ज्यादातर अुनका हिंसाका अुबाल दूधके अुफानसे भी जल्दी शान्त हो जाता है। फिर मा-बापको या

शिक्षकोको अुनकी जरा भी चिन्ता करनेकी जरूरत नही रह जाती। वे चाहें अुससे भी नीची सतह पर जाकर अुनके नौजवान लडके-लडकी या विद्यार्थी बैठ जाते है।

सचमुच युवक लोग मा-बापके आग्रहके वश होकर अपना आदर्श-प्रेम जितनी जल्दी छोड देते है और स्कूल-कॉलेजोमें सयानी अुम्रके विद्यार्थी तक अपनेको मिलनेवाली छोटी-बडी सजायें जितने हलके मनसे, जरा भी मान-भगका अनुभव किये बिना तुरत नीची गर्दन करके सह लेते है, अुतनी करुण पराजय दुनियामें शायद ही और किसीकी देखनेमें आती है।

क्या अिसमें अहिंसा होती है? क्या गुरुजनोके आदर या प्रेमके कारण वे झुक जाते है? हरगिज नही। अिन्ही युवकोने यदि अहिंसक युद्धकी कला सीखी हो, तो वे बडोका अपमान नही करेंगे, अुनके हृदय प्रेम और सेवासे पिघला देंगे, परतु अपनेको लकीरके फकीर बनाये रखनेके अुनके हठके खिलाफ तो डटकर युद्ध करेंगे। विद्यार्थी पाठशालाओमें अन्यायपूर्ण दण्डके विरुद्ध टक्कर लेंगे। अैसा करनेमे घर या पाठशाला छोडनी पडे, निराधार स्थितिमें रहने और पढाअी बिगडनेका खतरा खडा हो जाय, तो भी अुस सकटको आनद और साहससे वे सहन करेंगे और अपने अिस अहिंसामय कष्ट-सहनसे गुरुजनोके हृदयोको अधिक पिघलायेंगे। परतु अहिंसाके पाठ सीखनेके अैसे प्रसगोका जीवनमे कितना कम अुपयोग होता है?

जहा देखिये वही अिस प्रकारकी कायरताका साम्राज्य दिखाअी देता है और अुस कायरताकी गिनती अिस गाधीयुगमें अक्सर अहिंसामें करनेको भी हम तैयार हो जाते है। परतु अहिंसा अैसी कोअी फूलोकी सेज नही है। अन्यायपूर्ण और असत्य हठके विरुद्ध युद्ध करना तो मनुष्यके नाते हमारा धर्म ही है। हम स्वाभिमानी मनुष्य हो तो अिस वीरधर्मसे हम कभी भाग ही नही सकते।

हठ करनेवालेके हठके विरुद्ध युद्ध करने और फिर भी अुसके साथ मारपीट या अुसका तिरस्कार न करनेमें ही अहिंसाका सच्चा प्रयोग निहित है। लडका आलसी हो जाता है, अपने हिस्सेका काम नही करता। अुसे डाटने-फटकारनेकी अपेक्षा अुसके हिस्सेका बोझ भी हम प्रेमसे अुठा लें तो क्या परिणाम होता है, अिसका प्रयोग कर देखनेका धीरज हमें नही रहता। स्त्री बच्चोको मिठाअिया खिलानेके मोहसे बीमार कर देती है। अुससे लडने-झगडनेकी अपेक्षा हम स्वय मिठाअियोका सर्वथा त्याग कर दे, तो अुसके मोह पर कैसा असर पडता है, अिसका प्रयोग करनेकी हिम्मत हममे नही होती। पहले हमारे देशभक्ति आदिके कामोमें जो गुरुजन बाधक होते थे, वे ही हम अहिंसाका प्रयोग करें तो हमें कैसे आशीर्वाद देते है, स्वय भी हमारे रगमें कैसे रग जाते है, यह देखनेका धीरज भी किसमें होता है?

पडोसी हमारे आगनके सामने रोज जूठन फेंकता है या अुसके घरकी नालीके कारण रास्तेमें गदा कीचड हो जाता है, तब अुससे लडनेका अथवा नगर-पालिकासे अुस पर जुर्माना करानेका हिंसक रास्ता हमें तुरत सूझता है। परतु फावडा लेकर गदगी साफ करनेको निकल पडनेका प्रयोग हमें झट नही सूझता। निकल पडें तो पडोसी दूसरे

ही दिन सीधा हो जायगा, यह आशा तो हम रखते है। मगर कीचड साफ करते करते असके कीचडसे भी अधिक गदा तानोका जो कीचड हम अस पर फेंकते है, असका हम विचार ही नही करते।

नौकर कामकी चोरी करता है, यह देखकर हमें या तो अस पर डाट-डपटकी या लाठीकी मार मारनेकी सूझती है, या अैसा सोचकर असकी खुशामद करनेकी बात सूझती है कि कुछ कहने लगेंगे तो जितना काम करता है वह भी नही करेगा। परतु नौकरके साथ हम भी काम करने लग जाय, असके सुख-दु खमें भाग लें, असके साथ भाअीचारा कायम करे — अिस तरहके अहिंसाके प्रयोग कर देखनेकी हमे फुरसत नही होनी। अैसा करनेमें थोडी मेहनत होती है, असमे हम जो अनुचित लाभ अठाते है असे छोडना पडता है, जिसके लिअे हमारी तैयारी नही होती।

कोअी आदमी खेतमें से अनाजके भुट्टे चुरा ले जाता है। कोअी ग्वाला हमारे खेतमें गाये चरा लेता है। वह अगर कमजोर और सीधा-सादा दिखाअी दे तो मारपीट करनेका और सरकारसे कैद और जुर्मानेका दड करानेका हिसक मार्ग ही हमें सूझता है। और यदि वह गुडा हो तो डरकर 'तेरी भी चुप और मेरी भी चुप' के अनुसार हम मुह बद करके बैठे रहते है। अहिंसाका प्रयोग तो अपने सगे-सबधियोके साथ भी करनेकी हमें आदत नही होती, तो फिर अिनके साथ करना तो सूझ ही कैसे सकता है? परतु यदि स्वराज्यकी लडाअीमें अहिंसाका प्रयोग करनेकी अपेक्षा हो, तो अैसे अवसरो पर भी हमें अहिंसाका प्रयोग करनेका अभ्यास डालना चाहिये। गावके लोग चोरोको मारनेके लिअे अन पर टूट पडें तब हमें बीचमें पडना चाहिये और अैसा करनेमें चोट आये तो असे सहन करना चाहिये, अिसके अलावा चोरके घरकी स्थिति जानना चाहिये और असके पास कोअी धधा न हो तो असे धधेसे लगाना चाहिये। अहिंसामें हम श्रद्धा बढा लें तो अैसे कोअी न कोअी मार्ग हमें सूझ सकते हैं।

अहिंसाके अैसे प्रयोग हमारे व्यक्तिगत जीवनमें करनेका शौक बढाये विना असकी हृदय-परिवर्तन करनेकी चमत्कारी शक्तिमें हमारी श्रद्धा कैसे जम सकती है? और अैसी श्रद्धा जमे बिना स्वराज्यकी लडाअीमें अहिंसाका प्रयोग हम सच्चे दिलसे कैसे कर सकते है?

अिसका अर्थ यही होता है कि यदि हम अहिंसात्मक सत्याग्रहके सैनिक बननेकी अम्मीद रखते हो, तो हमें अपना व्यक्तिगत जीवन सत्य और अहिंसाके आधार पर बिताना चाहिये। बात-बातमें झूठ बोलनेकी, छल-कपट करनेकी, अन्यायका आश्रय लेनेकी आदत पर हमें विजय प्राप्त करनी चाहिये। बात-बातमें गालिया देने, अपमान करने, तिरस्कार करने और हाथ अठानेकी आदत भी हमें छोडनी चाहिये। छोटे बच्चोके साथ और गरीब लोगोके साथ अैसा व्यवहार करनेसे हमारी बुरी आदतें स्वाभाविक-सी बन गअी हैं। अिस स्थितिको हमें अपनी सारी हिंसाकी जड समझ कर प्रयत्नपूर्वक सुधार लेना चाहिये। अितनी छोटी-छोटी बातोमें और अैसे छोटे लोगोके साथके व्यवहारमें भी सावधानी और प्रेमसे सत्य-अहिंसाका आग्रह रखकर हमें अन्हें अपने

स्वभावमें गूथ लेना चाहिये। असत्य और हिंसासे काम लेना हमें कभी सूझे ही नही, अिस तरहका आचरण करना हमारे लिअे असभव हो जाय, हमारा शरीर, हमारी जीभ और हमारा मन अिस प्रकारका आचरण करनेसे अिनकार कर दे, अिस हद तक यह स्वभाव गहरा वन जाना चाहिये।

क्या अैसा करना असभव है? तिरस्कारसे फेंका हुआ, घूरे पर डाला हुआ अन्न —भले ही वह पकवान हो, भले ही हमारे पेटमें भूख हो—क्या हम लेनेको तैयार होते है? क्या हमारी जीभ स्वय अुस चीजको देखने पर भी रस छोडनेसे अिनकार नही कर देती? शराब, तम्बाखू जैसी चीजोके बारेमें भी मनुष्यका शरीर अुनकी अुग्र गधसे ही अुन्हें ग्रहण करनेके खिलाफ विद्रोह करता है। परतु दरिद्रताके मारे और व्यसनके कारण मनुष्य अपने स्वभावको नीचे गिर जाने देता है, तव अुसकी कैसी स्थिति होती है? भिखारी घूरेको अुलट-पलट कर जूठे टुकडे बीनकर खाते है, स्वाद लेकर खाते है और अुनके लिअे अेक-दूसरेके साथ छीनाझपटी भी करते है। व्यसनी आदमी दिल जलाने और नालीमे लोटनेकी हद तक भी व्यसनोका सेवन करते है। सत्य-अहिंसाके मामलेमें हमने सचमुच अिसी तरह अपने मूल स्वभावको नीचे गिरा लिया है। हमारे मन और शरीर, जिन्हें मूल स्वभावके अनुसार अैसे आचरणसे घृणा होनी चाहिये, हमारी वुरी आदतोके कारण अुसमे मजा लेने लगे है। अिसलिअे आदतोको सुधारकर हमें अपने मूल स्वभावको फिरसे जाग्रत करना चाहिये, अपने मानसकी रचना ही अैसी कर लेनी चाहिये कि छोटे बालकको मनानेकी बात हो अथवा स्वराज्यकी समझौता-वार्ता करनी हो, सत्यका भग करनेके लिअे हमारे तन-मन कभी तैयार ही न हो, छोटे वच्चोको मारने-पीटनेकी बात हो अथवा स्वतत्रताका युद्ध हो, अहिंसाका भग करनेसे हमारे तन और मन सर्वथा अिनकार कर दें। अिस प्रकार अपने स्वभावको बनाकर अपनी सुन्दर आत्म-रचना करनेमें आलस्य करनेसे हम अपने मानवोचित गुणोको अपने हाथो बिगाड लेते है और जीवनका सच्चा रस खो बैठते हैं। लेकिन अुपरोक्त ढगसे आत्म-रचना करके सच्चे मनुष्य बनना हमारा धर्म है।

और जिसे देशसेवा करके सच्चे स्वराज्यकी रचना करनी है, अुसे तो आत्म-रचना कर ही लेनी चाहिये। आत्म-रचनाके बिना स्वराज्य-रचना करने लगेंगे, तो वह बिना औजारके लकडी गढनेवाले बढअीकी-सी बात होगी। जो सैनिक स्वराज्यका सग्राम अहिंसामय सत्याग्रहके व्यूहसे जीतना चाहता है, वह यदि जीवनके बारीकसे बारीक अणु-परमाणुओमे सत्य और अहिंसाको गूथ लेनेके बारेमें आलस्य अथवा अश्रद्धा रखे, तो यह काठकी तलवारसे लडने जानेकी बात होगी।

परतु अिस प्रकार आत्म-रचना करना और सत्य-अहिंसाको स्वभावमें गूथ लेना क्या हमारे जैसे साधारण मनुष्योके लिअे सभव है? क्या यह बडे-बडे साधु-महात्माओसे ही हो सकनेवाली कठिन वस्तु नही है?

प्रवचन ७२

आत्म-रचनाकी अिमारत

सत्य और अहिंसाको जीवनमें ओतप्रोत करके आत्म-रचना करना असभव नही है। अिसके जैसा सभव और सरल कार्य दूसरा कोअी नही हो सकता। हमारा जो धर्म हो, स्वभाव हो, वह हमारे लिअे कठिन कैसे हो सकता है? क्या हमें कभी यह विचार भी आता है कि आगको तपनेमें और पानीको बहनेमें तकलीफ होती होगी? सत्य और अहिंसा हमारे स्वभाव-धर्म होते हुअे भी हमारी बुरी आदतोके कारण आज अस्वाभाविक बन गये है, अिसीलिअे अति कठिन मालूम होकर वे हमें चौका देते है। परतु हमारे भीतर सोया हुआ आतमबल जब तक जाग नही अुठता, तभी तक वे कठिन मालूम होते हैं। अिस बलको हम जगा लें तो आत्म-रचना करना बहुत आसान और हमारी शक्तिकी मर्यादाके भीतरका काम हो जाय।

हम कुछ अत्यन्त बुरी आदतें बना बैठे हैं, जिनसे हमारा मूल स्वभाव ही बिलकुल बदल गया है। हमने कुछ अैसे रिवाज डाल लिये हैं, जिनके जालमें अब हमारा मूल स्वभाव फस गया है। हम कुछ विचित्र विचारोकी मायासृष्टि रचकर अुसमें अितन रच-पच गये है कि हम अपने-आपको पहचानना भूल गये है, अपना स्वभाव ही भूल गये है और अिस तरहका आचरण कर रहे है, मानो मनुष्य न होकर हम कोअी नीची योनिके प्राणी हैं।

क्या आपको अैसा लगता है कि मेरा अिस तरह धर्मशास्त्रोकी भाषा काममें लेना और स्वराज्यके सैनिकोके सामने अैसी बातें करना आप पर बडा जुल्म है? परतु धर्मशास्त्रोसे हम चौंकें किसलिअे? क्या गुलामीमें सडना छोडकर स्वराज्यका सैनिक बननेमें आपने अपने धर्मका पालन नही किया? हम प्रतिदिन सैनिक और सेवकके कर्मों पर विचार करते हैं और वह भी सत्याग्रही सैनिक और सेवकके धर्मों पर, अिसलिअे हम मनुष्यके अूचेसे अूचे धर्मकी ही बातें करते हैं। और धर्मशास्त्रोका विषय भी यही है, अिसलिअे वे और हम अेक ही रास्ते पर आ जाय तो अिसमें कोअी आश्चर्य नही।

आजसे पहले धर्मबुद्धिवाले सत-महन्त राजनीतिकी बातोमें बहुत नही पडते थे। वे अुसे षड्यत्र, अुपाधि और गदगी मानकर अुससे दूर रहते थे और भजन-पूजन करते तथा आराधनामें तल्लीन रहते थे। अुस समयके राज्य और सामाजिक विधान आजकी तुलनामें बहुत ही अुदार होते थे। आज २० वी सदीमें तो मनुष्य-जीवनका अेक भी अग अैसा नही रहा, जिसमें राज्यतत्र अपने नाखून न घुसेडता हो। हम कातकर और बुनकर स्वदेशी-धर्मका पालन करते हैं, तो वह राज्य और कारखानेदारोकी आखोमें खटकता है। गरीब लोगोसे हम ताडी और शराब छुडवाते है, तो भी वे यह मानकर चिढते हैं कि हम अुनकी आमदनी डुबोते हैं। राज्यतत्र अपनी ताकत बनाये रखनेके लिअे जातियो

और वर्गोके बीच फूट पैदा करते है, अितना ही नही, आरामसे पेट भरकर हमारी मेहनतका फल भी हमें खाने नही देते। वे अपनी थालिया भरनेके खातिर अिस हद तक लोगोको चूसते हैं कि अुनकी थालीमे दूधकी अेक बूद भी रहने नहीं पाती। जिन देशोमे स्वदेशी राज्यतत्र होते है, वहा भी अमीर लोग हुकूमतको अपने हाथमे रखकर बाकीके लोगोको बेहाल कर देते हैं, तो हमारे यहा तो विदेशी राज्य है। पेडमें घुसकर और अुसका जीवन-रस पीकर बढनेवाली परोपजीवी वनस्पतियोकी तरह वह हमारे अणु-अणुका जीवन चूस लेता है। आज अिसे खटपटका या पड्यत्रका विपय मानकर और अुससे अलिप्त रहकर भजन-पूजन करनेकी स्थिति नही रही। पुराने जमानेके साधु-सत भी अैसी हालतमें अलिप्त नहीं रह सके होते। अुन्हें भी हमारी ही तरह स्वराज्य-रचनाको अपने भजन-पूजनका साधन बनाना पडता।

पुराने साधु-सत राजनीतिक लडाअिया नही लडते थे और हम लडते हैं, अिससे यह माननेकी भूल नही करना चाहिये कि अिन दोनोमे कोअी मौलिक भेद है। वे और हम — दोनो अपने क्षुद्र स्वार्थी जीवनोसे बाहर निकलकर जिसे हम अपना महान धर्म मानते है, अुस पर चलनेवाले लोग हैं। वे भगवे वस्त्र पहनते थे, वनमें जाकर तप करते थे और योग-साधना करते थे। हमारी साधनाका बाह्य रूप दूसरा है। परन्तु धर्मबुद्धिमें हम अेक ही जाति और अेक ही प्रकारके हैं, होना भी चाहिये। अैसा होनेके कारण अुनके धर्मशास्त्रोकी भापा और हमारी लडाअीकी भाषा अन्तमें अेक रास्ते पर आ जाय, तो अिसमें आश्चर्यकी क्या बात है? हमें धर्म और शास्त्र-वचन पर बहुत अश्रद्धा हो गअी हो, तो अिसका कारण आजकलके झूठे और ढोगी भिखारी साधु है। हमारी बुद्धिमे यह भ्रम घुस गया है कि धर्मका अर्थ है अुनके जैसे लोगोके आचरण और धर्मशास्त्रका अर्थ है अुनके जैसे लोगोके लेख। अिसलिअे हमें धार्मिक कहलानेमे लज्जा आती है और कोअी धर्मशास्त्रोकी भाषा काममें लेता है तो अुससे हम दूर भागते हैं।

परतु आप यदि स्वराज्य-रचनाके सेवक बनना चाहते है और अहिंसात्मक सत्याग्रह-युद्धके सैनिक बननेकी अिच्छा रखते हैं, तो आज मेरे धर्मशास्त्रोकी भाषा अिस्तेमाल करनेसे आपको अरुचि नही होनी चाहिये। आपको आत्म-रचना करके वैसे सैनिक बननेकी अपनी योग्यता बढानी चाहिये। जो लोग अपने जमानेके साथ मेल खानेवाले ढगसे साधना करके अपनी आत्म-रचना कर चुके हैं, अुनकी सलाह हम क्यो न लें? अुनके आजमाये हुअे अुपाय हम क्यो न स्वीकार करें?

आत्म-रचना करनेके ये अुपाय है — हमारे अेकादश सिद्धान्त। अिसी कारणसे हम प्रतिदिन प्रार्थनाकी गभीर घडीमें अुनका स्मरण कर लेते है। जो आत्म-रचना हमें करनी है, जो आत्मबल हमें जुटाना है, अुसमें हमें प्रतिदिन आगे बढानेकी शक्ति अिन सिद्धान्तोमें है।

अिनमें से सत्य और अहिंसाके पहले दो सिद्धान्तोके बारेमें हम विचार कर चुके हैं। वे तो हमारे जीवनकी या हमारी लडाअीकी बुनियाद ही हैं। सत्य-अहिंसाको

अपना स्वभाव बना लेनेकी, अपने अणु-अणुमें गूथ लेनेकी ही हम साधना करना चाहते है। यही हमारी आत्म-रचना है।

अिसके बादके नौ सिद्धान्त सत्य-अहिसाको जीवनमें अुतारनेके साधन है। हम जो गलत विचार बनाकर अभी तक चले है, अुनके अनुसार हम अनेक हानिकारक रिवाज और आदतें बना बैठे है। अुन्हे समझकर, अुनमें से निकलकर सही रास्ते पर लगनेके ये सब प्रयत्न है। अुनमे अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्यके तीन साधन पुराने धर्म-शास्त्रोके बताये हुअे है। बाकीके छह हमने अपने युगकी त्रुटियो पर विशेष विचार करके निश्चित किये है। वे है शरीर-श्रम, अस्वाद, अभय, स्वदेशी, अस्पृश्यता-निवारण और सर्वधर्म-समभाव।

अिन नौ सिद्धान्तोको जीवनमें अुतारनेका प्रयत्न किये बिना आत्म-रचना होना अर्थात् हमारा सत्य-अहिसा पर आरूढ होना सभव नही है। यह कैसे किया जाय, अिसका हम आगे क्रमश विचार करेंगे।

१. धंधोंमें सिद्धान्त

[अस्तेय]

हम कितने ही अूचे और सफेदपोश बनकर फिरते हो, तो भी हमें स्वीकार करना पडेगा कि हमारे सारे व्यवहारोका आधार चोरी पर ही है। कोअी गरीब आदमी रातको अुठकर घरमें सेध लगाकर धन चुरा ले जाता है अथवा खेतमें से फसल काट ले जाता है, तो अिन छोटी-छोटी चोरियो पर हम खूब क्रोध करते है और जब ये लोग पकडे जाते है, तब अुन पर अपना क्रोध अुडेलनेमें हम नही चूकत। परतु जो असली चोरियां है, बडी चोरिया है, अुनके बारेमें मानो हम सबने आपसमें मिलकर यह समझौता कर लिया है कि अुन्हें चोरी न माना जाय — अुन्हे हमारा साधारण व्यवहार ही समझा जाय।

हमारे सब व्यापार-धधोकी बुनियाद चोरीके सिवा और क्या है? मामूली चोर तो पकडा जाने पर शर्मिन्दा होता है, परन्तु हमने अपनी चोरीको व्यवहारका प्रतिष्ठित सिद्धान्त बना लिया है और अुससे शरमानेकी बात ही नही रखी।

धधोमें भी जो सादे और शरीर-श्रमके धधे है, अुनमें दूसरोसे बहुत थोडी चोरी है, परतु जितनी बडी अुथल-पुथल, जितने बडे व्यापार-रोजगार, जितने बडे कारखाने और जितने बडे बाजार होते है, अुतनी ही चोरीकी मात्रा बढती जाती है। वह सूक्ष्म और घातक बनती जाती है। अुसकी अेक कला ही बन जाती है। अुन धधोमे लोगोके धन और श्रमका अपहरण होता है तथा पृथ्वीके कस और धातुओका हरण होता है। जिनकी वस्तुकी चोरी होती है अुन्हे पता तक न लगे, अितनी सफाअीसे चोरी की जाती है। और अिस प्रकार धनवान बननेवालोको समाजमे मान-प्रतिष्ठा देकर हम चोरी पर अपनी सम्मतिकी मुहर लगा देते है। क्यो न लगायें? मौका लग जाय तो क्या हम खुद भी चोरीके धधेमें शामिल होनेके अुम्मीदवार नही है?

कमाअीके धंधे तो अपार निकल आये है। परतु अिन सबको पीछे रखनेवाला और सबको अपने पजोमें समेटकर अुडनेवाला बडा धधा जो दुनियामें आज चल रहा है वह राज्य-व्यवस्थाका है। व्यापारोमें तो बाहरसे सचाअी और प्रामाणिकताका दिखावा करनेकी भी कुछ परवाह करनी पडती है, परतु अिस धधेमें चोरीके मामलेमें किसी प्रकारका दुराव-छिपाव होता ही नही। अिसके विपरीत, शासकगण गर्वके साथ दावा करते है कि जनताका हित करनेके लिअे ही हम राजनीतिके दाव अर्थात् चोरी और झूठके दाव खेलते है। और वे जनताका हित कैसा करते है? वे सीधे करोंके रूपमें और भोले लोगोको पता भी न चले अिस ढगसे परोक्ष करोके रूपमें अुसका खून जैसा महगा धन चुराते है और अुससे नौकरशाही तथा सेनाका पोषण करके अुसी जनताको हमेशा अपने पजेमें रखते है। वे राजसत्ताके जोरसे लोगोके अनेक प्रामाणिक अुद्योगोको नष्ट कर डालते है और नये शोषक अुद्योगोको प्रोत्साहन देते है।

यह राज्य-व्यवस्थाका धधा अधिकाधिक फैलता जा रहा है। अुसमें जो सीधा भाग लेते है वे तो अपना जीवन चोरीमय बनाते ही है, परन्तु राज्यसत्ताकी चमक-दमकसे अैसे धधेकी प्रतिष्ठा बढाकर साधारण लोगोके मनमें भी चोरीकी वृत्ति पैदा कर देते है।

"धधे तो हम धधेके ढगसे ही करेंगे, केवल प्रार्थनामें बैठेंगे अथवा देव-मदिरमें जायेंगे, तब अेकादश व्रतोका चिन्तन करेंगे। सद्‌गृहस्थ और सन्नारिया बनकर अेक-दूसरेके साथ मिले-जुलेंगे, तब जहा तक हो सकेगा झूठ नही बोलेंगे और न किसीके छतरी-जूते चुरायेंगे, और कोअी भूल गया होगा तो अुसके घर तक ये चीजें पहुचा देंगे। हमारे बच्चे झूठ बोलेंगे या चोरी करेंगे, तो अुन्हे हम डाट देंगे। अिस प्रकार जीवनके अैसे बिना जोखिमवाले अवसरो पर सत्य और अस्तेय पर जोर देनेको हम तैयार है, परतु हमारे कमाअीके धधेमें और हमारे राजकाजके धधेमें हम पठितमूर्खोंका व्यवहार करने लगें तो हमारा खर्च कैसे चले? हमारा घर कैसे चले? हमारी मनानें सुख-समृद्धिका अुपभोग कैसे कर सकेंगी?" यह है हम सबका रवैया।

अिस प्रकार रोजगार-धधो और राजनीतिकी, जो हम लोगोके जीवनका पौना हिस्सा समेट लेनेवाले व्यवसाय है, सारी रचना ही हमने चोरी पर की है, फिर भी हम अुसे चोरी नही मानते। अैसी स्थितिमें जीवनमें सत्य और अहिंसाके पालनकी आशा ही कहा रह जाती है? चोरीके घने, कटीले पेडोके बीच सत्य-अहिंसाके कोमल पौधे लगाकर अुनके बडे होनेकी आशा हम कैसे रख सकते है?

धधोमें खुल्लमखुल्ला चोरी करके हम भले सभ्य बनकर ज्ञानकी बात करें, दान दें, देशसेवाके कुछ कामोमें भी भाग ले, परन्तु यह सब 'सौ चूहे मार कर बिल्ली हजको चली' जैसी बात हो जाती है। हमारे अिन कामोमें न तो गहराअी आती है, न सचाअी आती है और न जोश आता है।

अिसलिअे सत्य-अहिंसाके पालनमें आगे बढना हो, तो हमें अपने जीवनके डाल-पत्तोको सीचना छोडकर अुसका बडा भाग समेटनेवाले हमारे धधोमें अस्तेय और

प्रामाणिकता लानेका प्रयत्न करना चाहिये। अिस मामलेमें हम सब समान रूपसे झूठे बन गये हैं। अत अिसके लिअे मनको तैयार करना, अिस प्रकार व्यवहार करते हुअे थोडी आमदनीसे काम चलाने और सुख-वैभवमें कमी करनेके लिअे मनको तैयार करना, कठिन प्रतीत होगा। परन्तु साहसके साथ धधेमें अस्तेय अथवा प्रामाणिकताका पालन करनेका सकल्प कर लें, तो हमारा जीवन छल-कपटके खड्डो और टेकरियोके बजाय सत्य-अहिंसाकी सीधी सडक जैसा बन जाय, सत्य-अहिसाको जीवनके सूत्रोंके रूपमें देखनेकी श्रद्धा हममें पैदा हो और देशके बडे कामोमें सत्य-अहिसा पर चलनेकी हिम्मत आ जाय।

२. सुख-सुविधाओंमें सिद्धान्त

[अपरिग्रह]

परिग्रहका अर्थ है सुख-सुविधाओके साधनोका सग्रह करना। हमने अिस मामलेमें भी आपसमें 'चोरोका समझौता' कर लिया है "हम यथासभव देशसेवाका काम करेंगे, धर्मका पालन करेंगे और यथाशक्ति सत्य-अहिंसाका भी अमल करेंगे, परन्तु हमारे घरेलू जीवनमें कृपा करके कोअी दखल न दें। अुसमें हम जैमे चाहिये वैसे सुख-सुविधाके साधन अिकट्ठे करेंगे, हमें जो खाना-पीना होगा हम खायेंगे-पियेंगे, जो भोग भोगने होंगे सो भोगेंगे। हमें जैसा कमाना — अर्थात् चोरी करना — आयेगा अुसके अनुसार हम सुख भोगेंगे। आपको जैसा कमाना आये अुसके अनुसार आप भी भोगिये। यह आपका और हमारा निजी जीवन है। अिसमें कितना भोगें और कितना न भोगें, यह देखना हमारा काम है। दूसरोको अिसमें दखल देनेका हक नही । जिस तरह दिनमें खानेको अच्छी तरह न मिले तो काममें जी नही लगता, अुसी तरह निजी सुख-वैभवमें कमी हो तो जीवनमें कोअी रस नही रहता । पहले अपनी रुचिके अनुसार व्यक्तिगत वैभव भोगें, फिर फुरसतसे सिर पर पगडी रखकर या खादीकी टोपी पहनकर तथा निश्चित होकर हम देशका काम करने निकलेंगे।"

अैसा करनेमें मानो हम पूरी तरह स्वाभाविक निर्दोषताका व्यवहार कर रहे हैं, अिससे हमारी मानवोचित प्रतिष्ठामें कोअी कमी नही आती, अैसा हमने परस्पर सम्मतिसे तय कर लिया है।

सब अपने-अपने निर्वाहके लिअे कमाअी करे और अुससे आवश्यक सुख-सुविधाअें जुटा ले, अिस नियममे आपत्तिकी कोअी बात नहीं है, परन्तु यह तभी ठीक माना जायगा, जब कमाअी पसीने और अीमानदारीकी हो। अिस तरह कमानेवालेके पास जरूरतमे ज्यादा साधन अिकट्ठे नही हो सकते। अुनका अुपभोग करनेकी फुरसत भी अुसे नही मिलती, और वृत्ति भी नहीं होती। परन्तु हमारी कमाअी कैसी है, यह तो मैंने अस्तेयके सम्बन्धमें बोलते हुअे कह दिया है। जिसे चोरीकी आसान कमाअी करनी हो, अुसे सुख-सुविधाके साधनो पर और व्यक्तिगत भोग-विलास पर अकुश रखनेकी

अिच्छा क्यो होगी ? वह सादे भोजनसे क्यो तृप्त होगा ? वह छोटे घरमे क्यो सन्तोष मानेगा ? वह बाग-बगीचा, नौकर-चाकर, गाडी-मोटर, धन-दौलत आदि सब कुछ बढानेमें क्यो सकोच करेगा ?

अिस प्रकार व्यक्तिगत सुखोको पर्याप्त मात्रामें भोगनेसे हमारी परिग्रह-वृत्ति सतुष्ट होती तो भी काफी अच्छा होता। परन्तु हम तो चारो ओर देखते रहते है कि अिन सब बातोमें दूसरा कोअी हमसे आगे तो नही बढ जाता ? कोअी बढ जाय अैसे हम सहन नही कर सकते। अुससे हमारे अभिमानको चोट पहुचती है। क्या हमे कमानेकी कला अुससे कम आती है ? और, हम अपने धधे बढाते है, चोरीके नये नये प्रकार ढूढ निकालते है और अधिकसे अधिक पैसा जमा करने लगते हैं। अैसा करके हम पागलोकी तरह सुख-सुविधाअें बढाते तो है, परन्तु धधेमें अितने फस जाते हैं कि अुनमें से किसी प्रकारकी सुख-सुविधा भोगनेकी शक्ति ही गवा देते है। हम पकवान खाते है, परन्तु अुन्हे पचा नही सकते, पलग पर सोते है, परन्तु नीद नही आती। फिर भी परिग्रहके मिथ्याभिमानके खातिर परिग्रह बढाते ही जाते है। रुपयोका बैंकमें खोला हुआ खाता भी हमारा अेक प्रिय परिग्रह बन जाता है। अुस पैसेसे जो भी चाहिये सब लाया जा सकता है, अिसलिअे नही। वह तो हमें चाहिये अुससे अधिक हम जमा कर चुके है। घरमे हमारे परिग्रहोकी भीडने हमारे लिअे बैठने तककी जगह नही रहने दी है। अब हम पर अेक ही पागलपन सवार है। दूसरोसे हमारी पूजी अधिक होनी चाहिये। अिसलिअे अधिक कमाअी करनी चाहिये, अधिक धधे चलाने चाहिये, अधिक चोरी करनी चाहिये। अैसा करनेमें खानेकी फुरसत न रहे, पारिवारिक जीवनका आनद लेनेका समय न रहे, तो भी हमे आपत्ति नही होती। देखनेवाले आलोचना करते है कि यदि कमाअीको भोग नही सकते, तो ये धधे किसलिअे है ? यह दौडधूप और धाधली किसलिअे है ? अुसमें बोला जानेवाला झूठ और की जानेवाली यह चोरी किसलिअे है ? हमारे पास धन खिचकर आता है अिसमें कितने ही लोग बेकार बनते होगे, चूसे जाते होगे। हमारे धधे कितने ही लोगोको बुरे रास्ते लगाते होगे, कुटेवोमें डालते होगे, व्यसनोमें फसाते होगे। यह सब भी आखिर किसलिअे ? लेकिन हम आलोचकोकी हसी अुडाते हैं और कहते हैं बडी पूजी अिकट्ठी करनेमें और प्रतिदिन अुसे बढाते ही जानेमें कितना आनन्द है, यह वे क्या जानें ?

अिस तरह परिग्रह बढानेकी सनक मनुष्यको पागल बना देती है। लोगोके कमाकर खानेके जमीन जैसे साधन भी हथिया लेनेमें अुसे हिचकिचाहट नही होती। लोगोंके लिअे अपने सिवा और कोअी आधार न रहने देकर वह अुन्हे अपनी मनमानी शर्तोसे कुचलता है और अुनका रक्त चूसता है। अुसे लोगोको अपने शिकार माननेके सिवा और कोअी भावना रखना बरदाश्त नही होता। अुसके पागलपनसे कितनी हिंसा हुअी, कितने लोग मरे, कितने बरबाद हुअे, कितने व्यसनोमें लग गये, कितने अनीतिमें फस गये, कितने बेकार और भिखारी बन गये, यह सोचनेको वह ठहर नही सकता।

परिग्रहका शौक रखना और अहिंसाका पालन करना, ये दोनो साथ साथ कभी चल ही नही सकते। औरोको दुखी किये बिना, तबाह किये बिना कोअी परिग्रहकी भूख मिटा नही सकता। यदि परिग्रह-वृत्ति पर अकुश लगाना न सीखें, तो हम जीवनमें अहिंसाको अुतार ही नही सकते। परिग्रहके लोभमें लोगोके प्राण लेनेमे जिसे जरा भी दु ख नही होता, अुससे स्वराज्यकी लडाअीमें सूक्ष्मतासे अहिंसाका पालन करनेकी आशा कभी नही रखी जा सकती। लेकिन अैसा आदमी स्वराज्यकी लडाअीमें खडा ही क्यो रहेगा? अुसे तो अपना शौक पूरा करनेके लिअे विदेशी हुकूमतके साथ रहनेमें ही अधिक लाभ मालूम होगा।

परिग्रहके सम्बन्धमें आज तक मनुष्यके मनमें अेक प्रकारकी शरम रहती थी। वह मनमें यह स्वीकार करता था कि अुसमें दूसरोकी चोरी होती है, दूसरोका द्रोह होता है। परन्तु अब तो अेक दूसरे ही प्रकारकी विचारसरणी प्रचलित होने लगी है। अुसमें यह सिद्धान्त बना लिया गया है कि परिग्रह जितना अधिक, अुतनी ही सभ्यता अूची। अुसमें सयमकी हसी अुडाअी जाती है और यह माना जाता है कि वह मनुष्यको पुराने पाषाण-युगमें वापस ढकेल देगा। परन्तु अिसके जैसा खतरनाक सिद्धान्त और कोअी नही। अग्रेजोने परिग्रहके सुख भोगनेकी हद कर दी है, क्या हम अुसीके परिणाम-स्वरूप अुनकी गुलामी नही भोग रहे है? यह बात जरा भी छिपी नही है कि अग्रेज और दूसरी गोरी जातिया दुनियाकी रगीन जातियोको अपनी राज्यसत्तामें जकडकर अुन्हे लूटती है, अिसीलिअे वे अतिवैभवका परिग्रही जीवन भोग सकती है। हमें तो अिसका अैसा अनुभव हो रहा है कि जगतके अन्त तक हम अुसे भूल नही सकते। अिस गुलामीसे हमारे सीखने लायक यदि कोअी सबक हो, तो वह यही होना चाहिये कि परिग्रह-सुख पर सयम रखा जाय।

अिसीलिअे हम स्वराज्यकी कल्पना गोरोके राज्योसे भिन्न करते है। हम अुसमें बडे-बडे और विलासी शहरोंके, बडे बडे कारखानोंके और बडी बडी सेनाओंके सपने नही देखते। परन्तु अुद्योगी, स्वावलबी, स्वशासन-भोगी, स्वच्छ, स्वस्थ और सुखी गावोकी ही कल्पना करते है। अैसे स्वराज्यका निर्माण हम अपनी ही मेहनतसे और अीश्वर द्वारा हमें दिये हुअे साधनोसे, दूसरी प्रजाओका शोषण किये बिना, कर सकते है।

परन्तु परिग्रहको ही सभ्यता बतानेवाले पश्चिमी विचारके लोग कहते है "हम अपने व्यक्तिगत जीवनमें परिग्रहोका सुख भोगनेकी राय रखते है, परन्तु अपने देशको परिग्रह नही करने देना चाहते। देशके राज्यको हम दृढ नियत्रणमें रखेंगे। अुसे हम अिस ढगसे चलायेंगे कि वह दूसरी प्रजाओको लूटने न जाय। और साथ ही देशके अुद्योगो और शिक्षाको अितना बढा देंगे कि देशके ही साधनोंसे देशके सब लोग परिग्रहका अूचेसे अूचा वैभव लूट सकें। हम अपने बुद्धिबलसे अैसे यत्र खोजेंगे, जिनकी सहायतासे सुख-सुविधाओके साधनोका पहाड खडा कर देंगे और अैसे कानून बनायेंगे कि देशमें सब समान रहे और कोअी किसीको लूटकर धन-सग्रह न करे। अिस प्रकार हम वैभव और परिग्रह पर खडी शहरी सभ्यता स्थापित करना

चाहते हैं। हम देहाती नही रहना चाहते, क्योंकि अिस तरहके सकुचित जीवनकी चार-दीवारीमें हमारे मनुष्यत्वको विकास करनेका पूरा अवकाश नही मिल सकता।"

अिस प्रकार विचार करना क्या मनुष्य-जातिके लिअे अत्यत भयकर अभिमान करने जैसा नही है? व्यक्तिगत जीवनमें परिग्रहका वैभव बढानेमें विश्वास रखते हुअे भी सार्वजनिक — देशके — जीवनमें अुस पर अकुश रखनेकी सन्मति हममें टिकी रहेगी, यह छाती ठोककर कहना आकाशमे महल बनाने जैसी असभव बात है, और निरा अभिमान है। यह महामारीके क्षेत्रमें रहने पर भी छूतसे बचनेका अभिमान रखने जैसी बात है।

समझदारी और सुख-शान्ति तो अपरिग्रहको हमारे जीवनका सिद्धान्त बनानेमें ही है। अुस रास्ते चलकर हम स्वच्छ, सुघड, अुद्योगी, शान्त, ज्ञानी, सेवापरायण और सुखी लोगोका ग्राम-स्वराज्य खडा कर सकेंगे। अपना व्यक्तिगत जीवन हम अैसा रखेंगे, तो जैसे हम होगे वैसा ही हमारा स्वराज्य भी अपने-आप निर्माण हो जायगा। वह अैसा होगा, जिसे हम सत्य और अहिंसाके मार्ग पर चला सकेंगे और सत्याग्रहके बलसे जिसकी रक्षा कर सकेंगे। हम यह नही मानते कि वह हमारे सपूर्ण विकासके लिअे सकुचित होगा।

३. व्यक्तिगतसे व्यक्तिगत जीवनमें भी सिद्धान्त

[ब्रह्मचर्य]

अिस सम्बन्धमें हमने परस्पर समझौते द्वारा मानो यह नियम तय कर लिया है कि, "यह विषय मनुष्यके जीवनका अत्यत व्यक्तिगत विषय होनेके कारण कोअी अुसकी कुछ चर्चा ही न करे। जिसकी जैसी मरजी हो, वैसा वह करे। सयम रखना हो तो सयम रखे, लम्पट बनना हो तो लम्पट बने। जब तक मनुष्य व्यभिचार करता हुआ पकडा न जाय, तब तक कोअी किसीके व्यवहारकी बिलकुल बात न करे।"

मनुष्यके मन पर कामदेवका जो महादुर्दम्य साम्राज्य है, अुसे देखते हुअे अिस मामलेमें अैसी ढीली नीति रखकर हम लोगोने भयकर भूल की है। यद्यपि व्यभिचारके लिअे समाजमें खूब निन्दाकी वृत्ति है और कोअी पकडा जाय तो अुसे राजदड तथा समाज-दड देने और मारपीट करनेमें भी हम पीछे नही रहते, परन्तु हमारा यह क्रोध अिस बातका चिह्न हरगिज नही है कि हमने स्वय अपने जीवनमें काम पर सयम प्राप्त कर लिया है।

समाजमें अधिकाश लोग विवाहित जीवनकी सीमामे भले रहते हो, परन्तु अुस सीमाके भीतर भी जो मनुष्य कामके वश होकर चलता है, वह कितना ही लम्पट बन सकता है। हम अपने घरकी चारदीवारीमें कैसे रहते है, यह भले ही हम अेक-दूसरेसे न कहते हो, परन्तु हमारा असयम — हमारी कामुकता छिपी नही रह सकती। वह तो दीवारोंके आरपार फूटकर प्रगट हो ही जाती है।

हमारी जनता युगोंसे गुलामीमें कुचली जाती रही है, और अुससे मुक्त होने लायक पराक्रम नही दिखा सकती। अिस स्थितिके चाहे जितने शिष्ट और सभ्य कारण दिये जा सकते हैं। परन्तु अुसकी जड़में हमारी छिपी कामुकता ही है, यह जान लेनेकी जरूरत है। वह हममे शौर्य चढने ही नही देती। अुसके कारण हमारा मन सदा घरमें ही भटकता रहता है। घरकी सलामती नष्ट हो, अैसे किसी खतरेके लिअे खडे होनेका साहस ही हमारे पैरोमें नही रह पाता।

हमारे नौजवान लडके-लडकियोमे स्वाभाविक परिस्थितियोमें बहादुर सिपाही और श्रद्धालु सेवक बननेकी अुमग पाअी जानी चाहिये। अुसके बजाय अुनमें नखरे, विला-सिता क्यो देखनमें आती है? क्या यह हमारी छिपी कामुकताका असर नही? आजन्म सेवा और साहसका व्रत लेकर निकल पडनेवाले ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणिया हमारे यहा बहुत ही थोडी निकलती हैं। अिसकी जडमे भी यही कारण मानना चाहिये।

घरमे कितने ही लपट बनकर रहनेकी वृत्तिको समाजमें प्रतिष्ठा मिल गअी, अिस-लिअे अुसका असर गावोमें रहनेवाले करोडो लोगो पर भी पडे बिना नही रहा। अैसी अपेक्षा रहती है कि अुनके भोले जीवनमें कामुकता स्वाभाविक तौर पर ही मर्यादामे रहेगी। परन्तु अेक बार अूपरके वर्गोंने अेक आचारको प्रतिष्ठित बना दिया कि अुसके अनुकरणके लालचसे गाववाले कैसे बच सकते हैं? अिस प्रकार हमारे गाव भी कामाघ और अविवेकी जीवनमें फस गये हैं। अिसके फलस्वरूप कमानेकी ताकत नही और खानेवाले बहुत, अैसी अुनकी हालत हो गअी है। हमारी जनताकी अैसी दीन दशा हो रही है, मानो वह मनुष्यसे किसी नीची योनिकी हो।

हमारे स्त्री-समाजकी स्थितिको देखें, तो वहा भी हम लोगोंके विषयीपनकी छाप दिखाअी दिये बिना नही रहती। अुन्हे हम जीवनके कोअी अूचे विचार करनेका मौका ही नही देते। अुनका सारा दिन हमारी सुख-सुविधाओका ध्यान रखने अथवा बन-ठनकर हमारी मेहरबानी बनाये रखनेमें जाता है। वे हमारी नजर परसे समझ जाती है कि अैसा करनेमें ही अुनकी खैरियत है। हमने स्वय देशसेवाका जीवन स्वीकार कर लिया हो, तो भी हम गृह-जीवनमें व्यक्तिगत सुख छोडनेको तैयार नही होते। अिसलिअे हमारा कुदरती रवैया यही रहता है कि स्त्रिया हमारी व्यक्तिगत सेवा करती रहे। अपने सेवा-जीवनमें अुन्हे हिस्सेदार बनानेके प्रयत्नमें हम अत्यत ढीले हैं; अिसका और कोअी स्पष्टीकरण है?

ब्रह्मचर्यके सिलसिलेमें हम लोगोने और भी कअी बलवान लक्षणोकी कल्पना की है। जो मनुष्य अपने कामको जीत लेता है, अुसे चाहे जैसा ढीला, सिद्धान्त-रहित और साहस-विहीन जीवन अच्छा नही लगता। अुसे अनुशासन-हीन, अनियमित और चौबीसो घटे अुद्योग-रहित जीवनमें दिलचस्पी ही नही होती। अुमे बुद्धिको मद रखना और लकीरके फकीर बने रहना भी पसन्द नही होता। वह अपना ज्ञान बढानेके प्रयत्न करनेमें कभी थकता ही नही। हमारे युवक और कुल मिलाकर हमारी जनता आज अिन गुणोमें कितनी नीचे गिर गअी है?

ब्रह्मचर्यके बिना हमारा सारा जीवन बिना रीढके शरीरकी तरह शिथिल रहता है। अुसमे दृढता और तेज आता ही नही। रोजके खानगीसे खानगी जीवनमें कोअी टेक या कोअी जोर पकडनेकी आदत नही होनेसे हम लोग सार्वजनिक जीवनमें भी तेज और पराक्रम नही दिखा सकते, सत्याग्रहके लिअे आवश्यक दृढता और शौर्य हममें अुत्पन्न नही होते। अहिंसाके पालनमें जो हसते हसते कष्ट अुठानेकी कला आनी चाहिये, वह भी हममे नही आ पाती। हम किसी भी प्रकारके कमजोर डठलोसे महल बनाने लगते हैं। तब फिर अुसमें रोज पीछे हटना पडे तो आश्चर्य कैसा? अिसलिअे हम सेवकोको तो व्यक्तिगत जीवनमें बलवान सुधार करके देशमे से कामुकताकी हवाको मिटा डालनेका प्रयत्न करना चाहिये।

कुछ व्यक्ति शायद अिन विचारोको अपना सकें, लेकिन सब लोग कब सुधरेंगे, अैसा निराशापूर्ण विचार करनेकी यह बात नही। हम सब कामुकताको प्रतिष्ठा देकर बैठ गये हैं, हम सब अुसकी अुपेक्षा करते हैं, अिसीलिअे अैसा होता है। हम अपने जीवनमे अिस स्थितिको मिटा देंगे, तो जनतामें वांछित सुधार अपने-आप हो जायगा। यह वैसी ही बात है जैसे आसपासकी हवा सुधरते ही लोगोका स्वास्थ्य अपने-आप सुधरने लगता है। देशसेवक अिस मामलेमे गभीर बन जाय, तो यह शुभ परिणाम थोडे ही अर्सेमें ला सकते हैं, अैसा हो तो सारी जनताका जीवन कामुकताका न रहकर सयमका बन जाय और जनतामे से तेजस्वी, वीर, बुद्धिमान, सत्याग्रही और सेवापरायण ब्रह्मचारियोकी फसल बहुत अधिक मात्रामें पैदा होने लगे।

अेक तो हमारी जनता कमजोर हो गयी है, अिसके सिवा, पश्चिमके विचार अुसमें अिस प्रकारका बुद्धिभ्रम पैदा करने लगे हैं, "काम तो प्रकृतिका दिया हुआ स्वभाव है। अुसे अकुशमें रखना असम्भव है। अिसलिअे अैसा व्यर्थ प्रयत्न क्यो किया जाय? कोअी ध्यान रखने जैसी बात हो तो अितनी ही कि देशकी आबादीको हमारे खाद्य आदि साधनोसे अधिक न बढने दिया जाय। अिसके लिअे हमारे वैज्ञानिकोने साधन ढूढ लिये है। अुनके द्वारा कामसुख भोगते हुअे भी हम आबादीके बोझसे बच सकेंगे।"

जब यह पुकार अुठायी जाती है कि अिससे लोगोंके शरीर क्षीण हो जायगे, तो डॉक्टरोका यह मत सामने रखा जाता है कि यह निरा भ्रम है, और जब यह चेतावनी दी जाती है कि अिससे मन निस्तेज, अस्थिर, अपराक्रमी और कामी बन जायगा, तो मानसशास्त्री अुसे वहम बताकर अुसकी हसी अुडाते है। भारतकी यह प्राचीन जनता कृत्रिम साधनोके बिना भी कामुकताकी शिकार बनकर शरीर-बल और आत्मबलकी दृष्टिसे किस हद तक निस्तेज और निष्प्राण हो गअी है, अिसका जीता-जागता प्रमाण देखकर भी क्या वे प्रयोगशालाके कमरोकी ही बातें करते रहेंगे? कृत्रिम साधन मनुष्यको अधिकसे अधिक सन्तानकी जिम्मेदारीसे मुक्त कर देंगे, परन्तु मुख्य वस्तु तो मनकी कामुकताको जीतकर जन-जीवनको प्राणवान बनाना है। वह कामुकता तो अुलटी जिम्मेदारीके न रहने पर सौगुनी बढ जायगी।

नही नही, हमें अिस पश्चिमी हवामें नही फसना है। अुन लोगोको अपने विज्ञानका मानो अपच हो गया है, अभिमान हो गया है। अुन्हे यह घमंड है कि, "हर मामलेमें हम भोग-विलासको पूरी छूट दे देंगे और फिर भी अपने विज्ञानके बलसे अैसे कृत्रिम साधन ढूढ निकालेंगे कि अुसके दुष्परिणामोसे हम मुक्त रहेंगे।" अिसके दुष्परिणामोसे कदाचित् मुक्त रहा जा सकता हो, परन्तु हम तो मानते हैं कि यह अिकरार करना ही मनुष्यके मनुष्यत्वको लाछन लगानेवाला है कि 'भोग-विलासको — कामुकताको जीतनेमें हम अशक्त हैं'। हम यह मानते है कि विज्ञानमे हम कितने ही आगे क्यो न बढ जाय, परन्तु यदि लोग कामी बन जाय, तो वे सच्चे स्वराज्यकी रचना कभी नही कर सकते। हमें तो आत्म-रचनाके द्वारा ही अपनी स्वराज्य-रचना करनी है, कृत्रिम साधनो द्वारा नही।

४. भोग-विलास पर संयम

[शरीर-श्रम]

आत्म-रचनाके लिअे अर्थात् जीवनमें सत्य-अहिंसाके सिद्धान्तोको गूथ लेनेके लिअे — आत्मबल बढानेके लिअे हमारे प्राचीन अृषि-मुनियोने जो तीन महान राजमार्ग बताये हैं, अुनका विचार हम कर चुके। अर्थात् अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्यका विचार हमने कर लिया। अब हम शरीर-श्रम वगैरा बाकी छह सिद्धान्तोका विचार करेंगे। वे हमारे युगकी परिस्थिति परसे निकाले हुअे नये सिद्धान्त हैं। असलमें वे अुपरोक्त राजमार्गोमें शामिल ही हैं, अुनके अुपमार्ग जैसे हैं। अस्तेय वगैराका पालन हमारे लिअे सरल कैसे बने, अिसकी गहराअीमें जाते ही हम देखते हैं कि अुसका अेकमात्र अुपाय शरीर-श्रम वगैरा सिद्धान्तोका पालन ही है।

अुनमें सबसे महत्त्वका सिद्धान्त है शरीर-श्रम। हमारे शरीरकी रचना और हमारे मूल स्वभावको देखते हुअे मेहनत करना, अपनी मेहनतसे रोटी कमाना, कुछ भी सृजन करना हमें आनन्द, अुत्साह और प्रेरणा देनेवाली वस्तु होनी चाहिये। परतु हम लोग तो अिस सम्बन्धमें बिलकुल अुलटे सिद्धान्त बनाकर चलते हैं

"शरीर-श्रमसे शरीर क्षीण होता है और बुद्धि भी मन्द हो जाती है। मेहनत करना तो बुद्धिहीन लोगोका काम है। मेहनत करना नीच लोगोका काम है, हलकापन है, असभ्यताकी निशानी है। शरीर-श्रमकी बेगारमें हम जिन्दगी बितायें, तो बुद्धिका विकास कब करे? वगैरा वगैरा।"

अब जिसे शरीर-श्रम अिस तरह कडवा लगता है, परन्तु सुख सभी भोगने हैं, वह और क्या करेगा? वह तरकीबें निकालेगा, बुद्धिको काममें लेगा और दूसरोंसे मेहनत करायेगा। क्योकि कोअी मेहनत न करे, तब तक सुखके साधन तैयार नही हो सकते। परन्तु दुनियामे दूसरेके हिस्सेकी मेहनत करनेको कौन तैयार होगा? प्रेमके खातिर तो मनुष्य दूसरेकी कितनी भी सेवा कर लेता है, परन्तु अैसे श्रमचोरके लिअे किसे प्रेम होगा? अुसने खुद कभी किसीके लिअे कष्ट किया हो तभी तो

दूसरा अुसकी सेवा करनेको तैयार होगा? अुसे तो लोगोंसे मजदूरी करानेके लिअे चालाकी, अन्याय और अत्याचारके ही रास्ते अपनाने पडेंगे। अुन्हे जीतना पडेगा, गुलाम बनाना पडेगा, बेकार बनाना पडेगा, शिक्षा-विहीन रखना पडेगा, गालिया देनी पडेगी और मारपीट करनी पडेगी। मेहनत न करके भोग भोगनेके रास्ते पर चलनेवाला मनुष्य कोअी भी पाप करनेमें यदि हिचकिचाये तो अुसका काम नही चलेगा। मेहनतकी चोरी बडे-बडे पापोका मूल है।

दुनियामे सर्वत्र लोग अिसी न्यायसे चलते आये है। हमारे यहा भी यही हुआ है। हमारे कुटुम्बो और जातियोकी रचनामें यह पाप काफी मात्रामें आ गया है। जिन्हे कमजोर देखा अुन्हे हमने अपने मजदूर बना लिया है। सबसे पहले तो पुरुषोने समूची स्त्री-जातिको अपनी गुलामीमें जकड लिया है। अुसके बाद शूद्रोका बडा समाज खडा कर दिया है। अिन सब मेहनत करनेवालोको हम नीच मानते हैं। वे कभी अूचे न हो जाय, शिक्षित न बन जाय, हमारे पजेसे छूट न जाय, अिसी दृष्टिसे हम सदा बुद्धि चलाते रहते हैं और अुन पर हमेशा अपना प्रभुत्व जमाये रहते हैं।

अब हमें सेरका सवा सेर मिल गया है। अग्रेज भी यही मानते हैं कि मेहनत किये बिना अमीर बन जाय और भोग-विलासमें लीन रहे। और अिस मामलेमें वे हमसे आगे बढे हुअे हैं। हमारा काम तो मामूली सुखसे चल जाता था, परन्तु अुनकी तो सारी प्रजाको बादशाही सुख भोगना है। बादशाहत आपसमे अेक-दूसरेको चूसनेसे नही मिल सकती। अिसलिअे वे समुद्रको पार करके हम पर चढ आये हैं और हम पर हुकूमत जमाकर हमें चूसते हैं। अिस प्रकार हमें अपने पापका फल ब्याज-सहित मिल रहा है।

बादशाही भोगना, अर्थात् परिग्रह बढाना और कामी व भोगी जीवन बिताना, निश्चित ही बडा पाप है। परन्तु वह भोग अपनी मेहनतसे न कमाकर दूसरोकी मेहनतसे प्राप्त करना अुससे भी बडा पाप है। खुद मेहनत करनी पडे तो भोगो पर थोडा-बहुत स्वाभाविक अकुश रह सकता है, परन्तु पराअी मेहनतसे भोग भोगने लगें तो वह अकुश नही रहता। फिर तो जितने भोग भोगते हैं अुतनी ही भूख बढती जाती है। घरसे सतुष्ट न होकर राज्य लेनेकी भूख पैदा होती है और राज्यसे सन्तुष्ट न रहकर साम्राज्यकी भूख जागती है। और फिर अुस भूखकी ज्वालामें दुनियामें किसीके लिअे कोअी सहानुभूति, ममता या अहिंसा रखनेसे काम नही चलता। दूसरेके परिश्रमका कैसे शोषण किया जाय, दूसरोका धन कैसे हडप किया जाय, अिसीमें बुद्धि रमती रहती है और कोअी कपट, कोअी अन्याय, कोअी क्रूरता और कोअी पाप न करने जैसा नही रहता। सत्यके साथ तो सदाके लिअे वैर बाध लेना पडता है।

अैसे भोगी, कामी, शरीर-श्रमकी निन्दा करनेवाले और जगतमें सबके द्रोही लोग अिकट्ठे होकर जो राज्य स्थापित करेंगे, वह कल्याणकारी कैसे हो सकता है? हमें अैसा स्वराज्य स्थापित नही करना है। हमे तो दूसरी ही तरहके स्वराज्यकी — सर्वोदय प्रदान करनेवाले स्वराज्यकी — रचना करनी है। अुसमें हमें शरीर-श्रमको

गौरवपूर्ण स्थान देना है, और अिसीलिअे हम अपनी आत्म-रचनामें भी अुसे गौरवका स्थान देते है।

परन्तु फिर पश्चिमसे मायावी आवाज आती है "मनुष्य जैसे बुद्धिमान प्राणीके लिअे पशुओकी तरह मेहनत-मजदूरी करना अुसकी बुद्धिका अपमान है। हम बुद्धिका अुपयोग करके तरह तरहके यत्र बनायेंगे, अुनमें हवा, पानी, धुआ और बिजली वगैराकी कुदरती ताकतोको जोड देंगे और मेहनत किये बिना आवश्यक और आवश्यकसे भी अधिक सुख-सुविधाके साधन तैयार कर लेंगे और अुनके द्वारा अैसा सुख भोगेंगे जैसा आजसे पहले राजाओ और अमीरोने भी नही भोगा होगा। यह सच है कि अैसा करनेसे पूजीपतियोंके हाथोमें ससारके अधिकाश मनुष्य गुलामो और नौकरोकी तरह बन गये है और पशुसे भी हीन जीवन बिताने लगे है। परन्तु अब हम चेत गये है। हमने जैसे फौलादकी मशीनें बनाअी है, वैसे अब राज्यतत्रकी भी जैसी और जिस करामातकी चाहिये वैसी मशीनें बना लेंगे। अुनके बलसे हम सबको समान बना देंगे। पूजीवादियोकी पूजी ले लेंगे और सबको समान स्तर पर रखेंगे। हमारी राक्षसी मशीनें अितने साधन और सुविधायें जुटा देनेमें समर्थ हैं कि सबको समान रूपसे बादशाही सुख-भोग प्राप्त हो सके।"

यह मायावी आवाज दूसरोकी बेगार करके शरीरसे, मनसे और आत्मासे भी छिन्न-भिन्न हो चुकी जनताको आकर्षक लगती है। परन्तु लोहे और राजनीतिके यत्र कैसे भी क्यो न बना लें, तो भी अुनसे मनुष्य-जीवनका सच्चा विकास कर सकनेकी आशा रखना गलत है, सुख-भोग प्राप्त करनेकी आशा भी गलत है। हम तो यह भी मानते है कि भोगेच्छामें रमे रहने और शरीर-श्रमसे बचनेका व्यर्थ प्रयत्न करनेके विचार ही वास्तवमें नीचे है, मनुष्यकी मनुष्यताको नीचे गिरानेवाले है।

५. आत्म-रचनाका 'बायें-दाहिने'

[अस्वाद]

अिस विषयमें आहार-सम्बधी वार्तालापमें मैं काफी कह चुका हू। जीभकी स्वाद-लोलुपताकी बात छोटी है, परतु अुसके प्रति लापरवाही रखना ठीक नही। जीभ और शरीरकी दूसरी अिद्रिया, सब हमारे जीवनमें अुपयोगी सेवाके लिअे ही हो सकती है, अुनके अपने स्वादके लिअे कभी नही। जीभका काम अमुक वस्तु खाने लायक है या नही अिसकी परीक्षा करना ही हो सकता है। पेटमें भूख न हो तो भी जीभके स्वादके खातिर चाहे जो चीज मुहमें डालते रहना जीभका केवल दुरुपयोग है। यह अभिमान रखना हितावह नही कि खाने-पीने जैसी व्यक्तिगत बातोमें हम कुछ भी करते रहे, अुससे हमारे सार्वजनिक कामोमें कोअी बाधा नही पडती। जीभका स्वाद फञ्चरकी नोक ही है। अुसे तुच्छ समझकर जीवनमें घुसने दें, तो वह सारे जीवनको फाडकर छिन्न-भिन्न बना देती है।

अस्वादकी बात छोटी है, परतु तालीममें — आत्म-रचनामें अैसी छोटी बातें ही बडा फल देनेवाली बन जाती है। 'बायें-दाहिने' करना आना और बिगुलकी आवाज सुनते ही दौडकर पहुच जाना छोटी बातें है, परतु वे फौजी शिक्षाके पहले पाठ है। अुनसे सिपाहीके जीवनको निश्चित रूप मिल जाता है। वही स्थान अहिंसात्मक सत्याग्रहके सैनिकोकी तालीममे अस्वादका है। अिससे अुनके जीवनको अेक निश्चित रूप प्राप्त होता है। अिससे अुन्हे हमेशा यह याद रहता है कि अुनकी कल्पनाके स्वराज्यकी रचना सयम और सादगीके आधार पर होगी।

६. लडाका सत्याग्रह

[अभय]

हमारी स्वराज्य-रचनामे हमें पीछे हटानेवाली किसी अेक वस्तुका नाम लेना हो, तो वह हमारी भीरुता ही है। लम्बे अरसेसे हमारे भीतर रहा शौर्यका गुण नष्ट करने और हममें डरपोकपन पैदा करनेका योजनापूर्वक प्रयत्न चल रहा है। हमारे तमाम हथियार छीन लिये गये है और हमें निहत्थे बनाकर हमारी छाती पर सिरसे पैर तक हथियारोंसे लैस सरकार चौबीसो घटे गुर्राती हुअी खडी रहती है। बहादुरसे बहादुर लोग भी अैसी दशामें लम्बे समय तक रहे तो डरपोक बने बिना कैसे रह सकते है?

हमारे कुटुम्ब-कबीले और माल-असबाबकी रक्षा करनेमें हमारी हड्डियोमें घुसा हुआ यह डरपोकपन सदा बाधक होता है। अिसलिअे हम व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनो अवसरो पर कितना पामर और लज्जाजनक दृश्य अुपस्थित करते है। आपसी झगडोमें हमारी सारी बहादुरी मुकदमेबाजीमें खतम होती है। बाहें चढा चढा कर हम विरोधीको पुलिससे पकडवा देनेकी, अदालतमें घसीटनेकी और बेडिया डलवानेकी धमकी देना सीख गये है, और हथियारबन्द डाकू-लुटेरे आ जाय तो हम बाल-बच्चोको घरमें अकेले छोडकर भाग जाते हैं। अितना ही नही, गावकी सीमामें बाघ-चीते जैसा जगली जानवर आ जाय, तो भी सरकारसे प्रार्थना करनेके सिवा हम दूसरा कुछ करनेकी स्थितिमें नही रहते।

अैसे डाकुओका भय तो किसी किसी दिन होता है, परन्तु हमारे सिरो पर रात-दिन जो डर लटकता रहता है, वह तो सरकारी कर्मचारियोका है। वे हमारे गावोमें तो मौतका-सा असर पैदा करते है। भय और आतक फैलानेको जब वे हमारे बीचमें आते हैं, तब खास तौर पर डरावनी पोशाक पहन कर आते है। अुनके सामने सिर अूचा करनेवालेको वे पुलिसके और अदालत, जेल, जुर्माना और जब्ती वगैराके कैसे चक्करमें डाल देते है, यह हम कभी कभी आखोसे देखते है और सदा अुनसे डरे हुअे रहते है। अुनकी गालिया और अपमान हम नीचा सिर करके सह लेते है। गावके बीचमें अुनकी गालिया सुन सुनकर हम हिम्मत और अिज्जत दोनो खो बैठे है।

और स्वराज्यके बारेमें हमारी जनता पूरी तरह जानती है कि सरकारके पास नयेसे नये ढगके शस्त्र और फौजी सामान है तथा सदा सुसज्जित रहनेवाली सेनाये है, जब कि हमारे पास भोथरी छुरी भी नही रहने दी गअी है। अुसके खिलाफ लडनेकी हिम्मत ही दिलमें कैसे पैदा हो सकती है? अग्रेज लोग अूपरसे कानूनका दिखावा करनेका जो शौक रखते हैं, अुसे देखकर हम कानूनकी मर्यादाका ध्यान रखकर सभायें करते है, भाषण देते हैं, अखबार निकालते हैं, अपने दु खोका रोना रोते है और अुनके कानूनसे मेल खानेवाली अर्जिया लिखकर भेजते हैं। अपनी सारी बहादुरी हम अिसमें खर्च कर देते है। परन्तु निर्बल लोगोकी चिल्लाहट लम्बे समय तक कौन सहन करे? सरकार घुडकिया देती है कि हम तुरन्त -कायर बनकर घरमें घुस जाते है।

अिस प्रकार हमारी वर्तमान भयभीत दशा हमारे स्वभावमें पैदा हुअी वस्तु नही है, परन्तु हममें योजनापूर्वक दाखिल की गअी है। अब तो पुरानी आदतके कारण वह हमारा स्वभाव जैसी ही बन गअी है।

अिससे हमारा अुद्धार कैसे हो? हमे हथियार मिलनेकी आशा नही और सरकार तो दिन-दिन अपना सैनिक बल बढाती ही जाती है, कानूनो और कर्मचारियोका भय बढाती ही जाती है। परन्तु हमारे सौभाग्यसे हमारे नेताओने अहिंसात्मक सत्याग्रह ढूढ निकाला है। अुसका हम अपनेमें विकास कर ले, तो हथियारोके बिना भी हम बहादुर बन सकते हैं, अपने घर और गावकी रक्षा कर सकते है और स्वराज्यकी लडाअी लड सकते है। सच्ची वीरता हथियारोमे नही है, परन्तु अिस बातमें है कि हमारे हृदयमें साहस और निर्भयता हो। हथियार मिलनेकी आशामें बैठे रहनेकी अपेक्षा हृदयकी वीरता, हृदयका अभय-गुण विकसित करना ही अिसका सच्चा अुपाय है।

परन्तु डरपोक बने हुअे हम लोग अहिंसा और सत्याग्रहका अर्थ भी अपने भीरु स्वभावके अनुसार ही लगा लेते हैं। हम मान लेते है कि यह अेक खतरेसे रहित लडाअीका प्रकार है। अिसमें हमे कोअी जानसे नही मारेगा, हमें लूटेगा नही, हमारे गावको तोपसे अुडा नही देगा, अधिकसे अधिक जेलमें बन्द कर देगा और वह भी अुन्ही लोगोको जो जान-बूझकर कानून भग करने निकलेगे। हम मानते है कि सत्याग्रह हमारे होशियार नेताओकी ढूढी हुअी अेक विलक्षण युक्ति है, जिससे सरकार हार जाती है और हम खतरेसे बच जाते है।

परन्तु अैसा बिना खतरेका खेल तो जब तक सरकार सत्याग्रहकी नअी चीजसे अनभिज्ञ थी तभी तक चल सका। जब अुसे पता चल गया कि यह तो सच्चा खेल है, स्वतत्रता लिये बिना हम चैन लेगे ही नही, जब अुसने देखा कि हम जो डरपोक थे, अब धीरे-धीरे सत्याग्रहके शौर्यमें आगे बढते जा रहे है, तो वह अपने पजे बाहर निकालने लगी। निहत्थे लोगो पर प्रबल शक्तिका अुपयोग करनेमें अुसे शुरूमें जो शरम मालूम होती थी, वह शरम अब अुसने छोड दी है। अैसी हालतमें अगर

हममे से कोअी किसी जगह अुसके जुलमसे तग आकर हाथ अुठाता है तब सरकारको सख्त हाथोसे काम लेनेका वहाना मिल जाता है।

अब हम देखते है कि हमने अपने शौर्यहीन मनमे सत्याग्रहके बारेमें जैसी कल्पना की थी, वैसा बिना खतरेवाला वह नही है। किसी भी युद्धमें रहनेवाले खतरे अिसमें भी मौजूद है। अुनमे से जेल तो हलकेसे हलका खतरा है — मानो फूलोकी मार मारी जाती हो। माल-असबाबकी लूट अिसमें भी अच्छी तरह होती है। हमें अुग्र बनकर सत्याग्रह करना आता हो तो अुसमे लाठिया भी पडती है और गोली भी चलती है। हम अधिक बहादुरीसे लडें, तो गावको अुडा देनेके प्रसग भी अुसमे जरूर आ सकते है।

यह जरूरी है कि सत्याग्रहको दुर्बलोका बिना खतरेवाला हथियार समझनेके बजाय हम अुसका सच्चा स्वरूप समझ ले और अैसे तमाम जुल्मोके सामने भी न दबनेका अभय-बल अपने दिलमे पैदा कर ले।

शौर्य हृदयमे किस तरह पैदा किया जा सकता है? साधारण मान्यता यह है कि कसरत करे, कवायद करे, सैनिक ठाटकी पोशाक पहने और हथियार बाधकर घूमने लगे, तो ही वह गुण आ सकता है। अैसा खयाल रखनेवाले लोग सत्याग्रहके मार्गको शौर्यका हनन करनेवाला मार्ग मानते है। कुछ लोग अिस बातकी भी हिमायत करते है कि सरकारको किसी भी तरह राजी करके अुसकी फौजमें भर्ती होकर हथियार धारण किये जाय, तो हममें बहादुरीका गुण आ सकता है। लेकिन हमे बहुत समयसे हथियार देखनेको नही मिले, अिसीलिअे हमें हथियारोका अैसा मोह है, अन्यथा अैसे हथियार धारण करनेवाले सिपाही तो जानते है कि अिस तरह पराअी नौकरीमें धारण किये हुअे हथियार बहादुरीके चिह्न नही, बल्कि गुलामीकी जजीरें ही है।

अिसलिअे अच्छा यही है कि हम अिस मोहसे मनको हटाकर अपने हृदयमें ही शौर्य अुत्पन्न करनेके अुपाय काममें लें। परमेश्वरकी कृपा है कि हम चाहें तो वह बल हृदयमें पैदा किया जा सकता है। क्या हम बहुत बार नही देखते कि कमजोर और निसत्त्व मनुष्य भी जोशमे आ जाते हैं तब भारी खतरेके काम कर डालते है? प्राणोका खतरा जिसमे हो अैसे तूफानमे भी वे कूद पडते है? क्षणिक क्रोध और मूर्खतामें यदि अैसा जोश पैदा करनेकी शक्ति है, तो देशभक्ति, स्वराज्य हासिल करनेकी तमन्ना, दारिद्रय-पीडित जनताके प्रति सेवाकी भावना — आदिसे तो जोशका कितना अटूट स्रोत प्राप्त किया जा सकता है?

यह जोश सौभाग्यसे हममें काफी मात्रामें है। हमारे शूरवीर और त्यागी नेताओकी छूतसे अुसमें दिनोदिन वृद्धि हो रही है। परन्तु हमारा जोश अभी तक बहुत अल्पजीवी होता है। हममें वीरताका अुभार तो आता है, पर वह थोडी ही देरमें बैठ जाता है। हम लडाअी छेडने और सकट सहनेके लिअे तैयार तो होते है, परन्तु अुस स्थितिमें लबे समय तक टिक नही सकते।

अैसा क्यो होता है? हमें आरामदेह सुख-सुविधाओंमें रचे-पचे रहनेकी आदत पड गअी है, और जिस बातसे अिसमें बाधा पैदा होती है अुससे हम बिलकुल कायर बन जाते है। यह तुरन्त स्वीकार करना हमें अच्छा नही लगता, हमें अुसमें शरम आती है। हम अभिमानसे कहते है, "रोज हम कैसा भी जीवन क्यो न बितायें — हम कोअी त्यागी या आश्रमवासी नही हैं, परन्तु जब पुकार होगी तब पीछे रह जाय तो कहिये।" अिस प्रकार अपने-आपको धोखा देकर हम अपने प्रयत्नमें लापरवाह रहते हैं।

हम जीवनके बारेमें बेपरवाह रहनेको ही मानो अपना धर्म बना लेते है, अपने घरको अैश-आराम और भोग-विलासकी भूमि बना देते है। खाने-पीनेमें जीभको लाड लडाना, कामकाजमें आलस्य करना, सुख-सुविधामें किसी प्रकारकी बाधा न होने देना और विषय-भोगकी तृप्ति ही हमारा घरेलू जीवन है। स्वभावमें से वीरता और साहसकी जडें खोद डालनेके लिअे अिससे अधिक कारगर जीवन बिताना सभव नही। हमारे स्वराज्य — स्वतत्रताके आदर्शोंको और हमारी वीरताको पोषण देनेवाली हवा ही हम वहा नही रखते।

अैसे घरेलू जीवनमें मशगूल रहनेसे, छप्परके नीचे बहुत समय तक रखे रहनेवाले पौधेके जैसा फीकापन हमारे स्वभावमें आ गया है। हमारी सहन-शक्ति क्षीण हो गअी है और साहस-वृत्ति मारी गअी है। खाने-पीने वगैराकी शारीरिक सुविधाओके सामने हम जो लाचार हो गये हैं और सीधा सवध न बता सके तो भी मारका और मौतका हम लोगोमें जो बडा डर घुस गया है, वह भी अिस भोगमय गृह-जीवनका ही परिणाम है।

अिसलिअे चाहे जैसा जीवन बिता कर भी हम अपनी देशभक्ति और वीरताको कायम रख लेंगे, अैसा अभिमान न रखकर अपने दैनिक जीवनमें अुन्हें दिनोदिन अधिक पुष्ट करनेकी सावधानी रखना ही अच्छा है। दैनिक जीवनकी रचना अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अस्वाद और शरीर-श्रमके सिद्धान्तो पर करनेसे हम अपने भीतर शौर्यका — अभयका गुण विकसित कर सकते हैं।

हमारी अुगती सन्तानोको अैसा स्वस्थ घरेलू जीवन न मिलनेके कारण खतरो-भरी और लबे कष्ट-सहनकी लडाअीके प्रति अरुचि और मृत्युका भय अुनकी हड्डियोमें रम जाता है। अुठकर खडे होते ही अुन्हे कुछ कर दिखानेकी चिन्ता कुतरने लगती है। छोटे बच्चे भी बीमार मा-बापकी सेवाका कर्तव्य छोड देंगे, परन्तु परीक्षा छोडनेको तैयार नही होगे — अेक साल बिगाडनेका साहस नही दिखा सकेंगे। बडी अुम्रके विद्यार्थी शुरूमें वीरता दिखाते हैं, परन्तु अुनके मन भी परीक्षाके दिन ज्यो-ज्यो नजदीक आते है, त्यो-त्यो ढीले पडने लगते हैं। हम माननेको तैयार हो या न हो, परन्तु जब तक दैनिक जीवन भोग और आरामकी बुनियाद पर खडा रहेगा, तब तक दीर्घजीवी साहस और शौर्यको पोषण मिलना सभव ही नही। शरीर और मन अैन मौके पर पीछे हट जाते हैं और हमसे मनुष्यको शोभा न देनेवाला पलायन कराते हैं।

हमारी मूक ग्राम-जनता अितनी मूढ और निराशामय स्थितिमें आ फसी है कि अुसे अपने दुःखका और वह दुःख कहासे आया है अिसका पूरा पता ही नही है।

असलिअे शिक्षितोको देशभक्ति और आजादीकी भावनाओंसे जो बल मिलता है, वह ग्रामवासियोके हृदयोंको नही हिला सकता। अिस स्थितिसे मुक्त होनेकी शक्ति अुनके भीतर है, असका अुन्हे भान ही नही होता। अुनकी दरिद्रताने और सरकारी कर्मचारियोके भयकर बरतावने अुन्हे भयभीत और लाचार बना दिया है। अुन्हें वीर देशभक्त बनानेके लिअे अेक ही बातकी जरूरत है — अुन्हें नीदसे जगाया जाय, अुनकी स्थितिका अुन्हें भान कराया जाय, और अुनके भीतर सोओ हुओ शक्तिका अुन्हें परिचय कराया जाय। अुन्हे हम जगायेंगे तो अहिंसामय सत्याग्रहका कीमिया अुन्हें तुरत ही पसन्द आ जायगा। यह चीज जैसी हमे अपरिचित लगती है, वैसी अुन्हें नही लगती। वे तो जागे कि समझ लीजिये अुनका भय भागा।

अुन्हें जगाने जाना भी हमारे लिअे अेक बहादुरीका ही काम है। हमारा अखबारोका शोरगुल अुन तक नही पहुचेगा। हमारे भाषण वे समझेंगे नही। भयभीत दशाके कारण अुन्हें हम पर और हमारी जबानी बातो पर तुरन्त विश्वास नही होता। सबसे डरकर रहनेकी आदतवाले ये लोग हमसे भी डरकर चलनेमें ही अपनी सलामती मानते है। अुन्हे जगानेके लिअे अुनके बीच जाकर हमें अुन्हीके जैसे बनकर रहना होगा, अुनके साथ बसकर अुनके चारो तरफसे छिन्न-भिन्न जीवनकी पुनर्रचना करनी होगी।

यह तभी किया जा सकता है, जब हम सुख-सुविधा और भोग-विलाससे भरे घरोकी ठडी छाया छोडनेका शौर्य धारण करें, परीक्षाओ और यशको गवा देनेका भय छोड दें। अिसमे साहस और शौर्यकी जरूरत पडेगी। सत्याग्रहके समय जो शौर्य हमें धोखा देता है, वह क्या अिस काममें हमारा साथ देगा? यह शौर्य पैदा करनेके लिअे भी भोगी, कामी और सुख-सुविधाका जीवन छोडकर सैनिक जीवन बितानेकी आदत डालनी पडेगी।

रचनात्मक कामके लिअे ग्राम-जीवन अगीकार करनेमें हमें दोहरा लाभ है। वहा हमें लोगोका जीवन बनानेके साथ अपना जीवन बनानेका भी अवसर मिल जाता है। आज हम गावोमें सेवकके रूपमें बसनेका शौर्य दिखायेंगे, तो वहाका निवास हमे अपनेमें पूर्ण सत्याग्रहीका शौर्य — प्राण निछावर करने तकका शौर्य पैदा करनेमे सहायक सिद्ध होगा। हमें जो अभय अथवा शौर्य चाहिये, अुसे पैदा करनेका यही अेक तरीका है। शस्त्र धारण करना या फौजी पोशाक पहनना अुसे पैदा करनेका सही तरीका नही है।

७. विशाल स्वदेशी

स्वदेशी आन्दोलन हमारे देशमे किस प्रकार शुरू हुआ और बढता गया, अिसके वर्णनमे आज मुझे नही जाना है। अुसकी सामान्य जानकारी आप सबको है ही। अुसके परिणामस्वरूप ही तो हम सबमें स्वदेश-भक्तिकी भावना पैदा हुअी है।

परन्तु केवल भावना अुत्पन्न होनेसे ही हम सतोष नही कर सकते। अिस भावनाका विकास करते करते हम अुसे अितनी अुत्कट बना लेना चाहते हैं कि स्वदेशके खातिर किसी भी हद तक त्याग या कष्ट सहन करनेमें हम कभी पीछे

न रहें, स्वदेशके नाम पर सारी जिन्दगी बेघरबार बनकर भटकना पडे या कारा-वासमें सडना पडे, तो भी हमें कभी कायरताका विचार न आये, स्वदेशका कार्य करनेके लिअे स्कूल-कॉलेजकी पढाअीका त्याग करने, साहित्य-विलासकी कुर्बानी करने, तथा यश और कीर्तिको आग लगा देनेका हमें कभी पछतावा न हो, देशके चरणोमें सिर चढा देना हमें देवताको फूल चढाने जैसा आसान लगे।

स्वदेश-भक्तिकी भावनाको अितनी तीव्र बनाना केवल देशभक्तिके गीत गानेसे, नारे लगानेसे अथवा राष्ट्रीय साहित्य पढते रहनेसे भी सभव नही होगा। अिसके लिअे तो हमें अपने दैनिक जीवनमें स्वदेशीपन अर्थात् व्यवहारमें देशके प्रति भक्ति प्रगट करनेका आग्रह पैदा करना होगा।

हम अपने जीवनकी जाच करें तो मालूम होगा कि मौखिक भक्ति, अथवा गीत गानेकी भक्ति होने पर भी क्रियात्मक देशभक्तिमें हम बहुत ढीले है।

हम कहते हैं कि हमारे गाव ही हमारा देश है, पर अुन स्वदेशी गावोमें बसनेकी नौवत आ जाय तो वहाकी दरिद्रता, गदगी, बीमारी, सभ्यताके साधनोका अभाव वगैरासे थोडे ही समयमें हम अूब जाते हैं।

हम अपने स्वदेश-बधुओके प्रेमके गीत भी गाते हैं, परन्तु क्या हम अुन अपढ, भोले, स्वदेशी ग्रामवासियोके साथ अेकजीव बनकर रह सकते हैं? अुनके साथ रहकर, अुनके जैसी असुविधाअें भोगकर, अुनके जैसा मेहनती जीवन बिताकर, अुनके हास्य-विनोदमें शरीक होकर, अुनके साथ हृदयकी गाठ बाधकर हम अपना प्रेम प्रगट कर सकते है? हम अुनके प्रति अेक प्रकारकी अरुचि, अुनके सहवाससे अुकताहट दिखाये विना शायद ही रह सकते है।

हमारी स्वदेशी भाषाओको ही लीजिये। वे हमें प्रिय हो तो अुनके लिअे अपना प्रेम हम किस अमली ढगसे प्रगट करते है? क्या हमने परिश्रम करके राष्ट्रभाषा सीख ली है? क्या हम अग्रेजीमें बोलकर अपने ग्रामवासियो पर अेक प्रकारका रोव जमानेका अभिमान छोडते है? क्या हम बोलने और लिखनेमें स्वदेशी भाषाके लिअे सजीव आग्रह रखते है?

और यदि हमें स्वदेशीका सच्चा अभिमान हो, तो क्या स्वदेशी वनावटकी चीजो पर हमारा स्वाभाविक प्रेम है? हम अपने व्यक्तिगत जीवनमें स्वदेशी वस्तुअें ही काममें लेनेका कितना अुत्कट आग्रह रखते हैं, अिसी परसे हमारे स्वदेश-प्रेमका अदाज-लगाया जा सकता है, मुहसे बताये जानेवाले प्रेमसे हरगिज नही।

हम जानते है कि हमारे देशके अुद्योग-धधे नष्ट हो गये हैं और अुन्हें हर प्रकारसे प्रोत्साहन देना चाहिये। फिर भी हम मशीनोकी चमकीली वस्तुअें अिस्ते-माल करनेके शौकीन वन गये हैं। हमें गावोमें वनी हुअी खादी मोटी लगती है, गावोके जूते पैरोमें काटते है, कुम्हारके कवेलूके वदले छत पर टीन डालना अच्छा लगता है, अपने शौकके लिअे चाहे जितनी महगी टोपी, धोती, कोट, जूते और फाअुन्टेनपेन वगैरा खरीदनेमें सस्ते-महगेका सवाल कभी वाधक नही होता, परन्तु

स्वदेशी ग्रामोद्योगोको प्रोत्साहन देनेके लिअे गावके जुलाहेको मिलसे दो पैसे अधिक देनेका मौका आने पर हमारी अुदारता न जाने कहा चली जाती है? अैसे व्यवहारोमें प्रगट होनेवाली ढीली देशभक्ति महान सकटोंके समय हमारा साथ कैसे दे सकती है?

स्वदेशी लोग, स्वदेशी गाव, स्वदेशी भाषाअें, स्वदेशी अुद्योग-धधे आदिके क्षेत्रोमें अपने दैनिक जीवनको स्वदेश-भक्तिसे रग देना, अपने नीचे दरजेके शौकोको अुसमें वाधक न वनने देना — हमारी आत्म-रचनाका अेक वडा जरूरी क्रियात्मक भाग है।

८. अूंचनीच-भेदका जहर

[अस्पृश्यता-निवारण]

अस्पृश्यता-निवारणके सवधमें आप अैसा विवाद अुठायेंगे "देशसेवाकी भावनावाले तथा सत्याग्रहके सैनिक वननेकी तमन्नावाले हम लोगोको भी आप अस्पृश्यता-निवारणका अुपदेश करेंगे? क्या आप यह मान लेंगे कि हम अितना भी नही समझते?" परतु अिस विषयमें आप जितना समझते होंगे अुससे कही गहरे हमें अुतरना होगा। हम जितना कुछ जानते हैं अुतना और अुससे भी वहुत अधिक जीवनमें अुतारना होगा और वह सब आधे मनसे नही, परतु सच्चे हृदयसे अुतारना होगा।

हरिजनोको छूनेमें हम आपत्ति न मानें और अुन्हें 'हरिजन' के नामसे पुकारें, सिर्फ अितनेसे ही काम नही चल सकता। हमें अिस सिद्धान्तके मर्ममें अुतरकर अुसका अैसा पालन करना होगा कि अुससे हमारी आत्म-रचना हो और अुसके फलस्वरूप हममें स्वराज्य-रचनाका वल अुत्पन्न हो।

हरिजनोका स्पर्श करनेका अर्थ केवल अुनका स्पर्श करना ही नही है, परतु अुन्हें अपना लेना है। अुनके मनमें यह खयाल ही न रहना चाहिये कि वे अलग हैं या दूसरोसे नीचे हैं। तभी यह कहा जा सकता है कि हमने अस्पृश्यता-निवारणके सिद्धान्त पर सचमुच अमल किया है। हमारे सच्चे अमलकी परीक्षा यही है कि अुसके फलस्वरूप हरिजन अन्य भारतीयोकी तरह खुद भारतीय होनेका अभिमान करने लगें और स्वराज्यके कार्यमें सबके साथ कधेसे कधा मिलाकर जुट जाय। अग्रेज भी अुनके और हमारे बीच फूट न डाल सकें, हमारे लिअे हरिजनोंके मनमें विलकुल अविश्वास न रह जाय।

यह परिणाम अूपर अूपरकी 'दिखावटी' सेवासे नही लाया जा सकता। अुन्हें छूना, अुन्हें सभाओ और पाठशालाओमें स्थान देना, अुनके मुहल्लोमें कभी कभी सभा या भजन करने जाना ही काफी नही होगा। अुन्हें छात्रवृत्तिया देकर पढनेमें मदद करना और नौकरिया दिलाना भी काफी नही होगा।

कुअें और मदिर अभी तक अुनके लिअे खुले नही हैं। सवर्णोमें वडा विरोध खडा हो जायगा और वडी लडाअी छिड जायगी, अिस डरसे अिस प्रश्नको हमने अेक तरफ डाल दिया है। कही कही अुनके लिअे हम अलग कुअें, अलग पाठशालाअें और अलग मदिर बनवाते हैं, परतु यह तो दयाभावसे की जानेवाली सेवा हुअी। हमें तो

अुन्हें न्याय देना है, अुनका दुःख ही नही मिटाना है, परन्तु अुनके अपमान और तिरस्कार भी मिटाने हैं। अुनके लिअे कुअें और मदिर खुलवानेका आन्दोलन हम पूरे वेगसे छेडेंगे और अुसमें तीव्र सत्याग्रह करके बलिदान देनेको तैयार होगे, तभी हरिजनोके अन्तरमें हमारे प्रति रहा अविश्वास हटेगा।

हमारे मनमें भेदभावका जहर जरा भी न रहने देनेके लिअे हमें अपने दैनिक जीवनमें सावधानी रखनी पडेगी। छोटासा बच्चा भी, अुसके साथ बोलने और खाने-पीनेमें भेदभाव बरता जाय तो, अुसे समझे बिना नही रहता। तो हरिजन हमारी आखो परसे हमारे मनके भीतरका भेदभाव समझे बिना कैसे रह सकते हैं? क्या हम अुन्हें अपने घरमें प्रेमसे बुलाते हैं? क्या अुन्हें साथ बिठाकर खिलाते समय हमारे मनकी गहराअीमें शका नही रहती है? क्या अुनके बालकोके साथ हमारे बालक खेलें, तो हम भीतर ही भीतर नाराज नही होते हैं? क्या हमें भीतर ही भीतर यह शका नही रहती है कि अुनके बच्चोके साथ खेलनेसे हमारे बच्चोमें बुरे सस्कार पडेंगे? क्या हम चुपके-चुपके अपने बच्चोको अैसा न करनेकी सीख नही देते है? अैसा भेदभाव हममें जरा भी होगा तब तक हम हरिजनोके अन्तरमे विश्वास, प्रेम और मैत्री कैसे पैदा कर सकेंगे? अुन्हें पैदा करनेके लिअे तो हममें से बहुतोको अुनके बीच रह कर जीवन अर्पण करना पडेगा, अुनके धन्धे सीखने पडेंगे, अुन्हें अच्छीसे अच्छी शिक्षा देनी पडेगी। अुनके साथ बसकर हमें स्वय यह अनुभव करना पडेगा कि अन्याय और तिरस्कार अुन्हें कहा कहा बाधक होते हैं, अछूत होनेके कारण अुन्हे कहा कहा दुःख भोगने पडते हैं, और अुनके खातिर आगे बढकर सत्याग्रह करने होगे।

हमारा अस्पृश्यता-निवारणका काम अितना तेजस्वी होगा, तभी अुससे हमारी आत्म-रचना हो सकेगी और हममें स्वराज्यकी शक्ति भी पैदा हो सकेगी।

और अस्पृश्यता-निवारणकी बात तो अिससे भी बहुत अधिक व्यापक है। हमने अूच-नीचके भेदोसे सारे समाजके जीवनको जहरीला बना दिया है। हमारे गावोमें रहनेवाले दुःखी, दरिद्री देशबधुओको हम छूते तो हैं, परतु और सब तरहसे अुनके साथ कैसा अशिष्टता और अपमानका बरताव करते है? हमने अुनके जो नाम रखे हैं, अुनसे हमारे मनका मैल पहचान लिया जाता है। हम किसीको 'कालीपरज' कहते हैं, किसीको 'दुबला', किसीको 'धाराला', तो किसीको 'वाघरी'* कहते है। अुन्हे हम शूद्र और मजदूर मानते है। अुन्हें सम्मानसे बुलानेकी तो बात ही क्या, हम अुन्हें मनुष्य ही नही गिनते। गावकी आबादीकी गिनती करते हैं, तब अुनकी सख्या हमे याद ही नही आती। गावके प्रश्नो पर विचार करने बैठते हैं, तब अुनके सवालोका हमें खयाल ही नही आता। देशके आन्दोलनोमें भी हम अुन्हे सदा टालते रहते है। हमारे मनमें और हमारी बातोमें सदा यही भाव रहता है कि अुनके जन्मके सस्कार कभी नही मिटेंगे, वे कभी नही सुधरेंगे।

* ये सब गावकी हलकी मानी जानेवाली आदिम जातियोके तिरस्कारसूचक गुजराती नाम हैं।

हमारे अैसे व्यवहारकी जड बहुत छिपी हुअी नही है। हम जानते है कि अुनकी मेहनतके शोषण पर ही हमारे सब धधे चल रहे है। जब तक वे अज्ञानमे डूबे रहेंगे, स्वतन्त्रताके विचारोसे दूर रहेंगे, तभी तक हमारा अैसा व्यवहार वे सहन करेंगे। अिसलिअे अिन वर्गोमे शिक्षा, शराबबदी, जाति-सुधार और कताअी-बुनाअी जैसे रचनात्मक काम कोअी करता है तो हम बहुत चौंक जाते है। हमे डर लगता है कि अिन निर्दोष मालूम होनेवाली प्रवृत्तियोसे अुन लोगोका ज्ञान बढ जायगा और वे स्वतत्र स्वभावके बन जायगे। अुनके बीच सीधा स्वराज्यका आन्दोलन कोअी छेडे, तब तो हमे वह अति भयकर अुत्तेजना जैसी ही लगती है।

भेदभावका यह हलाहल जहर हमारी जनतामें स्वराज्यकी शक्ति कैसे आने देगा? हमारे देशकी अधिकाश आबादी अैसे लोगोकी ही है। अुनके आगे आनेसे यदि हम चौंके, तो हम थोडे पढे-लिखे लोग स्वराज्यकी रचना कैसे कर सकेंगे?

हम सेवकोको, जैसा काम हम अछूतोमे करते है, वैसा ही अिन सब पिछडे हुअे वर्गोमे भी करना होगा। जब तक अुन सबके साथ हमारे सबध नही सुधरेंगे, अुन सबका प्रेम और विश्वास हम सम्पादन नही करेंगे, अुन सबको स्वराज्यकी लगन नही लगायेंगे, तब तक हमारी अपनी और हमारे स्वराज्यकी रचना भी कच्ची ही रहेगी।

९. सच्ची धार्मिकता

[सर्वधर्म-समभाव]

हमारा ग्यारहवा सिद्धान्त सर्वधर्म-समभावका है। आप कहेंगे "हम स्वराज्यके योद्धा है, हम मानते है कि राजनीतिक मामलोमें धर्मका नाम नही होना चाहिये। हम अिस मामलेमे अपने धर्मको बीचमे नही लाते और दूसरोके बारेमें भी अिस बातकी परवाह नही करते कि कौन किस धर्मका पालन करता है अथवा किसी भी धर्मका पालन करता है या नही। अिसलिअे हमारे सामने धर्मकी बात ही आप क्यो करते है?"

धर्मके मामलेमें सचमुच अैसा अनासक्त रुख हम सबका होता, तब तो बहुत अच्छा होता। परतु देशमे हिन्दू, मुसलमान वगैरा अलग अलग धर्मोका पालन करनेवाली जातियोके बीच अविश्वास और अप्रेमका जो वातावरण फैला हुआ है, अुससे क्या सिद्ध होता है? यही कि हमारे दिल साफ नही है, हम सबको अपना-अपना धर्म दूसरोके धर्मसे अूचा लगता है, मौके-बेमौके हम अपना सिर अूचा अुठाकर और छाती फुलाकर कहते है कि हमारा धर्म सबसे अूचा है—हमारी सस्कृति सबसे अूची है।

अिस तरह अभिमान करनेका हमारा आशय तो यही है कि हम अन्य सब धर्मवालोंसे कहते है "तुम सब अभागी कौम हो, तुम्हारा जन्म हलके दरजेके धर्ममें हुआ है, तुम्हे नीचे दरजेकी सस्कृतिका अुत्तराधिकार मिला है।" हमारी अिस रायका अधिक पृथक्करण करें, तो अुसका सार अैसा निकलेगा मानो हम अन्य धर्मवालोसे कहते हो "तुम जन्मसे ही हर तरह हमसे नीचे हो, अिसलिअे देशमें हमेशा हमसे नीचे रहनेको

ही तुम बनाये गये हो। राजकाज, कला और अुद्योग, विद्वत्ता और धन-वैभव सभी बातोमें हम अूचे धर्मवाले अूचे स्थानो पर ही सुशोभित होगे और तुम नीचे लोग नीचे स्थान पर ही शोभा दोगे।"

कोअी भी स्वाभिमानी मनुष्य या स्वाभिमानी जाति अपने पडोसियोका अैसा अभिमान कैसे सहन कर सकती है? क्या हम अीमानदारीसे कह सकेंगे कि यह अभिमान हमारे मनमें, हमारी वाणीमे और हमारे व्यवहारमे जरा भी नही है? साधारण लोगोकी बात छोड दें, साम्प्रदायिक हलचल करनेवालोकी बात भी जाने दें, परतु हम सेवक, स्वराज्यके सैनिक, भी क्या छाती ठोककर यह दावा कर सकते है कि हम अिस अभिमानसे सर्वथा मुक्त है? अिस अभिमानके जहरको हमारे व्यक्तिगत जीवनसे निर्मूल कर डालना हमारी आत्म-रचनाका अेक अत्यन्त आवश्यक कार्य है। अिस बारेमें जब तक हम अपने जीवनको शुद्ध नही बनायेगे और अपने जीवनकी बुनियाद असत्य और राग-द्वेष पर रखेंगे, तब तक हमारी जनतामें स्वराज्यकी शक्ति कभी पैदा नही हो सकेगी, हम अपनी सत्याग्रहकी लडाअियोमे भी कभी सच्चा प्रभाव पैदा नही कर सकेगे।

सच पूछें तो अिस प्रकार अपने धर्मका अभिमान करना और दूसरोके लिअे मनमें तिरस्कारका भाव रखना धर्मनिष्ठ मनुष्यका लक्षण हो ही नही सकता। अैसे मनुष्यको यदि धर्मनिष्ठका पद दिया जाय, तो दुनियामें अधर्मी किसे कहेंगे? ससारके किसी भी धर्ममें अैसी वृत्तिकी निन्दा की जाती है और अैसी वृत्तिको जीतनेवाले मनुष्यके लिअे लोगोमें पूज्यभाव होता है।

जो सच्चे धार्मिक मनुष्य होते है, वे भले किसी भी धर्मका पालन करते हो, परतु अुनका व्यवहार और अुनके विचार हमेशा अेकसे ही होते है। सब धर्मोके सच्चे धर्मनिष्ठ मनुष्य सत्यनिष्ठ होते है, सब जीवोके लिअे अुनके हृदयमे प्रेमकी धारा वहा करती है, वे सबमें भगवानका वास देखते है, तथा सब तरहके अभिमानसे मुक्त, व्यसनोसे अछूते, नम्र और भक्तिपरायण होते है। अुनके जीवन सयमी होते है। और किसी भी धर्मके अूचे चरित्रवाले ज्ञानी साधु-सतोको देखकर अुनके अन्तरमें पूज्यभाव प्रगट होता है। अपने-अपने धर्मोके रिवाजके अनुसार भले ही वे अलग अलग पैगम्बरो और धर्मग्रथोको माने, भले ही कोअी मक्काका हज करे और कोअी गगा-यात्रा करे, भले ही कोअी मदिरमें पूजा करे और कोअी मस्जिदमें नमाज पढे, भले ही पोशाक और दूसरे चिह्न वे अपनी अपनी परम्पराओके अनुसार धारण करते हो, परतु अूपर बताये हुअे लक्षणोमें तो वे हमेशा अेकरूप ही होते है। अुनमें धर्मके नाम पर झगडा करनेकी वृत्ति ही नही होती।

परन्तु धार्मिक मनुष्य स्वधर्मके मामलेमे रूखे, सूखे और अुदासीन भी नही होते। अुन्हें अपने धर्मके प्रति अत्यन्त ममता होती है, अपने पैगम्बरके लिअे अत्यन्त भक्ति भी होती है। जिनके जीवन और वचनामृतमे वे सदा प्रेरणाका पान करते है, अुनके लिअे अुनके मनमें भक्ति क्यो न हो? जो कोअी मिले अुसीको अपने धर्मका और

अपने पैगम्बरका प्रेरक सन्देश समझानेका अुत्साह भी अुनमें क्यो न अुमडे? परन्तु अिससे अुनमे दूसरोके धर्म आदिको घटिया समझनेकी मति पैदा नही होती। अुलटे वे अपने अुदाहरणसे अिस बातको समझ सकते है कि दूसरोको अुनके धर्म, पैगम्बर वगैरा कितने प्यारे होगे। और अिसलिअे वे बहुत ही सावधानीसे अेक-दूसरेकी भावनाओका आदर करते है।

सचमुच दो अलग अलग धर्मोके सच्चे धर्मनिष्ठ मनुष्य जब अिकट्ठे होते है, तब अेक-दूसरेके प्रति अुनका व्यवहार देखने लायक होता है। वे अेक-दूसरेकी भावनाओका और परम्पराओका कितनी सूक्ष्मतासे, कितनी सावधानीसे आदर करते है? किसी हिन्दू महात्माके घर कोअी मुस्लिम फकीर पधारते है, तब वे कैसा व्यवहार करते है? नमस्कार करनेमे वे मुस्लिम पद्धति काममे लेते है, आसन, खानपान आदिमें अुनके रीति-रिवाजोके अनुकूल बननेका प्रयत्न करते है, आपसमे धर्म-सवाद करते है तो अुसमें मुस्लिम धर्मशास्त्रोका विशेष आदर-सम्मान करते है। खुद मूर्तियोकी पूजा करनेवाले हो, तो भी अुस दिन मूर्तियोको बीचमे लाकर अेक-दूसरेके मनमें विक्षेप पैदा नही होने देते। प्रार्थना करते है, तो अुसमे अुस दिन खास तौर पर मुस्लिम सतोके भजन पसद करते है और तीव्र स्वरोके वाद्योको शान्त रहने देते है।

अिसी प्रकार किसी मुस्लिम धर्मात्माके यहा हिन्दू सन्तका जाना होता है, तब हिन्दुओके आचार-विचार, रुचि-अरुचिका खयाल रखकर हिन्दू सन्तकी आवभगत की जाती है। अुस दिन घरमे मासाहार बन्द रखा जाता है। अेक थालीमें खानेका रिवाज अुस दिनके लिअे स्थगित रखकर सबको अलग अलग थालियोमें परोसा जाता है। मेहमान पूजापाठ करनेवाला हो तो अुसके लिअे घरमे अेक शान्त कोना सजा दिया जाता है। नमाजके समय अुसके लिअे बैठनेका आसन बिछा दिया जाता है और शायद नमाजके बाद दो शब्द कहनेकी प्रार्थना करके अुसे बाज पढनेका बडा सम्मान भी दिया जाता है।

अैसे दृश्य सचमुच बहुत अद्‌भुत और पवित्र होते हैं। वे अैसे होते है कि अुनकी खूबी देखकर जी भरता ही नही। अुनमें कितनी बारीकी और कितनी सूक्ष्मता होती है! अेक-दूसरेके प्रति कितनी हृदयपूर्ण शिष्टता होती है! अेक-दूसरेकी भावनाको समझकर अुसके अनुकूल बननेका कितना हार्दिक प्रयत्न होता है! अहिंसाका, आदरका, प्रेमका अिससे अुत्तम नमूना मिलना मुश्किल है।

यह तो हमने अुन प्रसगोकी कल्पना की, जब धर्मात्माके घर धर्मात्मा जाता है। परन्तु आप यह न मानें कि कोअी समूची जाति अन्यधर्मी जातिके प्रति अैसा बढिया बर्ताव नही रख सकती। कुदरतका अैसा कोअी कानून नही है कि जाति-जातिके बीच हमेशा आजके जैसा वैर ही होना चाहिये, या आजके जैसा अविश्वास ही होना चाहिये। बहुत बार जातियाकी जातिया देशभक्तिके ज्वारमें अथवा अुनके बीच किसी महात्माके आ जानेसे धार्मिक वृत्तिवाली बन जाती है। हमारे देशमे हिन्दू, मुसलमान, पारसी, अीसाअी, सिक्ख वगैरा अलग अलग धर्मोका पालन करनेवाली जातियोके मामलेमें कअी बार

अैसा हुआ है। अितना ही नही, हालके कुछ वर्षोंके झगडोको छोड दे, तो ज्यादातर अैसा प्रेम-सम्बन्ध ही अुनके बीच रहा है। वैसे समयमें हिन्दुओंके प्रति प्रेम और शिष्टता दिखानेके लिअे मुसलमानोंने गोमासका त्याग किया है, हिन्दुओने मुसलमानोकी भावनाओके खातिर अपने अुत्सवो और मदिरोमें बाजे बजाना बन्द रखा है, हिन्दुओकी धर्म-सभाओमे मुस्लिम महात्माओका अुपदेश हुआ है और मुसलमानोकी सभाओमे हिन्दू महात्माओका अुपदेश हुआ है। मुसलमानोकी धार्मिक लडाअियोमे अन्य सब धर्म-समाजोने भाग लिया है, सिक्खोकी धार्मिक लडाअिया छिडी, तब भी अुनमे सबने भाग लिया है। आजके बिगडे हुअे दिनोमें हमे यह सब सपने जैसा लगता है। परन्तु हम अपने देशका अितिहास देखें, तो हमेशा अैसा ही होता आया है।

हम सेवक दूसरे धर्मोंके सम्बन्धमें कैसी भावना रखें, दूसरे धर्मावलम्बियोके प्रति कैसा प्रेम और शिष्टाचार रखें, यह सच्चे धार्मिक पुरुषोके व्यवहारसे हमे समझ लेना चाहिये। अैसी धार्मिकता हम अपनेमें लायेंगे, तो हमारे धर्म हमारे बीच वैरभाव और झगडे बढानेवाले न रहकर प्रेम और परस्पर सहायताकी ही वृद्धि करेगे। हम अेक-दूसरेकी सेवाके अवसर ढूढते ही रहेगे। वैसे तो किसीकी भी सेवा करनेमें हमें आनन्द आयेगा, परन्तु अन्यधर्मियोकी सेवाका अवसर जिस दिन मिलेगा, वह दिन तो हमें विशेष सौभाग्यका प्रतीत होगा। हमारे व्यक्तिगत जीवनमे भी हम सब पडोसियोके साथ प्रेम और सहयोग रखेंगे, परन्तु अन्यधर्मियोके साथ तो कुटुम्बियो जैसा और मित्रताका सबध बनानेकी खास कोशिश करेंगे, अुनकी भाषा, अुनके धर्मग्रथ, अुनके रीति-रिवाज अित्यादिका हम आदरपूर्वक अध्ययन करेंगे और अुनकी खूबिया अुनकी दृष्टिसे देखने लगेंगे।

हम देशसेवाके कामोमें अनेक सेवकोके साथ मिलकर काम करते है और सगे भाअियोंसे भी ज्यादा प्रेमके साथ रहते हैं। अिन साथियोमें अन्यधर्मी साथी भी हमें मिल जाय, अिसकी हम सदा लालसा रखेंगे और मिल जाने पर अीश्वरका आभार मानकर अुन्हे हर तरहसे प्रेमसे नहला देगे।

हम पर राजनीतिक और दूसरे कअी कारणोंसे परधर्मी जातियोका गहरा अविश्वास हो गया है। हमारे अेक भी कार्यको या अेक भी शब्दको जो शकाके बिना नही देख सकते, अुनमें विश्वास पैदा करनेका सच्चा अुपाय यही है। सर्वधर्म-समभावके सिद्धान्तका सच्चा अमल यही है। अिसे ज्यो ज्यो हम अपने जीवनमे अुतारेंगे, त्यो त्यो हमारी अपनी आत्म-रचना होगी, हमारी सत्य और अहिंसा सूक्ष्म और सुन्दर बनेगी और त्यो त्यो सारे देशके लोगोमें भी स्वराज्यकी शक्ति आने लगेगी।

आप शुरूमें कहते थे कि 'हम तो स्वराज्यके सिपाही है, हमें किसी भी धर्मका पालनका नही करना है और न हमें अिसकी परवाह है कि दूसरे लोग कौनसे धर्मका पालन करते है अथवा किसी भी धर्मका पालन करते हैं या नही करते हैं।' परन्तु अैसी लापरवाही हमारे लिअे अुपयोगी नही होगी। धर्माभिमानी लोगोको अैसा लापरवाहीका व्यवहार बहुत ही अपमानजनक लगेगा। आप खुद नमाज पढनेकी परवाह भले न

करे, परन्तु जो दूसरे लोग अुसे अपने जीवनमे प्राणोके समान स्थान देते है, अुनकी भावनाकी यदि आप परवाह न करे, तो अुनके साथ अेकात्मता कैसे साध सकते है? आपको न केवल अुनकी सुविधाका ध्यान रखना चाहिये, परन्तु व्यक्तिगत रुचि न होते हुअे भी सूक्ष्म शिष्टाचार और आदर दिखानेके लिअे अुनकी नमाज आदिमें साथ देना चाहिये।

और चूकि धर्माभिमानसे झगडे पैदा होते है, अिसलिअे अुकताकर धर्मोको ही फेक देनेको तैयार हो जाना भी गलत रास्ता है। यह तो पगडीका बोझ लगनेके कारण सिरको काटकर फेक देनेके समान है। धर्मोका पालन करते हुअे लोग जैसे कट्टर धर्माभिमानी बन सकते है, वैसे अुनका पालन करते हुअे सच्ची धार्मिक वृत्तिके और चरित्रवान भी बनते है। और हमे स्वराज्यका अैसा ही निर्माण करना है, जिसमे अैसी धार्मिक वृत्तिका शुद्ध चरित्रवाला जीवन बितानेकी सब लोगोको पूरी अनुकूलता मिले। अिसलिअे धर्मके नामसे ही अरुचि रखना हमारे लिअे कभी लाभदायी नही हो सकता।

धर्म तो हमारी कल्पनाके स्वराज्यके लिअे अत्यन्त पोषक सिद्ध होगा। अिसी अर्थमें हम स्वराज्यको बहुत बार रामराज्य अथवा धर्मराज्यका नाम देते है। रामराज्यका अर्थ अैसा राज्य नही, जिसमे गाव-गावमे राम-मदिर स्थापित किये जायगे और रामानदी तिलकधारी महतोके भण्डार चलते रहेगे। धर्मराज्यका अर्थ मदिरो, मसजिदो और गिरजाघरोका राज्य नही और न माला, पूजा, नमाज, आदिमें दिनभर बितानेका सब लोगोको हुक्म देनेवाला राज्य ही है। रामराज्य द्वारा हम यह बताना चाहते है कि हमारे स्वराज्यमें हम राज्यसत्ताका तेजस्वी शस्त्र केवल श्री रामचन्द्र जैसे परम धार्मिक वृत्तिवाले, कर्तव्य-निष्ठ, सर्वथा निर्दोप चरित्रवाले लोगोके हाथमें ही सौंपेगे। 'धर्मराज्य' शब्द द्वारा हम यह सूचित करना चाहते है कि हमारे स्वराज्यमे हम अैसी परिस्थितिया पैदा करेंगे, जिनमें लोगोके भीतर सत्य, प्रेम और ज्ञानके गुण विकसित होगे, जिनमें लोगोकी वृत्ति सयमी, मेहनती और सेवापरायण जीवनकी तरफ रहेगी और जिनमें लोग अैसे शूरवीर बनेंगे कि अपने सिद्धान्तोके खातिर धार्मिक जोशके साथ सत्याग्रह छेडनेको सदा तत्पर रहेगे।

आज झगडो, वैरभाव और शकाके कीडे जन-जीवनको कुरेदकर खा रहे है। अिनके साथ भिन्न भिन्न धर्मोके नाम जोड दिये जाते है, परन्तु अिन झगडोके साथ सच्चे धर्मका कोअी सम्बध नही होता। यह तो अलग अलग कौमोके बीच राजकाजमें अधिक सत्ता हथियानेकी छीनाझपटी मची हुअी है। छोटी कौमें अपना सख्यावल बढाकर, धन-दौलतकी ताकत बढाकर, अधिक सत्ता प्राप्त करनेके लिअे तरह तरहकी तिकडमें कर रही है, बडी कौमें बहुमतका लाभ हाथसे निकलने न देनेके लिअे साजिशे कर रही है। आज तो सत्ता बढानेका अेक ही साधन है — विदेशी हुकूमतका आश्रय प्राप्त करना, अैसी कोअी तरकीब करना जिससे अुसकी कृपा अपने ही हिस्सेमें आये और दूसरी कौमोके हिस्सेमें न जाने पाये।

विदेशी हुकूमत भी मौका देखकर अपना दाव फेंकती रहती है, और कभी अिसे और कभी अुसे चढाती रहती है। अन्तमें तो अिससे दोनोका बना हुआ राष्ट्र-शरीर निर्वल होता है और विदेशी हुकूमतकी जडें ही मजबूत बनती है। धर्ममें प्राणोकी वलि देने तकका जोश पैदा कर देनेकी जो अजीब ताकत है, अुससे चालाक नेता लाभ अुठाते है और कोअी न कोअी धार्मिक कारण तथा सूत्र सामने रखकर अपनी भोली-भाली कौमोमे जोश पैदा कर देते है। गोपूजाके बहाने हिन्दू नेता अपनी कौमको अुकसाते है और नमाजकी शान्तिके बहाने मुस्लिम नेता अपनी कौमको पागल बनाते है। परतु जरा गहरे अुतरे तो तुरन्त दिखाअी देता है कि गायके नाम पर धर्मान्ध वनकर झगडे करनेवाले हिन्दुओमें गो-पूजाके सच्चे धर्मका कोअी पालन नही करता। हिन्दुओके घरमें गो-वश जितना दु खी होता है अुतना और कही नही होता होगा। गायकी अुपेक्षा करके भैंसका दूध लेनेमे या गोपुत्रको तीखी आर चुभानेमें अुन्हे धर्म नही रोकता। नमाजकी शातिके लिअे लडाअी करनेको तैयार हो जानेवाले मुसल-मानोमें नमाजके समय कितने लोग अेकाग्र और भक्तिपरायण रह सकते होगे?

किसी भी धर्मका अुद्देश्य अपने अनुयायियोको सत्य, जीवदया, मनुष्य-प्रेम, सेवा, सयम और ओश्वर-भक्ति वगैरा सिखाना ही होता है। धर्मके नाम पर पत्थर या छुरिया चलानेवाले लोगोमें अैसी धार्मिकता नही हो सकती। सच्चे धर्म-परायण लोग अैसे क्रूर हो ही नही सकते, अितने अज्ञानी भी नही हो सकते। अुनके हृदयोमे वैरका वीज कभी नही अुग सकता। अिसके विपरीत वे आसपासके वैर-द्वेषको शान्त करने-वाले ही होते है।

भयकरसे भयकर साम्प्रदायिक दगोके समय भी हर सम्प्रदायमें अैसे धार्मिक वृत्तिके पुरुषोके अुदाहरण देखनेको मिलते है, जो जानको खतरेमे डालकर भी सच्चे धर्मका पालन करते है, सकटमें फसे हुअे अन्यधर्मियोको प्रेमसे आश्रय देते है, अुन्हे सलामतीके साथ घर पहुचाते है, अपनी जातिकी अुन्मत्त भीडको अुलाहना देकर शान्त करने निकल पडते है। कौम और धर्मके नाम पर होनेवाले झगडोमें धर्मका दर्शन करना हो तो वह अैसे, कही कही दूर कोनेमें होनेवाले, धार्मिक वृत्तिके सज्जनोंके कार्योमें ही होता है। जहा दगा-फसाद चलता हो वहा और अखबारोके स्तम्भोमे जिस प्रकारकी घटनाओका वर्णन हम देखते है अुनका धर्मके साथ कोअी सम्बन्ध नही होता। अुन्हे धर्मके नामके साथ गलत तौर पर जोड दिया जाता है। वे तो शुद्ध राजनीतिक और आर्थिक दगे होते हैं, और किसी भी धर्मके विरोधी होते है।

यह समझकर धर्मके नामके प्रति घृणा पैदा कर लेना हमारे लिअे ठीक नही है। हम सेवकोको अपने व्यक्तिगत जीवनमे सच्ची धार्मिक भावना पैदा करनेका प्रयत्न करना चाहिये। हम अपना हृदय अितना शुद्ध कर लें कि अुसमें कितना ही कपटी मनुष्य भी अन्य किसीके प्रति वैरभाव अुत्पन्न न कर सके। अपना जीवन हम अितना शुद्ध वना लें कि कितने ही जनूनी लोगोमें भी हमारे प्रति वैरवृत्ति जाग्रत न हो। हम धार्मिक वृत्तिके लोग सर्वधर्म-समभावका सिद्धान्त जीवनमें पालेंगे, अिसलिअे कैसी

भी हालतोमे, अेक-दूसरेके विरुद्ध कितना ही क्यो न भडकाया जाय, तो भी हम आपसका प्रेम नही छोडेंगे, अेक-दूसरे पर शका नही करेंगे। हमारे जन-जीवनको हम सदा निर्मल, शान्त और प्राणवान बनाये रखेंगे। हमारी यह श्रद्धा है कि धार्मिक वृत्तिके थोडेसे लोगोका जीवन भी अुनकी कौमके समग्र वातावरण पर असर डाले बिना नही रहता।

धर्मोके बीच, कौमोके बीच, अैसे समभावकी वृत्ति हम अपने व्यक्तिगत जीवनमें विकसित कर लें, तो अुससे स्वराज्यकी कितनी प्रबल शक्ति पैदा हो सकती है, यह समझना कठिन नही है।

प्रवचन ७४

आत्म-रचनाका त्रिविध फल

मेरा खयाल है कि अब आप हमारे अेकादश व्रतोका वास्तविक स्वरूप समझ गये होगे। वे कोअी अद्भुत धर्ममत्र है और अुनका जप करनेसे वैकुण्ठ या कैलास जानेका पुण्य मिलेगा, अैसी किसी अन्धश्रद्धासे हमने रोज प्रार्थनामें अुनका स्मरण करनेका नियम नही बनाया है। वह तो हमारी आत्म-रचनाका अभ्यासक्रम है।

हम स्वराज्य-युद्धके सैनिक है और सैनिकके नाते हम कच्चे नही रहना चाहते। हमें सैनिकके नाते अपने भीतर बल और शौर्यका पूर्ण विकास करना है। वे अिस प्रकारकी आत्म-रचना द्वारा ही विकसित किये जा सकते है, क्योकि हमारे युद्धका गोला-बारूद अहिंसामय सत्याग्रहका है। वह दूसरे साधारण गोला-बारूद जैसा नही है, जो किसी भी कारखानेमें अमुक रासायनिक द्रव्योके मिश्रणसे बनाया जा सके। सब आवश्यक रसायनोकी काफी बडी मात्रा हमारे भीतर आत्मबलके रूपमें मौजूद ही है। अुसे परिपक्व करके हम सैनिकोको अुसमें से अहिंसात्मक सत्याग्रहका गोला-बारूद हमारे हृदयरूपी कारखानेमे बना लेना है। सत्य और अहिंसा हमारे लिअे केवल दो शब्द न रहे, वे हमारे जीवनमें ओतप्रोत हो जाय, हमारा स्वभाव बन जाय, तो ही हम प्राणोकी बलि देनेवाले सच्चे सत्याग्रही बन सकते हैं, तो ही हम अहिंसाकी अैसी लहर दौडा सकते है, जिससे विरोधीका हृदय-परिवर्तन हो जाय। ये दोनो बल हम अेकादश सिद्धान्तोका बहुत बारीकीसे पालन करके ही अपने हृदयमें अुत्पन्न कर सकते है।

परन्तु सावधान! आप जब यह कहते है कि हम तो स्वराज्यके सैनिक है, व्रत-अुपवास करनेवाले भगत नही है, तब यदि आपके मनमें यह भाव हो कि आपको जैसा मिल जाय वैसा ही स्वराज्य जीत लेना है और अुसके लिअे मनचाहे ढगका युद्ध करना है, तो यह गोला-बारूद आपके कामका नही। सत्याग्रहका गोला-बारूद लेकर यदि हिटलरी युद्ध लडनेका आप अिरादा करेंगे, तब तो केवल निराशा ही आपके

हाथमें आनेवाली है, और अुस रणक्षेत्रके नख-शिख शस्त्रसज्ज योद्धाओमें आपकी केवल हसी ही होगी।

हमारा युद्ध दूसरे ही प्रकारका है और हमें जो स्वराज्य जीतना है वह भी भिन्न प्रकारका है। परन्तु हमारे अिस भिन्न युद्धके लिअे हमारा अपना गोला-बारूद पूरी तरह कारगर है, पूर्ण विजय दिलानेकी शक्ति रखता है।

तो चलिये पहले हम यह देख ले कि हम कैसा युद्ध लडना चाहते है और अुसके लिअे हमारे आत्मबलके हथियार कितने अुत्तम हैं।

हमारे युद्धका साधारण नाम अहिसात्मक सत्याग्रह है। परन्तु वह प्रसगानुसार भिन्न भिन्न व्यूह धारण करता है।

कभी अुसमें अन्यायी, अत्याचारी और स्वाभिमानका भग करनेवाले सरकारी कानूनोका सविनय भग करना होता है।

कभी हमें गुलामीमें रखनेवाले सरकारी तत्रके किसी अगके अथवा सारे सचालनके खिलाफ असहयोग करना होता है।

कभी सरकार हम पर दमनका वार करे, तब अुसे बहादुरीसे जरा भी झुके बिना सहन करना होता है।

कभी नि शस्त्र प्रतिकार अर्थात् नि शस्त्र होने पर भी हमारी ओरसे व्यवस्थित आक्रमण करना होता है।

सत्याग्रह-युद्धके ये अेकसे अेक कठिन व्यूह हैं। अपनी छातीमें काफी गोला-बारूद भरकर रख सकें, तो ये सब सत्याग्रह हम नि शक होकर जीत सकते हैं। वह गोला-बारूद कौनसा है?

(१) अेक गोला-बारूद तो यह है कि हम पूरी तरह शुद्ध सत्यकी ही लडाअी लडते है। लडाअीमें हम बडेसे बडे लाभके लालचसे भी लेशमात्र झूठ या धोखेबाजी नही करते। अिसके परिणामस्वरूप विरोधी पक्ष शरमिन्दा और ढीला हो जाता है और शस्त्र होते हुअे भी हम पर प्रहार करनेकी अुसकी अिच्छा नही रहती।

जगतमें किसीको हमारे सत्यके बारेमें जरा भी शका न रहे, सरकारको हमारा सत्याग्रह अच्छा लगे या बुरा, परन्तु अुसे हमारे सत्यके विषयमें तो पक्का भरोसा ही रहे, यह स्थिति कब आ सकती है? यह स्थिति लानेके लिअे हमें अपने व्यक्तिगत जीवनकी सूक्ष्मसे सूक्ष्म बातोमे ग्यारह सिद्धान्तोका पालन करके सत्यके आग्रहवाला स्वभाव बनाना होगा, अिसी प्रकार हमें अपने व्यक्तिगत जीवन और सार्वजनिक जीवन दोनोमे अनेक कसौटियोमें से पार होकर और प्रलोभनोके बीच शुद्ध रहकर अपने सत्यकी प्रतिष्ठा कायम करनी होगी।

(२) हमारा दूसरा गोला-बारूद यह है कि हम अपने सत्याग्रहमें जरा भी पीछे नही हटते और फिर भी लडाअीमें सम्पूर्ण अहिंसाका पालन करते हैं। अिसके परिणाम-

स्वरूप विरोधी पक्षके पास हथियार होते हुअे भी अुसका दिल हम पर वार करनेसे अिनकार करता है।

हमारी अहिंसा सच्ची है या जबानी और मौका देखकर काम करनेवाली है, अिसकी परीक्षा करनेको विदेशी सरकार दमन तो करेगी ही। हमारी अहिंसाको परीक्षा पास होने लायक निर्मल और मजबूत बनानेके लिअे तथा हमारी अहिंसाकी शत्रुपक्ष पर भी प्रतिष्ठा जमानेके लिअे जीवनकी छोटीसे छोटी बातोमें भी ग्यारह सिद्धान्तोका अमल करना परम आवश्यक है।

(३) हमारा तीसरा बल यह है कि सत्याग्रह करते समय विरोधी पक्ष हमें कितने ही दुःख दे, तो भी अुसके प्रति हम जरा भी वैरभाव नही रखते, अुसका हित ही करना चाहते हैं। अिसका विश्वास हो जाने पर अुसका हृदय ही पलट जाता है, वह शत्रु न रहकर हमारा अत्यन्त अुत्साही मित्र बन जाता है।

परन्तु अैसी अवैर-वृत्ति साधना किये बिना नही आ सकती। जब तक अुसका प्रत्यक्ष प्रमाण हम अपने जीवनके अनेक छोटे-बडे अवसरो पर नही दें, तब तक विरोधी पक्ष अुसे माननेको कभी तैयार नही होता। हमारे अवैर अथवा प्रेमका अिस हद तक विकास करनेके लिअे भी ग्यारह सिद्धान्तोको जीवनमें अुतारना जरूरी है।

किन्तु क्या हमे यह श्रद्धा है कि सत्य और अहिंसा ही मनुष्य-जीवनका सारसर्वस्व है? यह श्रद्धा होगी तो ही हमें अहिंसात्मक सत्याग्रहकी सेनाके लिअे सैनिक बननेका अुत्साह चढ सकेगा। हमे अपने नेताओके प्रति पूज्यभाव है, अुनकी शक्ति पर, अुनके त्याग पर हम मोहित हैं। अिसलिअे अुनकी सत्याग्रही सेनामें भरती होना हमें अच्छा लगता है। परन्तु अितनी-सी अूपरकी श्रद्धा और अितना-सा अूपरसे अच्छा लगना लबे समय तक कैसे काम दे सकते हैं? ये कडीसे कडी अग्नि-परीक्षाओके समय हमे कैसे दृढ रख सकते हैं? अिस श्रद्धाको हमें अपना स्वभाव बना लेना होगा। अिसके लिअे भी अेकादश सिद्धान्तोका सेवन करके आत्म-रचना करना अत्यन्त आवश्यक है।

हम अपने घरके धधो और अन्य व्यवहारोमें अस्तेयका पालन करेंगे, तो ही हमारे सत्य और अहिंसा कच्चे न रहकर, पक्के बनेंगे।

हम अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य, अस्वाद और शरीर-श्रमके सिद्धान्तोका पालन करके अैश-आराम और विलासी वृत्ति तथा अुद्दीपनको सयममें रखेंगे, तो ही हममें सत्य और अहिंसाको पग पग पर छोडनेके लालच पर विजय पानेका मनोबल पैदा होगा।

हम अपने भीतर अभयका गुण पैदा करेंगे, तो ही सत्य और अहिंसाकी लडा-अिया लडते समय आनेवाले सकटोके सामने हम दृढ रह सकेंगे। यह कोअी अैसा गुण नही है, जिसका प्रयत्न किये बिना ही विकास किया जा सके। दैनिक जीवनमें अनेक छोटे-बडे सत्याग्रह करते रहेंगे और अुसमें पडनेवाली मारको बहादुरीसे सहनेकी आदत डालेंगे, तभी हमारे हृदयमें रहनेवाला भय मिटकर अुसमें अभयकी — सत्या-ग्रहके शौर्यकी स्थापना होगी।

अिस प्रकार, हमारे सिद्धान्तोमें हमारी आत्म-रचना करनेकी — हमारी सत्य-अहिंसाकी श्रद्धाको पक्की और गहरी बनाकर हममें सत्याग्रही सैनिककी योग्यता अुत्पन्न करनेकी अलौकिक शक्ति है। अिसीलिअे हम कभी यह नही कह सकते कि "हम तो स्वराज्यके सैनिक है, हमारा अिन सिद्धान्तोके साथ क्या सम्बन्ध है? हमारा व्यक्तिगत जीवन चाहे जैसा हो, अुसके साथ स्वराज्यकी लडाअीका क्या वास्ता है?"

हमारे सिद्धान्तोमें रहे स्वदेशी, अस्पृश्यता-निवारण और सर्वधर्म-समभाव — ये तीनो हमें सत्य-अहिंसाके पालनके और अुसकी लडाअीके अनेक पाठ सिखानेवाले विशाल क्षेत्र है।

स्वदेशी व्रतका सूक्ष्म आचरण करके हम अपनी स्वदेशी-भक्तिको अमली जामा पहनानेका आनद ही नही लूटते, बल्कि अपने ग्रामवासी स्वदेश-बधुओको न्याय, आदर और प्रेम देकर अपने सत्य-अहिंसाको अधिक समृद्ध बनानेकी तालीम पाते है।

अस्पृश्यता-निवारणका पालन करके हम अपने जीवनसे अूच-नीच-भेदरूपी असत्य और हिंसाको निकाल डालनेकी तालीम ग्रहण करते है।

सर्वधर्म-समभावका विकास करके हम अपने जीवनमें गहरी आध्यात्मिक धार्मिकता लानेका प्रयत्न करते है। वह न हो तो हमारे सत्य और अहिंसामें गहराअी नही आ सकती।

हम कहते है कि हमें अपने स्वराज्यकी रचना सत्य और अहिंसाके आधार पर करनी है। हम अपने अिन आखिरी तीन सिद्धान्तो पर कितनी अीमानदारीसे अमल करते है, यह देखकर ही लोग हमारे अिस कथनको मानेंगे या नही मानेंगे। हम दलितो, पीडितो और अपमानितोके साथ समानताका व्यवहार करेंगे, अुनके दु ख और अन्याय दूर करनेके लिअे सदा कोशिश करते रहेंगे — लडाअिया लडते रहेंगे, तो अुन्हे स्वाभाविक रूपसे यह विश्वास हो जायगा कि हम अुन्हीके है, जिस स्वराज्यके लिअे हम लड रहे है वह न्याय और सत्यका ही होगा, वह अुन्हीका स्वराज्य होगा। अुस स्वराज्यका अुन्हे डर नही लगेगा। अुसके लिअे अुनके मनमें प्रेम पैदा होगा। अुन्हे विश्वास हो जायगा कि अतमें अैसा स्वराज्य आयेगा, जिसमें कोअी हमारा शोषण नही करेगा, हमें सतायेगा नही, जिसमें हम अपने प्रामाणिक परिश्रमकी रोटी सुखसे खा सकेंगे, जिसमें हमारे लिअे अुन्नतिके सब दरवाजे अन्य सब लोगोकी तरह ही खुले होगे।

और अिन तीन सिद्धान्तोमें से ही हमारे सारे रचनात्मक कार्यक्रमका विस्तार होता है। अिसके द्वारा हम दलित, पीडित लोगोमें स्वराज्यकी शक्ति अुत्पन्न करनेका सदा प्रयत्न करते है। यह कार्य यदि हम पूरे प्रेमसे करेंगे, तो स्वराज्यका सूर्य अुदय होनेसे पहले ही लोगोको अुसकी जीवनदायिनी गरमीका अनुभव होने लगेगा। अुस स्वराज्यका स्वरूप अुन्हे पहले ही समझमें आ जायगा, अुसका स्वाद अुन्हें लगेगा। स्वाद लगनेके साथ ही अुन्हे सत्याग्रहकी युद्ध-पद्धतिमें अधिकाधिक रस आने लगेगा। वे हमारी लडाअियोमें शरीक होनेको अधिकाधिक तैयार होगे। वे ज्यो

ज्यों समझते जायेंगे और कुरबानी करते जायेंगे, त्यों त्यों अुनकी बहादुरी बढती जायगी और अुनकी आखे खुलती जायगी। वे यह समझने लगेंगे कि हमारे हाथमें हथियार न होनेके कारण दुर्बल बने रहकर गुलामीमे सडनेकी जरूरत नही है, सत्याग्रहकी शक्ति हमारे भीतर औश्वरने जितनी चाहिये अुतनी भर दी है।

ये अंतिम तीन सिद्धान्त — स्वदेशी, अस्पृश्यता-निवारण और सर्वधर्म-समभाव हम बारीकीसे अमलमें लायेंगे, तो अुसके परिणामस्वरूप हमारा जीवन पूजी-पतियो, जमीदारो और सरकार आदि हमारे सब विरोधियोके लिअे पारदर्शक बन जायगा। अर्थात् हम सचमुच सत्य और अहिंसाके स्वराज्यके लिअे ही लड रहे हैं, अिसका प्रत्यक्ष परिचय अुन्हे हमारे अिन सिद्धान्तोंसे प्रस्फुटित होनेवाले रचनात्मक कार्योमे रोज रोज मिलता रहेगा। हम अुनके अन्यायोके विरुद्ध लडाअिया लडते रहेंगे, लोगोंके भीतर भी अुनके विरुद्ध लडनेकी शक्ति दिन-दिन बढाते जायेंगे, अिससे अुनकी परेशानी तो बढेगी ही। परन्तु हमारे सैद्धान्तिक जीवनमें और हमारे रचनात्मक कार्योमे प्रकट होनेवाले हमारे सत्य और अहिसाको देखकर अुन्हे यह भरोसा हो जायगा कि हमारी लडाअी अुनके नाशके लिअे नही है। वे स्वाभाविक रूपमे हमे और हमारे साथ लडाअीमें भाग लेनेवाले लोगोको कष्ट देंगे। परन्तु यदि हमारे जीवनमें और रचनात्मक कार्योंमे सत्य और अहिंसा अच्छी मात्रामें दिखाअी दें, तो कष्ट देनेमें भी अुनके हाथ अत्यत क्रूरतासे नही चल सकेंगे, और अतमें काफी सताने और कसौटी कर लेनेके बाद वे हमारा विरोध करना छोड देंगे, हमारे कार्यमे आशीर्वाद और सहयोग देने लगेंगे, यह आशा रखना बहुत अधिक नही होगा।

अिस प्रकार ग्यारह सिद्धान्तोके आधार पर हमें श्रद्धापूर्वक आत्म-रचना करके ये तीन फल अुत्पन्न करने हैं

अेक फल तो यह पैदा करना है कि हमारे भीतर सत्य-अहिंसा पर अितनी गहरी श्रद्धा जम जाय कि वे हमारा स्वभाव बन जाय और हम सच्चे वीर सत्याग्रही बन जाय।

दूसरा फल हमे यह प्राप्त करना है कि हम स्वराज्य-निर्माणका कार्य करनेवाले सच्चे सेवक बनें, रचनात्मक कार्य द्वारा जनताको आजसे ही स्वराज्यका कुछ न कुछ स्वाद चखा दें और अुनमे अुसके लिअे लडनेका अुत्साह पैदा करे।

तीसरा फल यह पैदा करना है कि जिनके विरुद्ध हमें सत्याग्रह करना है अुनके हृदयोमे से अन्याय और क्रूरताको मिटाकर अुनमे निवास करनेवाले अुच्च मानव स्वभावको जाग्रत करे।

ये ग्यारह सिद्धान्त माला फेरनेका मत्र नही है, परन्तु अिस प्रकारकी आत्म-रचनाका अभ्यासक्रम हैं। अिस आत्म-रचनाके लिअे हार्दिक प्रयत्न करके ही हम स्वराज्य-रचना करनेकी योग्यता और शक्ति प्राप्त कर सकेंगे, केवल 'हम सैनिक हैं' यह कहकर छाती फुलानेसे कभी नही।

प्रवचन ७५

आत्म-रचनाकी शाला — आश्रम

स्वराज्य-रचनाका कार्य करनेकी जिसे अुमग हो, अुसके लिअे आत्म-रचना कर लेना अर्थात् सत्य, अहिंसा आदि ग्यारह सिद्धान्तो पर अपने जीवनको यत्नपूर्वक गढ लेना कितना आवश्यक है, अिस सबधमें हम विस्तारसे विचार कर चुके। हम सब स्वराज्य-रचनामें अपने जीवन अर्पण करनेकी तमन्ना रखनेवाले लोग है, अिसलिअे अैसी आत्म-रचनाकी साध्नाके हेतुसे ही हम यहा आश्रममें अिकट्ठे हुअे है।

यो तो मनुष्य चाहे तो घरमे रहकर भी आत्म-रचना कर सकता है। आत्मामें बल और ज्ञान तो सोये पडे ही है। जिसकी सत्याग्रहकी आख खुल जाती है, मनकी सुस्ती अुड जाती है, जिसे जीवनकी कुजी मिल जाती है, अुसे आत्म-रचनाका अभ्यासक्रम तैयार करने अथवा अुसकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिअे किसी पाठशालामें जानेकी जरूरत नही होगी। परन्तु अिस तरह अपने-आप आख खुल जानेका अवसर कभी कभी अीश्वर-कृपासे किसी प्रबल आत्माके जीवनमें ही आता है। हम सामान्य मनुष्य तो आसपासका जैसा वातावरण हो अुसीमें बहनेवाले होते है। हम घर बैठे रहे और अनुकूल परिस्थितिसे लाभ न अुठायें, तो आज अीश्वर-कृपासे देशसेवाकी जो भावना दिलमें जागी है अुसे भी परिस्थितिवश खो बैठेंगे।

किसी देशसेवकको देखकर, अथवा किसीकी प्रेरक वाणी सुनकर, या कोअी तेजस्वी ग्रथ पढकर, अथवा देशमें होनेवाले आन्दोलनके प्रभावसे प्रभावित होकर — अिस प्रकार प्रभुकृपासे प्राप्त किसी सयोगसे देशसेवाकी भावना हमारे हृदयमें पैदा हुअी है। वह भावना हमारे कानमें चेतावनीका सुर पूर रही है — "यह तुम्हारी भावना तो तुम्हारी हृदय-भूमिमें पडा हुआ बीज है। तुम्हारे सौभाग्यसे यह हवामे अुडता अुडता तुम्हारे हृदयमें आ पहुचा है। अुठो, अुसका विकास करो। तुम्हारे अपने प्रयत्नसे यह सभव न हो तो जहा कोअी यह विकास कर रहा हो अुस भूमिको ढूढ निकालो। अैसा विकास कर रहे किसी समान-धर्मी साथीको खोज लो। यह चेतावनी सुनकर तुम तुरत खडे नही हो जाओगे, तो विकासके अभावमें बीज तुम्हारे जीवनके घासफूसमें दव जायगा, कुम्हला जायगा और निष्फल हो जायगा।"

देशसेवाकी भावना दैवयोगसे जाग अुठे, स्वराज्य-रचनाके कारीगर वननेकी अिच्छा मनमें पैदा हो, सत्याग्रह-युद्धके सैनिक वननेका अुत्साह पैदा हो, तो अुसे कुदरत पर छोडना हरगिज ठीक नही। अुचित शिक्षा द्वारा आत्म-रचना करके अुस भावनाको दृढ, ज्ञानमय और समृद्ध वनाना हमारा कर्तव्य है।

अैसी आत्म-रचनाकी शिक्षाके लिअे आश्रम सर्वोत्तम पाठशाला है।

यह आश्रम क्या है? वह कैसा होना चाहिये? वहा आत्म-रचनाकी शिक्षा मिलनेके कौन-कौनसे साधन होते है?

आश्रमका शब्दार्थ है वह स्थान जहा श्रम करनेके वाद मनुष्य आरामके लिअे जाय। अिसमे तो किसी भी घरका या जहा आराम मिलता हो अैसे किसी भी स्थलका समावेश किया जा सकता है। मनमाने तौर पर शब्दोका प्रयोग करनेवाले तो किसी होटल या ताश खेलकर समय वितानेकी क्लबको भी आश्रमका नाम देते है। परन्तु आश्रम शब्द केवल शब्दार्थमे वधा हुआ नही रह गया है। प्राचीन कालके ऋषि-मुनि अुसमे अनेकानेक सुन्दर अर्थ और भावनायें भर गये है और हमारे अपने युगमें भी अनेक देशभक्तोने अुसमे अपनी नअी भावनायें भर दी है।

आश्रम शब्द भले ही स्थानवाचक हो, परन्तु हम तो जहा कोअी चरित्रवान व्यक्ति अथवा मडल निश्चित आदर्शोके लिअे फकीरी लेकर वैठा हो, अुस सस्थाको ही आश्रम नाम देते है। आश्रमका सवमे प्रमुख और सवसे अनिवार्य लक्षण यही है। केवल भव्य मकानो और सुन्दर सुविधाओसे ही कोअी स्थान आश्रम नही वन जाता। वह तो अेक निष्प्राण ढाचा है। अुसका प्राण अुपरोक्त व्यक्ति अथवा मडल ही होता है। वह व्यक्ति अपने आदर्शकी सिद्धिके लिअे जो प्रवृत्तिया करता है, अुनके आसपास मकानो, साथियो और साधनोका समूह अिकट्ठा हो जाता है और अिस तरह आश्रम खडा हो जाता है। कोअी कोअी व्यक्ति अैसा भी होता है, जिसे अपनी प्रवृत्तियोके लिअे मकान वगैराका समूह खडा करनेकी आवश्यकता नही लगती। वह रमता-राम रहकर अपने आदर्शकी सेवा करता है। अुसका आश्रम दिखाअी नही देता, फिर भी आश्रम तो है ही। वह व्यक्ति स्वय ही चलता-फिरता आश्रम है।

जहा अैसा कोअी व्यक्ति अथवा मडल रहता हो, जिसके प्रति हमारे मनमें गहरा विश्वास हो जाय, जिसे देखकर हममे प्रेम अुमड आये, जिसकी आखें देखकर हमारे हृदयमें कुछ अुदात्त प्रेरणाअें पैदा होने लगें और जिसके बारेमें हमें यह विश्वास हो कि वह हमारे जीवनको वनानेमें दिलचस्पी लेगा, वही हमारा आश्रम है, वही हमारी आत्म-रचनाकी सच्ची पाठशाला है।

हम स्वराज्य-रचनाके कामकी तालीम लेना चाहते है। अत स्वाभाविक रूपमें ही हमें अुस कार्यके लिअे अपना जीवन अर्पण करनेवाले व्यक्तिकी ओर आकर्षण और श्रद्धा होगी। हमे सत्य-अहिंसाके मार्ग पर स्वराज्य-रचना करनेकी कल्पना वुद्धिसे तो पसन्द आ गअी है, परन्तु हमें आत्म-रचना भी अैसी करनी है जिससे वह श्रद्धा हमारे स्वभावका अग बन जाय। अिसलिअे अेकादश सिद्धान्तो पर अपना जीवन रचनेके आग्रही, अिसी मार्ग पर स्वराज्य-रचनाकी अनेक प्रकारकी प्रवृत्तिया करनेवाले व्यक्तिका सहवास ही हमे ढूढ निकालना चाहिये। हमें जैसे स्वराज्य-रचनाकी कला सीखनी है, वैसे ही स्वराज्यके लिअे सत्याग्रहकी लडाअी लडनेकी कला भी सीखनी है। अुसमे भी कोअी कुशल आचार्य मिल जाय, तो अीश्वरका परम अुपकार मानना चाहिये। अैसे आदमीके आश्रममें हमें सपूर्ण शिक्षा मिल जायगी, हमें चाहिये वह सब मिल जायगा, हममें सोअी हुअी आत्मशक्तियोका विकास करनेके लिअे अनुकूल आबहवा मिल जायगी, यह विश्वास हम अवश्य रख सकते है।

आश्रममें आत्म-रचनाकी शिक्षा लेने जाय तो हमे शिक्षा लेनेकी पुरानी कल्पनाओंको भूल जाना पडेगा। हमारा तो यही खयाल होता है कि, "वहा हमें दिनमें कमसे कम पाच-सात घटे विद्यालयमें बैठाकर अलग अलग विषयोके निपुण शिक्षक स्वराज्यके भिन्न भिन्न अगो पर व्याख्यान देंगे, पुस्तकें पढायेंगे, लेख लिखायेंगे और भाषण देना सिखायेंगे। विद्यालयसे अुठकर हम फिर अेकान्तमें आरामसे बैठकर यह सारी पढाअी दोहरायेंगे, अुसके नोट लेंगे, अुन्हे रटेंगे और परीक्षामे पास होनेके लिअे जितनी मेहनत और करामत करनी चाहिये वह सब करेंगे।"

आश्रम अैसी पाठशाला नही होती। हो तो अुसका आश्रम नाम बदलकर अुसे पाठशालाका ही नाम देना चाहिये। आश्रममे अिस तरह बैठकर पढने या पढानेकी किसीको फुरसत नही हो सकती। वहा तो स्वराज्य-रचनाकी अनेक प्रवृत्तिया चलती रहती हैं। अुनमें खादी आदि ग्रामोद्योग और राष्ट्रीय शिक्षा जैसे रचनात्मक काम भी होते है और लोग ज्यो ज्यो अुनसे शक्ति और साहस प्राप्त करते जाते है, त्यो-त्यो आसपास होनेवाले छोटे-मोटे अन्यायो और अत्याचारोके विरुद्ध समय समय पर सत्याग्रहकी लडाअिया भी लडी जाती है। स्वराज्यकी अैसी प्रवृत्तियोको अुस आश्रमका दूसरा महत्त्वपूर्ण लक्षण समझ लीजिये।

अिस प्रकारकी जो भी स्वराज्यकी प्रवृत्तिया चलती हो, अुनमें शरीक होना, देशके अनेक प्रश्नोका परिचय करना, ये प्रश्न सत्य-अहिंसाके मार्गसे किस तरह हल किये जाते हैं, अुस मार्ग पर चलते हुअे कैसी परीक्षाये होती है, कैसे हृदय-परिवर्तन होते है, यह अनुभव प्राप्त करना और अुस अनुभवसे आत्म-रचना करना ही हमारी मुख्य शिक्षा है। समय-समय पर हमारा मार्गदर्शन जरूर किया जाता है। कभी कभी अनुभवी कार्यकर्ताओके साथ काम करनेका मौका मिलनेसे अुनके अनुभवका कीमती लाभ भी मिल जाता है। कभी कोअी काम अपनी स्वतत्र सूझ-बूझसे करना पडता है। अुसमें हमारी सूझ-बूझ और कुशलताको विकसित करनेका मौका मिलता है।

आश्रमका तीसरा लक्षण यह है कि वहा दैनिक निर्वाहके व्यक्तिगत काम खुद ही करने पडते हैं। ये सब मुख्यत सफाअी और भोजनसे सबध रखनेवाले होते हैं। आत्म-रचनाके किसी भी अुम्मीदवारके लिअे अुनके भीतर शिक्षाका खजाना ही भरा होता है।

हम अपने घरोमें तो रोजके व्यक्तिगत कामोका सारा बोझ स्त्रियो और नौकर-चाकरो पर डालकर स्वय सभ्यजन बन कर फिरते रहते है। यहा आश्रममें अपना बोझ आश्रम खुद ही अुठाता है। व्यक्तिगत सारे काम — खाना बनानेसे लेकर पाखाना-सफाअी तकके सब काम — आश्रमवासियोको साथ मिलकर करने होते हैं। हम भी अपने हिस्सेमें आनेवाला भार अुठायें, यह आशा रखना स्वाभाविक है।

अुनमे बहुतसे काम काफी शरीर-श्रमके होते है। यदि हमने सारे दिन पडे रह-कर अच्छी-बुरी, कामकी और निकम्मी किताबें पढनेकी आदत डाल ली होगी, तो

आश्रमकी यह शिक्षा लेते समय हमारी हड्डिया विरोध करेंगी। अिसके सिवा, कुछ कामोको तो हम हलके माननेके आदी होते हैं। अुन्हे करनेका हमारा मन विरोध करेगा। अिन कामोसे अरुचि रखनेवाले हमारे मनमे कुछ अैसी शकायें अुठेंगी कि ये सब काम नौकरोसे करायें तो अध्ययन वगैरा दूसरी प्रवृत्तियोके लिअे कितना समय बच जाय। परन्तु यहा तो कामोका हेतु केवल खाने-पीनेका, जैसे-तैसे दिन पूरा करनेका नही, परन्तु अुनके द्वारा हमारी आत्म-रचना करनेका है। अिसमें आश्रमके ये सब कार्य हमारे अभ्यासक्रमका महत्त्वपूर्ण अग बन जाते हैं। वे नौकरोको कैसे सौंपे जा सकते हैं? कोअी विद्यार्थी अपनी पुस्तकें पढनेका काम कभी नौकरको सौप सकता है? वे काम करके हमें शरीर-श्रमकी आदतको रग-रगमे रमाना है, कामके गौरवको अपने खूनमें अुतारना है।

अिन कामोमे आत्म-रचनाकी कितनी बाते भरी है? नौकर-चाकर और धोबीका आश्रय न लेकर भी हमें अैसी सफाअी रखनी है कि हमारी प्रत्येक वस्तु खिलखिला कर हसती दिखाअी दे। यह केवल शरीर-श्रमसे कभी हो सकता है? श्रमके साथ जब प्रसन्न और स्वच्छताका शौकीन मन मिलता है, तभी यह परिणाम लाया जा सकता है। आश्रमकी स्वच्छतामे रहे हुअे लोग जब समाजमें जाते है, तब अुन्हें कचरेके ढेरमें रहने जैसा लगता है। यह मै केवल देहाती समाजके बारेमें नही कहता। अमीर और साधन-सम्पन्न समाजमें जाने पर भी अुन्हे यही अनुभव होता है। अिस तरह आखोमें समा जानेवाली स्वच्छता भी आश्रमका अेक अग ही है। यह स्वच्छता न हो तो अुस सस्थाको आश्रम नही, परन्तु अखाडे या अड्डे जैसा कोअी नाम देना पडेगा।

स्वच्छताके लिअे अितना परिश्रम करने और अुसकी अितनी लगन रखनेके पीछे अपने आरोग्य, सुख और आनन्दका विचार तो है ही, परन्तु मूल विचार आत्म-रचनाका अर्थात् अपनी आदते सुधारनेका है। अुसके साथ साथ पडोसकी ग्राम-जनताको कैसी सफाअी रखनी चाहिये और किस तरह रखनी चाहिये, अिसका प्रदर्शन करनेका खयाल भी अुसके पीछे है। स्वराज्य-रचनाके पहले पाठके रूपमें यदि कोअी कार्यक्रम हो तो वह स्वच्छताका ही है।

स्वच्छताकी तरह आश्रमकी दिनचर्याके अन्य सब कामोमें भी, अर्थात् खाना बनानेसे सबध रखनेवाले कामोमें भी, आत्म-रचनाकी और स्वराज्य-रचनाकी दोनो दृष्टिया है।

भोजनमे जिस प्रकार अस्वादके जैसा आत्म-रचनाका खयाल है, अुसी प्रकार जनताको यह पदार्थपाठ देनेका खयाल भी है कि सादा, सस्ता और फिर भी आवश्यक तत्त्वोसे युक्त राष्ट्रीय आहार कैसा हो। खाना बनानेकी कलामें अुसे नअी दृष्टि बतानी है। चक्की और अूखल-मूसलमें घुसी हुअी शरमको तोडकर अुन्हें फैशनकी चीजें बनाना है। गरीब लोग अज्ञानमे अपनी मूलत कम पोषक खुराकमें से चोकरको फेंककर अुसे अधिक नि सत्त्व बना देते हैं। अिस सबधमें अुनकी आखें खोलनी है। आहारका प्रश्न अेक बडा राष्ट्रीय प्रश्न होनेके कारण वह स्वराज्य-रचनाका ही अेक अग है। आश्रममें

हम रोजका खान-पान करते करते सहज ही अिस प्रश्नको हल करनेमे अपना हाथ बटाते है।

आश्रममें अैसे कामोंमें समय लगाना पडता है जिससे नये आदमियोंके मनमे असतोष रहता है। परन्तु जब अुनकी आखें खुलेंगी और वे समझने लगेंगे कि अिस समयका कितना सुन्दर राष्ट्रीय सदुपयोग होता है तब अुनका असतोष मिटकर अैसे सब कामोंमें अुनका अुत्साह बढ जायगा।

आश्रमकी चौथी विशेषता है राष्ट्रीय ग्रामोद्योगोकी। अुनमे से कुछ मुख्य अुद्योग सीखनेकी सुविधा वहां जरूर होगी। अुन्हें सीख लेनेसे हमारी आत्म-रचनामे बडी सुदर वृद्धि होगी। पढे-लिखोमें अुद्योगके प्रति जो अरुचि होती है, वह हमारे मनसे दूर हो जायगी। हमारे अकुशल हाथोमें कुशलता आ जायगी। हमारी स्वदेशीकी भावना अधिक गहरी और ज्ञानमय बनेगी, क्योकि ये अुद्योग सीखनेसे हमें हाथकी बनी हुअी चीजोके लिअे आन्तरिक प्रेम अुत्पन्न होगा। गावोके कारीगरोके प्रति भी कुदरती तौर पर हमारी सहानुभूति बढेगी। अुनके अुद्योग कैसे नष्ट हुअे और अुनकी स्थिति कैसे सुधर सकती है, अिनका विचार अधिक सहानुभूतिसे करनेकी मति भी हमे सूझेगी।

स्वराज्यकी रचनामें भी अिन राष्ट्रीय अुद्योगोकी शिक्षा हमारे लिअे बहुत अुपयोगी सिद्ध होगी। रचनात्मक कार्यक्रममे देशके नष्ट हो चुके अनेक ग्रामोद्योगोको फिरसे जीवन-दान देनेका कार्यक्रम बहुत ही जरूरी है। कताअी, पिंजाअी, बुनाअी वगैरा कपडे-सबधी अुद्योगोको विदेशी राज्यके कारण बहुत भारी धक्का पहुचा है। गावोमे अेक जमानेमें अच्छी तरह चलनेवाले अन्य कअी अुद्योग भी मरणासन्न दशामे है। कुम्हारका काम, चमडा पकानेका काम, रगाअी और छपाअीका काम, घानीका काम, हाथ-कागज बनानेका अुद्योग, समुद्र-तटके गावोका नौका-अुद्योग — अैसे अनेक अुद्योग यत्रोकी स्पर्धासे, सरकारकी तरकीबोसे और हम लोगो द्वारा स्वदेशीकी भावना छोड बैठनेसे नष्ट हो गये है। अिनमें से जितने अुद्योग सीखे जा सकें अुतने जब तक हम सीख नही लेते, तब तक ग्रामसेवककी हमारी योग्यतामें बडी कमी रह जाती है।

अब तकके वर्णन परसे आप यह तो समझ गये होगे कि अैसा आश्रम किसी ग्राम-विस्तारमे, जहा दलित-पीडित लोग रहते हो अुसके पडोसमे ही हो सकता है। अैसे स्थानको हम आश्रमका पाचवा लक्षण ही समझें।

अैसे स्थानमें रहनेसे, और वह भी सेवाभावसे रहनेसे, हमे सच्चे हिन्दुस्तानका अनुभव होता है। सच्चा हिन्दुस्तान कितना दरिद्र है, कितना बेकार है, अुसकी खुराक क्यो खुराक कहने लायक नही है, अुसके कपडे कितने फटे-पुराने है, अुसे पानीके बिना कितनी तकलीफ है, साफ रहनेकी कला आती हो तो भी पानी जैसे साधनोंके अभावमें स्वच्छ रहना अुसके लिअे कितना असभव है, अुसके बालक कैसे नगे-भूखे रहते हैं और शिक्षाके बिना पलते है, गावमे पाठशाला हो तो भी गरीबीके कारण अुन्हें पढाना अुसके लिअे कितना असभव है, अुसके मवेशी कैसे अस्थि-पजर हो गये

है — अिसका खयाल हमे वहा रहनेसे होता है और देशकी दरिद्र स्थिति हमारे हृदय पर अंकित हो जाती है।

अैसे स्थानमे न रहे तब तक हमारा यही खयाल होता है कि गावोके लोग सब किसान होगे और अुनमे से प्रत्येकके पास जमीन, हल-बैल आदि काफी साधन होगे। परतु प्रत्यक्ष देखते है तभी हमे अिस बातका अनुभव होता है कि वहा तो अधिकाश लोग अैसे है, जिनके पास बीघेभर जमीन भी नही है। वे औरोके खेतोमें मजदूरी करके गुजर करते है, और यह मजदूरी भी अुन्हें रोज नही मिलती।

भारत देशका अैसा दर्शन हमारी आत्म-रचना पर गहरा असर डाले बिना कैसे रह सकता है? हमारा व्यक्तिगत जीवन खर्चीला होगा या असयमी और भोगी होगा, शरीर-श्रमसे रहित होगा, तो वह भीतरसे हमें काटने लगेगा। और अपने जीवनको यथासभव ग्राम-जनताके निकट ले जानेका स्वाभाविक रूपमें हमारा मन होगा।

अिस तरहका आश्रमवासका अनुभव लें तभी हमें स्वराज्यकी भी सच्ची कल्पना हो सकती है। अिन सब ग्रामवासियोको खेतीके लिअे काफी जमीन कैसे मिले, अुन्हें काफी गाय-बैल कैसे मिले, अुन्हें हवा और रोशनीवाले घर कैसे मिलें, अुनके सब बच्चे शिक्षाका दूध कैसे पीने लगें, अुनकी आखोमें स्वराज्यका तेज कैसे आये, अुनके दिलमें सत्याग्रहकी आग कैसे पैदा हो — ये सब प्रश्न तभी हमारी समझमें आ सकते हैं। अुनकी भयकर बेकारी देखें, तभी हममें स्वराज्यके लिअे तेजी और अधीरता आ सकती है, अुनके स्वभावके गुणोको पहचानें, तभी हमे विश्वास हो सकता है कि सत्य-अहिंसाका रास्ता यदि हम अुनके सामने अपने आचरण द्वारा अुपस्थित करें तो वे खुशी-खुशी अुसे अपना सकते है। हमारे देशके पढे-लिखे लोग दिल्ली और लदन-मार्का स्वराज्यका ही विचार कर सकते है। अैसे गाव-मार्का स्वराज्यकी कल्पना भी अुन्हें नही छूती। अिसका कारण यह है कि अुन्होने असली हिन्दुस्तान देखा ही नही है, अुन्होने आश्रमकी शिक्षा पाअी ही नही है। अितना ही नही, अुस शिक्षाके बिना गाववालोकी समझमे आनेवाली भाषा भी वे नही बोल सकते और लोग बोलें तो अुसका पूरा मर्म नही समझ सकते।

आश्रमका छठा लक्षण यह है कि वहा हमें अपने सकुचित घरकी चार-दीवारीसे बाहर निकलकर विशाल कुटुम्बमे रहनेका लाभ मिलता है। अेक सेवकके लिअे — अेक सत्याग्रही सैनिकके लिअे यह शिक्षा परम आवश्यक है। अुसे जो आत्म-रचना करनी है, अुसके लिअे घरके सकुचित जीवनमें बहुत कम अनुकूलता मिल सकती है।

घरमें तो मनुष्य अेक तरहका राजा बनकर रहता है। स्त्रियो और बच्चोकी सेवा अुसे सदा मिलती रहती है। अमीर हो तो नौकर-चाकर भी अुसमें वृद्धि करते है। अुसकी अिच्छानुसार साधन अुसे तुरत मिल जाते है। मनुष्य सामान्य स्थितिवाला हो, तो भी घरमे अुसका जीवन ज्यादातर सुखी, बिना मेहनतका, भोगरत तथा कामुकताका भी होता है।

आश्रमके विशाल परिवारमें जीवनका हेतु और जीवनकी पद्धति दोनो बदल जाते है। यहा अुसे साम्यवादके सिद्धान्तोका अूचेसे अूचा अनुभव मिलने लगता है। यहा वह गृहस्थ — घरका मालिक न रहकर अन्य सब आश्रमवासियोकी तरह ही अेक आश्रमवासी बन जाता है। सब जितनी सुविधाअें भोगते हो, जितने परिग्रह रख सकते हो, जैसा खान-पान करते हो, वैसा ही अुसे भी रखना पडता है। आश्रमका अैसा नियम तो होगा ही, परन्तु वह अुपरोक्त सारा सयम नियमके कारण ही नही रखेगा, अुसके दिलको ही यह अच्छा नही लगेगा कि अुसका जीवन दूसरोसे भिन्न रहे और वह दूसरोकी अपेक्षा अधिक सुख-सुविधा भोगे। अिस प्रकार हृदयसे किया हुआ सयम — अपरिग्रह, अस्वाद, मनुष्यका आतमबल बहुत बढा दे तो अिसमें आश्चर्यकी कोअी बात नही।

आश्रमके साथ सयम और ब्रह्मचर्यके खयाल जुडे होते है, अिसलिअे बहुत लोग यह कल्पना कर लेते है कि वहा स्त्रियो और बच्चोके लिअे स्थान ही नही होगा। अिनसे बचनेके लिअे वह पुरुषोका खडा किया हुआ कोअी अखाडा होगा। यह भ्रम मिटा देने जैसा है। सयम और ब्रह्मचर्यके लिअे स्त्री और बच्चोसे भागना हमारे आश्रमका स्वरूप है ही नही। अुसमें स्त्री-बच्चोके लिअे पुरुषो जैसा और पुरुषोके जितना ही स्थान है। जो कोअी आत्म-रचनाकी साधना करना चाहें, अुन सबके लिअे आश्रममें स्थान है — फिर वे पुरुष हो, स्त्रिया हो या बालक हो।

आश्रमी शिक्षाका लाभ लेनेके लिअे पुरुष अकेले जाय, अिसकी अपेक्षा अपनी पत्नियो और बालक-बालिकाओको भी साथ ले जाय, यह बहुत ज्यादा पसद करने जैसा है। परतु अितना सही है कि आश्रममें जाकर जो अपने कुटुम्बका अलग बाडा बनाकर बैठ जायगे, वे आश्रमी शिक्षाके अनेक कीमती तत्त्व खो बैठेंगे। आश्रममें पत्नीको पत्नीके रूपमें ले जानेकी बात नही है, वह भी अेक स्वतत्र देशसेविकाकी हैसियतसे आत्म-रचना करनेके लिअे ही वहा आती है। आश्रममे आनेके बाद पति अुसे अपने सुख-सुविधाके कामोमे लगाये रखनेका अधिकार छोडकर अुसे अपनी आत्म-रचनाके लिअे मुक्त कर देता है। सुख-सुविधाअें तो आश्रममें आवश्यकतानुसार सबको अेकसी मिलती ही है। अुनसे वे दोनो काम चलाना सीख लेंगे। दोनो अपने अपने अलग विभागोमें रहेंगे, अपनी अपनी योग्यताके अनुसार अुद्योगो और सेवाकार्योमें शरीक होगे। साथमें बालकोको ले गये होगे — और ले ही जाना चाहिये — तो वे भी छोटे अुगते हुअे सेवकोंके रूपमे ही तालीम पायेंगे। मा और बाप दोनो अुन पर नजर जरूर रखेंगे, परन्तु दूसरे बच्चोकी अपेक्षा अपने बच्चोको अधिक खिलाने-पहनानेमे मा-बापको अेक प्रकारका जो अभिमान होता है, अुस पर वे आश्रममें सयम रखेंगे। जरूरतके अनुसार सब बच्चोको खाने-पहननेकी चीजें मिलेगी ही, अिसलिअे वे अिससे अधिक लालन-पालनका मोह छोड देंगे। अपने बच्चो पर अुनका जो प्रेम होगा अुसे आश्रमके सब बच्चो पर फैला देनेकी अुन्हे यहा तालीम मिलेगी।

आश्रमके विशाल परिवारमे रहनेके और भी बहुतसे कीमती फायदे है। वहा जैसे विद्वान और अमीर घरोके लोग शिक्षाके लिअे आये होगे, वैसे गावके कम पढे और गरीब स्थितिके लोग भी अिसी अुद्देश्यसे आये होगे। गावके सदस्योका पलडा जिस आश्रममे भारी होगा, वहाका जीवन बहुत स्वस्थ रहेगा, आरोग्यप्रद होगा। अुनके मजबूत शरीर, अुनकी मेहनती आदते, जीवनके अनेक अुपयोगी कामोका अुनका ज्ञान, बहुतसे साधनो और सुविधाओके बिना भी सुखसे रहनेकी कला और अिन सबके सिवा अुनका हसमुख, मिलनसार, झगडा न करनेवाला और दूसरोको सदा मदद देनेवाला स्वभाव—अैसे गुणोवाले साथियोके साथ रहनेका मौका मिलना कोअी मामूली शिक्षा है? अुनका सहवास बहुतोके जीवनमे तो गुरुके मिल जाने जैसा परिणाम लायेगा।

अैसे ग्रामवासी सेवक जिस आश्रममें अधिक होगे, वहाका खान-पान, रहन-सहन, कामकाज, साधन-सुविधाअें स्वाभाविक रूपमे गावोकी अर्थात् सच्चे हिन्दुस्तानकी परिस्थितिके अनुरूप ही होगी। अैसे आश्रममें विद्वान और अमीर घरोके सेवकोको रहनेका अवसर मिले, तो अुन्हे अुसे महा सौभाग्य ही समझना चाहिये। गरीबोको दूरसे देखकर और अुनका पुस्तकीय अध्ययन करके बुद्धिमान लोग अुनकी स्थितिको अच्छी तरह समझ तो सकते है, परन्तु अिस तरह समझनेसे अधिकसे अधिक अुनके मनमें गरीब लोगोंके बारेमे दया पैदा होगी, अुनका कुछ अुपकार करनेकी अिच्छा पैदा होगी। अिससे अधिक अुत्कट भावना शायद ही पैदा हो सके। परतु अिस प्रकार ग्रामवासी सेवकोके साथ अुनके स्तर पर रहनेकी तालीम मिले, तो भारतकी वास्तविक स्थिति अुनके हृदयो पर अकित हो जाय, अुन्हे अपना आरामका जीवन झूठा, कडवा और अशोभनीय प्रतीत होने लगे, और भारतके गावोको सुखी तथा स्वतत्र बनानेकी लड़ाअीमें जीवन समर्पण करनेकी लौ भी लग जाय।

अिसके अलावा, विशाल आश्रमी कुटुम्बमे हरिजनोके साथ अेक परिवारके सदस्य बनकर रहनेका लाभ मिलनेकी भी सभावना रहती है। हरिजनोको केवल स्पर्श करके और अूपर अूपरसे अुनके प्रति प्रेम दिखाकर अस्पृश्यताके घोर अन्यायका निवारण हम बहुत थोडा कर सकते है। यह अन्याय हमें असह्य हो अुठे, अिसका नाम सुनते ही हमारा खून अुबल अुठे, प्राणोकी बाजी लगाकर अुसके विरुद्ध सत्याग्रह छेडनेकी धुन हमें लग जाय, तो ही अिस दिशामें हम कोअी सच्ची सेवा कर सकते है। हरिजनोंके साथ अितनी गहरी अेकता साधे बिना अन्तरमें अिस प्रकारकी विह्वलता शायद ही पैदा हो सके।

आश्रम-परिवारमें यदि देशमें माने जानेवाले भिन्न भिन्न धर्मोंके सदस्य होगे, तो हमारी आत्म-रचनामें अेक और अत्यन्त कीमती वृद्धि होगी। परतु यह तो तभी सभव होगा, जब आश्रमके प्राण माने जानेवाले मनुष्य सर्वधर्म-समभावके जीते-जागते दृष्टात होगे। तो ही अुनके पास अलग अलग धर्मोके सेवक आत्म-रचनाके लिअे आकर्षित होकर आयेंगे। अैसे आश्रमके वातावरणमें कोअी अद्भुत अुदारता और गुणग्राहकता

व्याप्त होगी। 'हमारा धर्म अूचा, हमारा आचार्य अुत्तम, हमारा तत्त्वज्ञान श्रेष्ठ और हमारे ही महात्मा और पैगम्बर सच्चे है' — अैसा अल्पात्माओका जो अभिमान हमारे समाजमें फैला हुआ है और सारे क्लेशोका कारण बन जाता है, वह अैसे सेवकोंके जीवनमे नही पाया जाता। फिर भी सब अपने-अपने 'धर्मके प्रेमी जरूर होगे। जिस तरह भिन्न भिन्न वाद्यो और साजोमें प्रवीण अनेक गुणी गायक अिकट्ठे होते है, और सभी अेकराग होकर अेक समूह-गान पैदा करते है, अुसी प्रकार अलग अलग धर्मोके सेवकोके जीवन अैसे आश्रममें अेक विशाल और अलौकिक धर्म-सगीत निर्माण करेंगे। आश्रमकी प्रार्थनामें, सेवाकार्योमें तथा खाने-पीने और सोने-बैठने जैसी मामूली बातोमें भी अुस सगीतका स्वर गूजता रहेगा। हमारे देशकी रग-रगमें पैठे हुअे साम्प्रदायिक जहरके वातावरणमें अुदारसे अुदार विचारके मनुष्योके लिअे भी दगो और वाद-विवादके विपम अवसर पर साम्प्रदायिकताके प्रवाहसे बचना अत्यन्त कठिन हो गया है। अैसी स्थितिमें कुछ भी क्यो न हो जाय, हममें अेक-दूसरेके प्रति रोष न पैदा हो, अेक-दूसरेके प्रति शका न पैदा हो, किसीके अुकसाये हम अुकसें ही नही, अैसा हमें अपना स्वभाव बना लेना चाहिये। यह अिस प्रकारकी आश्रमी शिक्षाके विना कैसे हो सकता है? किसीके तोडे न टूटनेवाला सर्वधर्म-समभाव अतरमें पैदा होना और अुसका बना रहना अिस शिक्षाके बिना नितान्त असभव है। हम तो साम्प्रदायिक झगडोको शान्त करनेके लिअे धर्मक्रूर बने हुअे लोगोकी भीडमें कूद पडने और अपना निर्दोष रक्त बहाकर लडनेवाली कौमोके हृदयोको जोडने और धर्मकी बाह्य विधियोकी जडमें रहे अिस सच्चे धर्मका अुन्हे दर्शन करा देने तककी तैयारी करना चाहते हैं। अिस भावनाको अुपरोक्त आश्रमी शिक्षा कितना सुन्दर पोषण दे सकती है?

आत्म-रचनाकी पाठशाला-जैसे अिस आश्रमका स्वरूप कैसा हो, यह मैंने आज विस्तारसे आपको बताया है। जैसा कि हम देख चुके है, अुसमें ये छह लक्षण होने चाहिये

(१) सत्य, अहिंसा आदि सिद्धान्तोमें निष्ठा रखनेवाले और स्वराज्यके लिअे जीवन अर्पण करनेवाले व्यक्ति या मडल अुसके (आश्रमके) प्राण होने चाहिये।

(२) वह स्वराज्य-रचनाकी प्रवृत्तियो और सत्याग्रहका केन्द्र होना चाहिये।

(३) वहा सफाअी और भोजन वगैरासे सबध रखनेवाले सब निजी काम हाथसे किये जाने चाहिये।

(४) वह राष्ट्रीय महत्त्वके ग्रामोद्योगोका केन्द्र होना चाहिये।

(५) अुसका स्थान सच्चे हिन्दुस्तानमे — अर्थात् जहा दलित-पीडित देशबन्धु रहते हो अुनके बीच होना चाहिये।

(६) वह देशसेवकोका अेक विशाल कुटुम्ब होना चाहिये, जिसमे ग्रामवासी, हरिजन, अलग अलग धर्मोके सदस्य, स्त्रिया और पुरुष, अपने सकुचित स्वार्थोवाला जीवन छोडकर सेवाके लिअे आ बसे हो।

अैसे आश्रम आत्म-रचनाकी अुत्तम पाठशालायें है। वहा सत्य, अहिंसा आदि ग्यारह सिद्धान्तोको अपने व्यक्तिगत जीवनमें और स्वराज्य-रचनाके सब कार्योमें, अुतारनेका आग्रह पैदा होगा, अुनके प्रयोग करनेके अनेक अवसर मिलेगे और श्रद्धेय पुरुषोके पथप्रदर्शनका लाभ भी मिलेगा।

स्वराज्य-रचनाके किसी भी क्षेत्रमे सेवा करनेकी अिच्छा रखनेवाले सेवकोको अपने प्रेम और श्रद्धाके पात्र किसी मण्डलकी तरफसे चलनेवाले अैसे किसी आश्रमको खास प्रयत्न करके ढूढ लेना चाहिये और वहा आत्म-रचनाकी तालीम जरूर प्राप्त करनी चाहिये।

आजकल अिन लक्षणोसे युक्त प्राणवान वातावरणवाले आश्रम देशमें कितने कम है? अिसीलिअे स्वराज्यके सब कामोमें तालीम न पाये हुअे, सिद्धान्तोकी बहुत कच्ची समझवाले सेवक ही मिलते है। अिसका और क्या फल निकल सकता है? अिसके कारण स्वराज्यके अेक भी कार्यमें जीवन पैदा नही होता।

खास तौर पर सत्याग्रहकी लडाअियोमें तो यह खामी अैन वक्त पर रगमें भग कर देती है। रचनात्मक कार्योमे तो कच्चे सेवकोको अपना सेवाकार्य करते करते अनुभवी बन जानेका अवसर मिल सकता है, लेकिन सत्याग्रहकी लडाअियोमें द्रुत गतिसे काम होता है, विरोधी पक्षकी तरफसे भी तेजीके साथ वार पर वार होते है, सेनापतिके हमसे पहले पकडे जानेके कारण हुक्म देनेवाला हमारी अतरात्माके सिवा और कोअी नही होता। अैसे समय केवल देशके खातिर लडनेका जोश ही अत तक कैसे काम दे सकता है? हमारी लडाअी तो अहिंसामय सत्याग्रहकी है। सत्य-अहिंसाको जीवनका स्वभाव बनाये बिना अिस लडाअीके दाव और खूबिया हमें अपने आप कैसे सूझ सकती है? लबी जेलो और भारी बलिदानोके प्रसगोमे सत्य-अहिंसाके बलमें विश्वास कैसे बना रह सकता है? हिंसा और कपट-युद्धके छोटे रास्ते अपनानेके प्रलोभनसे हम कैसे बच सकते है?

अिसलिअे ग्यारह सिद्धान्तोका श्रद्धामय और ज्ञानमय पालन करके सेवक अपने सच्चे गोला-बारूदको — सत्य और अहिंसाको — अपने रोम-रोममें रमा कर सुन्दर आत्म-रचना कर लें, यह निहायत जरूरी है। अिसके लिअे अैसे आश्रम ही अुत्तम पाठ-शालाये है।

सेवकोके लिअे अुत्तम पाठशाला होनेके सिवा जनताके बीच रचनात्मक काम करके अुसकी स्वराज्य-शक्ति बढानेके लिअे भी आश्रम अुत्तम केन्द्र बन सकेंगे। आश्रमोमें सत्य-अहिंसा आदिको व्रतके रूपमे अपनानेवाले कार्यकर्ताओके मडल स्थायी निवास करते होगे और अुनके हाथो लोगोको, बिना पाठशालाके, सच्चे स्वराज्यकी गहरी शिक्षा मिलेगी, सत्य-अहिंसा आदिके आग्रहको जीवनमें अुतारनेकी शिक्षा मिलेगी, परराज्यके घेरेके बीच भी अपने घर और गावका स्वराज्य बना लेनेकी शिक्षा मिलेगी तथा परराज्यके विरुद्ध सत्याग्रह करनेकी सत्य-अहिंसामय युद्ध-विद्याकी भी अुन्हे शिक्षा मिलेगी।

यदि हमें स्वराज्यके काममें तेजी लाना हो और सत्याग्रहकी लडाअियोमें रग जमाना हो, तो अिस प्रकारके आश्रम देशके हर जिले और हर तहसीलमें हो यह अत्यन्त आवश्यक है।

प्रवचन ७६

स्वराज्य-आश्रम

कल हम देख चुके है कि सच्चे आश्रमके क्या क्या लक्षण होते है। हम यह भी देख चुके कि यदि हमें अपनी स्वराज्यकी लडाअियोमें बार बार आगे बढकर पीछे न हटना हो, तो हर जिले और तहसीलमें अैसे आश्रम होने चाहिये और स्वराज्यका काम करनेवाले प्रत्येक स्त्री-पुरुषको वहा रहकर ग्यारह सिद्धान्तोको अपनी रग-रगमें रमा लेनेकी — अपनी आत्म-रचना कर लेनेकी — शिक्षा मिलनी चाहिये।

अैसी आश्रमी शिक्षा लेनेके लिअे हम और आप अिस आश्रममें जमा हुअे है। हम अिस आशासे आये हैं कि वह शिक्षा हमें यहा मिल जायगी। हम जानते है कि आदर्श आश्रमके जिन लक्षणोका हम विचार कर चुके है वे सब यहा पूर्ण रूपमें है, अैसा नही कहा जा सकता। शेष सब लक्षण तो हमने अपनी शक्तिके अनुसार यहा जुटा लिये हैं, परन्तु आश्रमके पहले ही लक्षणमें — अुसके केन्द्रमें कोअी स्वराज्य-निष्ठ और ग्यारहो सिद्धान्तोको घोलकर पी जानेवाला सत्याग्रही व्यक्ति या मडल होना चाहिये — हमारा आश्रम कच्चा मालूम होगा। यह लक्षण हममें से किसी पर पूरी तरह लागू होता है, अैसा कहनेकी हमारी हिम्मत नही है। हम अेकादश सिद्धान्तोको घोल कर पी जानेवाले सत्याग्रही है, कैसे भी खतरेके होते हुअे सत्यको छोडना हमारे लिअे असभव हो गया है, चाहे जैसे प्रलोभनके सामने भी हम अहिंसाको छोड नही सकते, अैसा कहें तो वह हमारा अभिमान ही माना जायगा। अिन सिद्धान्तोका वल कल्पना-से थोडा समझमें आता है और अुन्हें हड्डियोमें रमा लेनेका प्रयत्न करनेकी हमारी अुत्कट अिच्छा है, अितना ही हम कह सकते है। अिस मार्गमें हमें भी मार्गदर्शककी आपके जितनी ही जरूरत है। मार्गमें अकेले पड जायगे तो अधे जैसे हो जायगे, यह भय हमें भी वना ही रहता है।

हा, स्वराज्यकी लगन हमें अवश्य है। वह किसे नही होगी? परन्तु अुसके लिअे लडते लडते अभी तक किसीने अपना मस्तक नही दिया है, अत अिस लगनका भी अभिमान करना अधिक मालूम होता है।

फिर भी अितना निश्चित है कि अिस आश्रममें हमें अपने आदर्शको अपनी आखोंसे कभी ओझल नही होने देना है। हमें सत्य और अहिंसामें दिनोदिन अधिक गहरे जाना है और अुस मार्ग द्वारा स्वराज्य लानेके प्रयोगमें अधिकाधिक आगे वढना है। हममें से तो कोअी अुस समय अिस आश्रममें नही थे, परन्तु कोअी विचारशील मित्र

अिसका नाम 'स्वराज्य-आश्रम' रख गये है। यह नाम सदा हमे अपने आदर्शकी याद दिलाता रहता है। यह हमें स्वराज्यकी याद ही नही दिलाता रहता, परन्तु हमारे मनगे कभी यह बात भी हटने नही देता कि हमारा मनचाहा स्वराज्य आश्रमी शिक्षाके विना नही आ सकेगा।

हमारे आश्रमकी भूमि दरिद्रसे दरिद्र लोगोकी आवादीमे स्थित है। यह वात भी हमें अपने आदर्शको सदा ताजा रखनेमे अच्छी सहायता देती है। दिल्ली या शिमला-छापका स्वराज्य हमारे कामका नही। आज अिस सारी दरिद्र आवादी पर गोरे राज्य करते है। वैसा ही आगे चलकर काले लोग राज्य करें, अिसमें हमे कोअी दिलचस्पी नही। हमें तो अिन दरिद्र लोगोका अपना स्वराज्य चाहिये। हमें अैसा स्वराज्य चाहिये जिसके आनेसे अुनकी दरिद्रता मिट जाय, अुनका अज्ञान चला जाय, अुनकी आखोमें स्वराज्य और स्वतन्त्रताका तेज चमकने लगे और वे कोअी भी जुल्म या अन्याय सहन न करें। कोअी सरकार अिन लोगोका यह स्वराज्य गोरी या काली सेनाकी मददसे जीतकर अिन्हें नही दे सकती। यह स्वराज्य अिन्हें और हमारे जैसे सेवकोको अपने भीतर सत्याग्रहका शौर्य पैदा करके ही लाना पडेगा। यह शौर्य अिस प्रकारके अनेक स्वराज्य-आश्रम देशभरमें खुलें तो ही अुत्पन्न हो सकता है। यह वात हमारे आश्रमकी भूमि हमें निरतर स्मरण कराती है।

हम स्वय अपूर्ण है, अिसलिअे हमारे आश्रमका भी अपूर्ण होना स्वाभाविक है। परन्तु हम आदर्शके सूर्यको आखोके सामने रखकर सदा अूपर ही अूपर चढते रहेंगे, तो हमारा आश्रम भी अूपर चढता रहेगा, और आश्रम जैसे-जैसे पूर्णताके पास पहुचता जायगा, वैसे-वैसे हम खुद अुसमें से अधिकाधिक प्राणवान शिक्षा प्राप्त करते रहेंगे।

परन्तु आश्रमोके आदर्शकी तुलनामें आश्रमवासियोका अधूरापन अितना ज्यादा होता है कि अैसे आश्रमो और आश्रमवासियोके बारेमें लोगोमें अेक प्रकारका अविश्वास—अेक तरहका पूर्वग्रह—बना हुआ मालूम होता है।

साधारण लोगो और राष्ट्रीय कार्यकर्ताओ पर भी हम आश्रमवासियोके बारेमें क्या छाप है, यह आपने सुना है? वे हमें विचित्र प्राणी ही मानते है। हम छोटी घुटनो तककी धोती पहन कर फिरते रहते है, अपने खान-पान और कपडे-लत्तोके नियमोसे बाहर निकलते ही नही, आश्रममें कोअी आये-जाये तो अुसके साथ हम सभ्यतासे बात भी करना नही जानते और अैसा दिखावा करते है मानो कामसे सिर अुठाने तककी हमें फुर्सत नही होती—अैसी हमारी मूर्ति अुन्हें दिखाअी देती है।

हमारे साथ काम करते समय अथवा हमें कोअी काम सौंपते समय नेताओके मनमें हमेशा कुछ न कुछ परेशानी रहा करती है। अुन्हे यह शका रहती है कि हम कामकी अपेक्षा अपने नियमोमें और आश्रमी सुविधाअें जुटानेमें ही अधिक लग जायगे, लोगोके साथ घुलमिल जानेकी कला न आनेके कारण अुनसे वाछित कार्य नही करा सकेंगे और सिद्धान्तोके घोडेको बीचमें ही कुदा कर लोगोको चमका देंगे।

खास तौर पर जब राष्ट्रीय काग्रेसके राजनीतिक काम हो रहे हो, चुनाव हो रहे हो, सधि-वार्ताअें चल रही हो, तब अुनसे हमें सदा काफी दूर रखनेकी वे विशेष सावधानी रखते है। वे यह माननेको तैयार नही होते कि हममें अैसे कामोके लिअे लगन और सर्वांगीण दृष्टि हो सकती है। अिन कामोमें तो अनेक भिन्न भिन्न मत और शक्ति-वाले लोगोके साथ काम करना पडता है, अुनकी खामियोको सहन करके वे देशकी जितनी सेवा कर सके अुतनी आभार-सहित स्वीकार करनी पडती है। लेकिन हम आश्रमवासी तो अुनके मतानुसार अेकमार्गी लोग है, चाहे जब सिद्धान्तका प्रश्न पैदा कर देते है, लोगोका अुत्साह भग कर देते है और कामको सरलतासे नही चलने देते।

आलोचक अपनी बात अैसी कडी भाषामें नही पेश करते, परन्तु हमें समझ लेना चाहिये कि अैसी तमाम आलोचनाओके मूलमें अुनकी यह मान्यता होती है कि हम आश्रमोमें रहकर नकली जीवन बिताते है। अर्थात् हम जो अनेक नियम पालते है अुनमें देखादेखी करते है, अुनका रहस्य हम शायद ही समझते है, और चूंकि रहस्य नही समझते अिसलिअे हमें यह पता नही चलता कि कहा कब कितना रखें, कितना छोडें, कौनसी सिद्धान्तकी बात है और कौनसी ब्यौरेकी बात है।

यदि हमारा जीवन अैसा नकली हो, तो हमें जरूर सचेत होना चाहिये। हमें यहा आत्म-रचनाकी शिक्षा प्राप्त करनी है, और नकल तो प्रत्येक प्रकारके दभ और झूठकी जननी होनेके कारण शिक्षाकी कट्टर शत्रु है।

समय बिगाडना नही चाहिये, पल पलका हिसाब रखना चाहिये, यह हमारा अेक जीवन-सूत्र है। यह अितने महत्त्वका सूत्र है कि दुनियामें कोअी अिसके विरुद्ध नही बोल सकता। आश्रमवासीको ही नही बल्कि प्रत्येक मनुष्यको किसी भी परिस्थितिमें, यदि वह अपने जीवनका सदुपयोग करना चाहता हो, अिस सूत्र पर आग्रहपूर्वक अमल करना चाहिये। परन्तु हम अपना जीवन घडीकी सुअी और समय-पत्रकके अनुसार चलानेके आग्रही है, अिसलिअे क्या हम आ पडनेवाले महत्त्वपूर्ण कर्तव्योकी अुपेक्षा करेगे, अुनका पालन नही करेगे? अुदाहरणार्थ, हम बीमारकी सेवा करनेका फर्ज आ पडने पर क्या समय-पत्रकको थोडी देर अलग नही रख सकेंगे? अथवा अतिथिका स्वागत करने या राहगीरको रास्ता बतानेके लिअे भी वैसा नही करेगे? हा, हमारा जीवन नकली होगा तो हमें अिसका विवेक नही रहेगा कि कहा कौनसे कर्तव्यका महत्त्व है, हम जड-भरतकी भाति अपने नियमसे चिपटे रहेगे और किसीसे पानीका पूछने या किसीके प्रश्नका हसकर जवाब देनेकी साधारण शिष्टताका भी पालन नही कर सकेंगे। हम मुहसे तो नही बोलेंगे, परन्तु कुछ अैसे विचित्र ढगसे व्यवहार करेगे कि हमारा चेहरा ही मानो लोगोकी तरफ अैसे अपमानजनक वचन फेंकता हो "कहासे तुम्हारे जैसे बेकार लोग चले आये? हम तुम्हारे जैसे बेकार नही रहते। देखते नही कि मैं आश्रमवासी हू, और हमेशा काममें डूबे रहनेका नियम पालन करता हू?"

अिसी प्रकार हमारे भोजनके नियम लीजिये। वे भी यदि ग्रामोद्योग आदि सिद्धान्तो और दरिद्र जनताके सेवककी शोभा देनेवाली दृष्टिसे न बनाये गये हो, परन्तु केवल

नकली ही हो, तो भोजनके मामलेमें भी हमारा बरताव अैसा ही विचित्र होगा। हम जहा भी जायगे वहा हमें अपनी जरूरतकी चीजे जुटानेकी कोशिशमें ही फुरसत नही मिलेगी। हम लोगोको अुनके लिअे तग कर डालेंगे। दूसरे साथियोने खाया-पिया या नही, अिसकी खबर रखनेकी बारीकी भी हम नही दिखायेंगे, तो फिर चाय-पानकी आदतवालेके लिअे तो सहानुभूतिपूर्वक विचार करने ही क्यो लगे? अितना ही नही, हमारे भीतर भरी हुअी कटुता लोगो पर प्रहारोंके रूपमें फूटे बिना नही रहेगी "तुम तो बिलकुल असयमी हो, स्वादोके गुलाम हो, चाय जैसी आदतको भी जीत नही सकते, तो बडी चीजोको क्या जीत सकोगे?" वगैरा।

अिसी तरह हमारे जीवन नकली होगे, तो हम साप्ताहिक मौन तो बहुत सावधानीसे रखेंगे, परन्तु जब बोलना शुरू करेंगे तब शब्द शब्दमें विनय, सभ्यता और नम्रताका खून करने लगेंगे, हम प्रार्थनाके समय प्रार्थना तो करेंगे, परन्तु अुसमें प्रभुके ध्यानकी अपेक्षा आसपास जो लोग सो रहे होगे अुनके प्रति अनुदार विचारोका ही ध्यान हमे विशेष होगा, और कदाचित् आवाज काफी अूची करके भी हम धुन चलाने लगेंगे। मनमें हम कहेगे, "कैसे आलसी लोग हैं कि अब तक सो रहे है? अुनके खातिर हम क्यो धीरेसे प्रार्थना करे? अुन्हे सोनेका हक है, तो क्या हमें प्रार्थना करनेका हक नही है?"

हम अपने बरतन माजने, कपडे धोने वगैराका काम खुद करनेका नियम पालें, यह तो बहुत अुत्तम है और अुसके लिअे कोअी हमें दोष दे ही नही सकता। अधिकसे अधिक कोअी मीठा मजाक कर लेगा। परन्तु हमारा यह नियम हमारे जीवनका स्वाभाविक लक्षण बन गया होगा, तो हम अपने बरतन माजकर ही नही अुठ जायगे। हमारा नियम तो सुन्दर शिष्टताके रूपमें प्रगट होगा। पासमें अैसे कामकी आदत न रखनेवाले मित्र होगे, तो अुनके बरतन माजनेको लिये बिना हमे चैन नही पडेगा। परन्तु हम नकली होगे तो अैसी शिष्टता सूझनेके बजाय हम अुनकी कडी टीका करेंगे, अथवा मुहसे नही बोलेंगे तो भी अैसा चेहरा बनाकर अपना काम करेंगे कि दूसरोको अुससे नीचा देखना पडे।

हमारे जीवन अैसे नकली होगे, तो हम कभी सच्ची सेवा करनेके लायक नही बनेंगे, जहा जायगे वहा हम लोगोको बुरे लगेंगे। सब हमें दूर रखेंगे। कारण, नकली आदमियोकी कडी आलोचना सहन करनेको कौन स्वाभिमानी मनुष्य तैयार होगा? दूसरोको नीचा दिखाते रहनेवाले असभ्य आदमीका साथी बनना किसे पसन्द होगा? जो आदमी केवल अपना या अपने नियमोका ही विचार करनेवाला हो, जिसमें दौडकर दूसरोके सहायक बननेकी हार्दिक ममता और प्रेम न हो, वह अुपयोगी काम भी क्या करेगा? अुसमें अनुभव और कुशलता भी क्या होगी? साफ है कि अैसे निरुपयोगी, निकम्मे और फिर भी आश्रमवासी होनेका अभिमान करनेवाले मनुष्यकी असभ्यता और कटुताको दूसरे सहन नही करेंगे।

यह तो अिस बातका पृथक्करण हुआ कि आश्रमवासियोके प्रति लोगोमें अेक प्रकारकी अप्रीति अथवा आलोचना-वृत्ति कैसे पैदा हो जाती है। परन्तु अिसका कोअी यह अर्थ न समझे कि नकली मान लिये जानेके डरसे हम आश्रमी शिक्षाको — आत्म-रचनाको — छोड दें। अुसे छोड दें तब तो जीवनमें शून्य ही शेष रह जायगा। क्योंकि आत्म-रचना क्या चीज है? जीवनके प्रत्येक अगमें अेक सेवकको — अेक सत्याग्रहीको शोभा देनेवाले ढगसे सिद्धान्तपूर्वक चलनेका आग्रह रखनेका नाम ही आत्म-रचना है।

आश्रम-जीवनमें अेक सेवकको शोभा देनेवाली सादगी होनी चाहिये और प्रेमसे अुमडनेवाला हृदय होना चाहिये, अेक सैनिकको सुशोभित करनेवाली राष्ट्रीयता और शूरवीरता होनी चाहिये, अेक सुधारकको शोभा देनेवाली नवीनताका स्वागत करनेकी — क्रान्तिका स्वागत करनेकी तैयारी भी होनी चाहिये और अेक सत्याग्रहीको शोभा देनेवाला ज्ञान-विज्ञान भी होना चाहिये।

अैसा जीवन, जो लोग किसी विचार या गभीरताके बिना लकीरके फकीर बनकर जीवन बिताते हैं अुनके जीवनसे भिन्न होगा, और भिन्न होनेके कारण लोगोमे हमारे लिअे कुछ अुपहास और आलोचना हो, यह स्वाभाविक है। परन्तु अिससे वह छोडने लायक वस्तु नही बन जाती। आलोचनाओ और अुपहासोका सार हमें अितना ही निकालना चाहिये कि हम अपना जीवन नकली न बनने दें।

और यह बात भी नही कि नकल सदा खराब ही होती है। अन्तमें तो मनुष्य जो कुछ सीखता है नकलके द्वारा ही सीखता है। जो हमारे गुरुजन हैं, हमसे ज्ञान, अनुभव आदिमे आगे बढे हुअे हैं, जिनके लिअे हमें श्रद्धा और प्रेम है, अुनके जीवनका अनुकरण हम स्वाभाविक तौर पर करेगे ही। नकल किये बिना हम रह नही सकते, और नकल न करे तो हम आगे भी नही बढ सकते।

और आश्रमके मानी, जैसा मै बता चुका हू, किसी श्रद्धेय व्यक्तिके आसपास आत्म-रचनाकी भावनासे जमा हुअे लोगोका मडल ही है न? अैसे व्यक्तिके आसपास जमनेका हेतु ही यह है कि हम सब अुस बलवान व्यक्तिको देखकर बल प्राप्त करे, अुस ज्ञानीको देखकर ज्ञान प्राप्त करे, अुस महासेवकको देखकर सेवाधर्म सीखें।

अग्निको छुअे बिना अग्नि पैदा नही होती। केवल पठनसे अथवा भाषण सुननेसे या चर्चाअें करनेसे अेकके हृदयकी श्रद्धाका दूसरेमें सचार नही होता, अेकके दिलमें जल रही आग दूसरेमें प्रज्वलित नही होती, सामान्य स्वार्थमय जीवनसे बाहर निकलकर सारा जीवन सेवामें होमनेकी प्रेरणा अुत्पन्न नही होती, सत्यका अटूट आग्रह हृदयमें पैदा नही होता। अुसके लिअे किसी श्रेष्ठजनका सहवास — और वह भी दीर्घकालका सहवास — बहुत जरूरी है। बीजमें से वृक्ष बननेके पहले लम्बे समय तक अुगनेकी क्रिया होती रहना जरूरी है। हमारे जीवनमें भी स्थायी परिवर्तन होनेके लिअे श्रेष्ठजनका लम्बा सहवास बहुत आवश्यक है। हम अुसे बडे प्रसगोमें व्यवहार करते देखते हैं, छोटे प्रसगोमे भी

व्यवहार करते देखते है। अुमकी कठोरताका अनुभव करते है और कोमलताका भी अनुभव करते है। यह सब देखते देखते, अुमके नेतृत्वमें काम करते करते अुसके सिद्धान्तो और कार्य-पद्धतिको, अुमके बल और अुसके ज्ञानको हम अपनाते जाते है। अिसमें बुद्धिका प्रयोग भी है, और नकल अथवा अनुकरण भी है। देख देखकर, अुस पर विचार करके, अुसका अनुकरण करके, हम अपना जीवन बनाते है।

अिसलिअे 'नकल'—यह आलोचना सुनकर चौंकनेकी जरूरत नही। वह तो मनुष्य-जीवनमें शिक्षाका अेक अत्यत महत्त्वका साधन है। शिक्षाकी अनेक पद्धतियोमें आश्रम अेक अनोखी पद्धति है और हम मानते है कि वह सर्वोत्तम पद्धति है। अुसमें श्रेष्ठजनका सहवास, अुसके जीवनका अवलोकन और अनुकरण बडा काम करता है। यह पद्धति अैसी है जो हमारी रग-रगको बदल सकती है। आश्रमी शिक्षा ही जीवन-परिवर्तनकी शिक्षा लेनेकी सच्ची पद्धति है। अुसे नकल कहकर कोअी हमारी हसी अुडाये, तो क्या अुससे शरमिन्दा होकर हम यह शिक्षा छोड दें?

हम आश्रमवासियोको और देशसेवा करनेवाले सभी लोगोको यह भी समझ लेना चाहिये कि तालीम न पाया हुआ सैनिक जैसे हिंसक युद्धोके लिअे निकम्मा और भाररूप साबित होता है, वैसे ही सत्याग्रहके अहिंसक युद्धमें भी तालीम न पाये हुअे सैनिक निकम्मे और भाररूप साबित होते है। आश्रम-जीवनकी शिक्षा ही हमारी तालीम है। हम किसी भी क्षेत्रमें हो अथवा कोअी भी धधा करते हो, परन्तु यदि हमें समय समय पर देशकी सेवामें भाग लेना हो, समय समय पर सत्याग्रहकी लडाअियोमे शरीक होना हो, तो अुसके लिअे पहलेसे थोडी तैयारी करनेकी, थोडी तालीम पानेकी बडी आवश्यकता है। अिसके लिअे हमें जिन आश्रमोके प्रति श्रद्धा हो अुन आश्रमोमे थोडे-बहुत समय तक तालीम पाना जरूरी है।

बहुतसे लोग लडाअीका शख सुनकर जोशमें आ जाते है और अुसमें कूद पडते है। परन्तु तालीम न मिली हुअी होनेके कारण अुन्हे लडाअीकी सच्ची कल्पना नही होती। लडाअीका जोश ठडा पडता है अथवा लडते-लडते लम्बे समयकी जेल मिलती है, तब अुन्हे सदा अिस तरहकी शकाअें होने लगती है "अहिंसासे सरकारको कैसे हराया जा सकता है? जेलमें बन्द रहकर रोटिया खानेसे कैसे स्वराज्य मिलेगा? जेलमें दुश्मनोका काम क्यो किया जाय? दुश्मनके साथ छल-कपट और झूठका बरताव करनेको अधर्म कैसे कहा जायगा?" अित्यादि। अिसी प्रकार जनशक्ति बढानेवाले रचनात्मक कामो और अुनमें निहित सिद्धान्तोके बारेमें भी अुनकी शकाअें बढती रहती हैं "हिन्दू-मुसलमानोका जन्मजात वैर कभी मिट ही कैसे सकता है? अछूतोको 'हरिजन' नाम देनेसे कौआ हस कैसे बन जायगा? गावोके लोगोके बीच गावठी बनकर हम रहे और अुनकी तरह मेहनत करे, तो अिससे अुनकी जनशक्ति कैसे बढ सकती है?" वगैरा वगैरा। श्रद्धापूर्वक आश्रमी शिक्षा प्राप्त किये बिना अैसी शकाओका जाल बढता ही रहेगा, और बहुत बार अैसा होता है कि अेक समय लडाअीमे पडनेवाला आदमी श्रद्धाको बढानेके बजाय अुसे खोकर ही लौटता है।

देशसेवाकी तालीमके लिअे मैंने आश्रमकी अितनी महिमा वर्णन की है। परतु अुसकी तालीम आश्रमोमें रहनेसे ही मिलती है और अुसके बिना मिल ही नही सकती, यह कहनेका मेरा आशय नही। कभी कभी जेलोमें भी अुसके लिअे अनुकूल परिस्थिति अुत्पन्न हो सकती है। सत्याग्रहकी लडाअियोमे लोग देशभक्तिकी अुमगसे खिचकर चले आते है। जब आते है तब अुन्हें शायद ही सत्याग्रहका गहरा ज्ञान होता है। सरकारके कानून न माने जाय, अुसके अधिकारियोको यथाशक्ति तग किया जाय, अैसी ही कुछ कल्पना सत्याग्रहकी अुन्हें होती है। परन्तु जेलोमें जब कोअी श्रद्धेय सेवक मिल जाता है, तो वे अुसके आसपास अिकट्ठे हो जाते है। अुसके नेतृत्वमें शुद्ध, अुद्योगमय और सेवामय जीवन बिताने लगते है, अध्ययन करते है, चर्चाअें करते है। परिणामस्वरूप अुनकी समझ गहरी होती है, शकाअें मिटती है, स्वराज्य, सत्याग्रह आदि चीजें अुनके खूनमें मिलती है और वे देशसेवाकी स्थायी दीक्षा पाकर बाहर निकलते है।

मा-बाप भी, चाहें तो, अपने घरोको देशसेवाकी शिक्षाके आश्रम बना सकते है। अैसे घर देशमें बहुत ही थोडे है, यह हमारी बदकिस्मती है। परन्तु कही कही अैसे घर देखनेमें आते है। अैसे घरोमे अुगती हुअी सन्तानें सेवा और सत्याग्रहका दूध पीकर ही बडी होती है।

कही भी ली जाय और कैसे भी ली जाय, लेकिन यह आत्म-रचनाकी शिक्षा लेना तो जरूरी है ही। काग्रेस कमेटियोमें अधिकार भोगनेवाले कार्यकर्ताओमें कभी कभी अैसी आश्रमी शिक्षा पाये हुअे सज्जनोको हम देखते है। अुन्होने वह शिक्षा कहा पाअी, यह मुख्य प्रश्न नही है। हो सकता है कि अुन्होने कभी कोअी आश्रम देखा ही न हो। वे अपनी विशुद्ध देशभक्तिके प्रतापसे और अपने ज्ञान अेव अनुभवके प्रभावसे अैसी योग्यता तक पहुचे हो। परन्तु जहा अैसे कार्यकर्ताओके हाथोमें काग्रेसके कार्यका सचालन होता है, वहा कैसा भव्य दृश्य देखनेको मिलता है! अुनकी श्रद्धाकी छूतसे कार्यकर्ताओमे और लोगोमे भी सत्य और अहिसाके बारेमे किसीको शका नही रहती, रचनात्मक कार्य पूरी श्रद्धा और अुत्साहसे होता है, आपसकी तुच्छ स्पर्धा, अीर्ष्या आदि रहने नही पाती, कौमोके बीच भाअीचारा बढता है, दलितोकी सेवा प्रेमपूर्वक की जाती है और सदा सत्याग्रहका तेजस्वी वातावरण बना रहता है। अैसे सुयोग्य नेता मिल जाते है, तो लोगोको किसी आश्रममे गये बिना भी अुस प्रदेशके शुद्ध सार्वजनिक जीवनसे ही सेवाकी वाछित तालीम मिल जाती है।

हम जब 'आश्रमी' शब्दका अुपयोग करते है, तब अुसका अर्थ किसी निश्चित आश्रममे रहनेवाला आदमी नही होता। यह अब आपकी समझमे आ गया होगा। अच्छेसे अच्छे आश्रममें रहने पर भी हम, जैसा लोग कहते है, नकली, हास्यास्पद और विचित्र प्राणी रह सकते है, और किसी आश्रममें पैर न रखने पर भी अपने जीवनमें आश्रमी जीवनके सब अश चरितार्थ करनेवाले मनुष्य कअी बार देखनेमे आते है।

परन्तु अितना तो निर्विवाद है कि हमारे देशके सार्वजनिक जीवनमें आश्रमोकी और आश्रमी शिक्षा पाये हुअे कार्यकर्ताओकी बडी जरूरत है। आज हमारा सार्वजनिक

जीवन अैसी अूची सतह पर चल रहा है कि अुसे चलानेवाले नेताओ और सेवकोमें जितने अैसी आत्म-रचनाकी शिक्षा पाये हुअे लोग होगे, अुतना ही वह अिस अूची सतह पर टिका रह सकेगा।

असत्य और हिंसामे भरपूर दुनियाके बीच हमने सत्य और अहिंसा पर अपनी श्रद्धा जमाअी है। अुसके जोरसे हमें अपना स्वराज्य ही नही लेना है, परन्तु दुनियाकी हिंसा-मार्गी प्रजाओको शान्तिका सच्चा मार्ग भी बताना है। यह श्रद्धा हमारी जनतामें धीरे-धीरे बढती जाय और सच्ची परीक्षाके समय अुड न जाय, अिसके लिअे सच्चे सत्याग्रही सेवक — आत्म-रचनाकी तालीम पाये हुअे सेवक — आगे आकर जनताको अपने जीवनसे सजीव शिक्षा देते रहें यह जरूरी है। यह हमारे देशके सार्वजनिक जीवनके लिअे कितना आवश्यक है?

किसी भी लडाअीमे जब अकल्पित घटनायें होती है, सेनाको भारी हानि अुठानी पडती है, तब अुसके सेनापतियोकी श्रद्धा ही अुसके सैनिकोको अचल बनाये रखती है। हमारी सत्याग्रहकी लडाअीमें तो विचलित हो जाने, श्रद्धा खो बैठनेके प्रसग बहुत अधिक सख्यामें आते है, यह स्पष्ट है। अुस समय हमारे सिर पर अनेक प्रकारके खतरे होते है।

अहिंसामय सत्याग्रहमे पहला और सबसे बडा खतरा यह है कि लडाअीका शख बजते ही सेनापतिको अुसके सैनिकोसे अलग कर दिया जाता है। सैनिकोमें अच्छी सख्या अैसी आत्म-रचना किये हुअे लोगोकी — सिद्धान्तोको समझे हुअे लोगोकी — हो, तो ही यह लडाअी वेगसे आगे बढ सकती है और शुद्ध मार्ग पर रह सकती है।

दूसरा खतरा हमारे लिअे यह है कि अिस लडाअीमे अैसा समय भी आ सकता है, जब हमारी जनता और अुसके अनेक नेता बिलकुल हिम्मत हार बैठे, आशा खो बैठें, अिस सरकारके राक्षसी यत्रका विरोध करने और अुसके पजेसे मुक्ति प्राप्त करनेका विचार ही अुन्हे असभव प्रतीत होने लगे, और वे अिस विचारके शिकार बन जाय कि अुसके अधीन रहकर, अुसकी नौकरिया करते-करते, अुसकी धारासभाओमे बैठे-बैठे, वह मेहरबानीके तौर पर जो टुकडे हमारे सामने फेंक दे अुनसे सतोप कर लेनेमे ही सार है। अैसे समय साहस और शौर्यकी हवा बनाये रखना आश्रमी शिक्षा पाये हुअे लोगोका ही काम है।

तीसरे प्रकारका खतरा हमारे लिअे यह है कि अिसमें सत्याग्रह और अुसकी ताकत बढानेवाले रचनात्मक कार्यो परसे हमारी जनताका और बहुतसे नेताओका विश्वास अुठ जानेके भी अवसर आते हैं। वे कपट-नीति और बम-बन्दूकका बालिश खेल भी खेलने लग सकते है। अैसे मौके पर भी सत्याग्रहकी ज्योति जगाये रखना आश्रमी शिक्षा पाये हुअे लोगोका ही विशेष कर्तव्य है।

हमारे रचनात्मक कार्योमें भी खतरे पैदा हो सकते है, वे स्वराज्य-रचनाके काम न रहकर केवल खादी या घानीके तेलकी अुत्पत्ति-बिक्री करनेवाली दुकानें बन सकते है, सत्याग्रहके खतरोसे बचनेकी वृत्ति सेवकोमें और लोगोमें पैदा हो सकती है। अैसे

समय अुन्हें कौन कहेगा कि आपके कामसे स्वराज्यकी रचना नही हो रही है, अिसलिअे वह सच्चा रचनात्मक काम नही है? यह हिम्मत आश्रमी तालीम पाये हुअे लोग ही कर सकते है।

विदेशी सरकारकी भेदनीतिसे कौमोके बीच वैर-द्वेष फैले, रोटीके टुकडोंके लिअे लोग कुत्ते-बिल्लियोकी तरह आपसमें लड मरें, सच्चे शत्रुका ध्यान छोडकर परस्पर अेक-दूसरेको शत्रु मानने लगें, अैसे अवसर पर भी सच्ची आश्रमी शिक्षा पाये हुअे — सिद्धान्तोमें परिपक्व बने हुअे सेवको अथवा सत्याग्रहियोके सिवा जनताको सच्चे मार्ग पर कौन रख सकेगा?

राजनीतिक आन्दोलन अलग है और व्यक्तिगत जीवन अलग है — अैसा मान कर लोग और अुनके नेता दलित वर्गोंको न्याय देनेका कोअी भी कदम न अुठाते हो, तब जन-जीवनमें न्यायका आग्रह पैदा करना भी आश्रमी शिक्षा प्राप्त किये हुअे सत्याग्रहियोका ही काम है।

हमारे देशके सार्वजनिक जीवनमे आश्रमवासी नामके विचित्र प्राणियोके — आत्म-रचना किये हुअे सेवकोंके — ये सब मुख्य कर्तव्य हैं। अिन विचित्र प्राणियोके आचार और विचार कैसे होने चाहिये, यह अच्छी तरह समझ लेनेके लिअे ही हम अितने दिनो तक प्रार्थनाके बाद यह सब बातचीत करते रहे हैं। अैसा आश्रमी जीवन हमारे लिअे सहज हो जाय, हमारे खूनकी हर बूदमें सत्य, अहिसा आदि सिद्धात रम जाय, अिसीके लिअे हम आश्रममें रहकर आत्म-रचना कर रहे है।

हमारे देशके प्रत्येक गावमें अैसी आत्म-रचनाकी शिक्षा देनेवाले स्वराज्य-आश्रम बनें, प्रत्येक जिले और प्रत्येक तहसीलमें देशके नेता अिसी शिक्षाका लोगोको अमृतपान करायें, प्रत्येक घरमें माता-पिता अपनी सन्तानोको अैसी आश्रमी शिक्षा देकर अुनका लालन-पालन करें और आजकल अैसे विचित्र प्राणी जो कही कही देखनेमें आते है, अिसके बजाय चालीस करोड भारतवासी अैसे प्राणी बन जाय, यही मेरी और हम सबकी भगवानसे प्रार्थना है।

नअी संस्कृतिकी पुरानी बुनियाद

[लेखक काकासाहब कालेलकर]

आश्रम-जीवनका आदर्श हमारे देशमें अति प्राचीन कालसे स्वीकार किया गया है और आजमाया भी गया है। अुसमें समय समय पर फेरफार भी होते रहे है। प्राचीन कालसे आज तक हमारे देशमें जगह्-जगह् आश्रम स्थापित हुअे है और जनताने श्रद्धापूर्वक अुन आश्रमोको निभाया है।

गाधीजीने हिन्दुस्तानमें आकर स्थिर होनेसे पहले दक्षिण अफ्रीकामे आश्रम-जीवनका अेक प्रयोग किया था। अुस अनुभवके आधार पर और भारतीय सस्कृतिके अनुसार अुन्होने अिस देशमें नये ढगके आश्रमकी स्थापना की। अिस आश्रमका अितिहास जब कभी लिखा जायगा, तब दुनियाको अिस बातका कुछ खयाल मिलेगा कि भारतकी रचनामें अुस आश्रमका कितना हाथ है। गाधीजीके अुस आश्रममें वर्षो तक रहकर श्री जुगतरामभाअीने जो अनुभव प्राप्त किया, अुसके आधार पर अुन्होने रानीपरज लोगोके बीच राष्ट्रसेवाका अेक आश्रम चलाया है। अुस आश्रमकी छोटी-बडी, कच्ची-पक्की, अधूरी-पूरी अनेक आवृत्तिया भी जगह्-जगह् स्थापित हुअी है। अैसे आश्रमोमें जिस प्रकारके जीवनका विकास किया जाता है, जिस प्रकारके आदर्शोका सेवन किया जाता है और जिस तरहकी कठिनाअियोके विरुद्ध लडनेमें आनद अनुभव किया जाता है, अुनका वर्णन अिस पुस्तकमें श्री जुगतरामभाअीने व्याख्यान-शैलीमें किया है। रचनात्मक कार्य-क्रमको अपनानेवाले राष्ट्रसेवकोको अिसमें से बहुत कुछ जाननेको मिलेगा। आलोचकोको आलोचना करनेका मसाला भी अिसमें कम नही मिलेगा। क्योकि श्री जुगतरामभाअी जो कुछ लिखते है वह श्रद्धाके निश्चयसे लिखते है, वे केवल लोगोकी जानकारीके लिअे नही लिखते, परन्तु अिस प्रकारके अुत्कट आग्रहके साथ लिखते है कि मैं जो कुछ लिखता हू वह स्वीकार किया ही जाना चाहिये। अैसे लेख दिमागके अेक कोनेमें पडे नही रहते। जैसे प्राचीन कालके परशुराम यह कहकर लोगोको परेशान करते थे कि 'लडो, नही तो लडनेवाला दो', वैसे ही श्री जुगतरामभाअी 'मेरी बात सुनो, समझो और स्वीकार करो' के आग्रहसे लोगोको जाग्रत और अस्वस्थ करते है।

*　　　　*　　　　*

स्वामी आनदके कारण श्री जुगतरामभाअीका और मेरा परिचय हुआ। वे १९१६ के दिन रहे होगे। जुगतरामभाअी शायद काठियावाडसे आकर बम्बअीमें किसी मासिक पत्रके कार्यालयमें काम करते थे। हमने अुन्हें बडोदा बुलाया। थोडे ही समयमें हम बडोदाके पास सयाजीपुरामें रहने चले गये। श्री जुगतरामभाअी सयाजीपुराके अेक मदिरमे लोगोको तुलसीकृत रामायण सुनाते-समझाते थे और देहातके लोगोकी सेवा करते

थे। अुनका आश्रम-जीवन तभीसे शुरू हुआ माना जायगा। अुनकी माताजी हिमालयमें यात्राके लिअे गअी थी और वही अुनका स्वर्गवास हो गया। अिससे जुगतरामभाअीके कौटुम्बिक जीवनका अेकमात्र ततु टूट गया। अुस समयसे आज तक अुन्होने सयम, सेवाकार्य और त्यागमय जीवनकी धाराको अखड रूपसे कायम रखा है।

मैने जब गाधीजीके आश्रममे प्रवेश किया, तब मेरे पीछे-पीछे वे भी आये। आश्रममें हम पढानेका काम करते थे। विद्यापीठकी स्थापना हुअी तो वहाका अध्यापन-मदिर चलानेका भार जुगतरामभाअीने अुठा लिया। स्वामीके और मेरे सबध और आग्रहके कारण 'नवजीवन' का कार्यालय चलानेकी जिम्मेदारी भी अुन्होने ली। अितनेमे (सन् १९२४ की बात होगी) अुन्हे भीतरसे अपने जीवन-कार्यकी प्रेरणा हुअी। तुरन्त ही अुन्होने स्वामीका, मेरा और 'नवजीवन' का मोह छोडकर गावका रास्ता लिया और वे बारडोली तालुकेमें जाकर बस गये। अिस बातको आज लगभग दो युगका समय बीत गया है। जुगतरामभाअीकी ग्रामसेवा और अुससे सबध रखनेवाला आश्रम-जीवन अेकनिष्ठासे अखड रूपमे चल रहा है।

साहित्य-सेवा अुनका सबसे पहला रस था। यह रस अुन्होने बहुत कम कर दिया। परन्तु अुनकी साहित्यिक शक्ति तो खिलती ही गअी है। गद्य, पद्य, नाटक, निबध, जीवन-चरित्र, पाठ्यपुस्तक — अनेक क्षेत्रोमे अुन्होने अपनी लेखनीकी शक्तिका परिचय दिया है। अुस शक्तिका ही परिपाक आज हमे अिस पुस्तकमे मिलता है।

वे मेरे साथ रहने आये, अिसलिअे अुन्होने स्वाभाविक तौर पर राष्ट्रीय शिक्षकका व्रत लिया। साबरमती आश्रममें क्या और अपने वेडछी आश्रममे क्या, जुगतरामभाअी दोनो जगह समर्थ और सफल शिक्षकके रूपमें चमके है। अुस शिक्षककी शैलीका परिपाक भी अुनकी अिस पुस्तकमे स्पष्ट दिखाअी देता है।

साहित्य और शिक्षाके साथ सेवा और त्यागका अुन्हें रस लगा। यह रस भी अुनकी अिस आश्रमी शिक्षाकी पुस्तकमे छलाछल भरा हुआ दीखता है। त्याग और सेवामें ही जुगतरामभाअी जीवनकी समृद्धि, अुसकी परिपूर्ति और जीवन-रसकी तृप्ति अनुभव करते है, और अिसीलिअे कठिन माने जानेवाले, कुछ अशोमें नीरस माने जानेवाले, आश्रम-जीवनका अितना रसपूर्ण माहात्म्य अथवा स्तोत्र वे गा सके है।

जुगतरामभाअीका मनुष्यके नाते अुन्हें अूचा अुठानेवाला मुख्य गुण अुनकी लोक-सग्रहकी शक्ति है। अुनका मनुष्य-प्रेम अुनमे पहलेसे प्रगट हुआ है। अकृत्रिम सहानुभूतिसे वे अनेक लोगोको जीत लेते है। सहानुभूति जब स्वाभाविक होती है, तभी अुसका सुन्दर और श्रेष्ठ प्रभाव पडता है। सहानुभूति प्रयत्न द्वारा पैदा करनेसे पैदा नही होती। पैदा की हुअी सहानुभूति जबरदस्तीसे पचाअी हुअी खुराक जैसी होती है। अुसमे से शुद्ध और शुभ जीवन-रस विकसित नही होता। जुगतरामभाअीने अपनी प्रचुर सहानुभूतिके कारण छोटे-बडे अनेक लोगोको अपने आसपास अिकट्ठा किया है। अनेक लोगोसे अुन्होने अुत्तमसे अुत्तम सेवा कराअी है, अनेक लोगोकी भक्तिके वे पात्र बने है। परन्तु प्रेमके साथ अनासक्तिका योग साधनेके कारण वे किसीके मोहमें नही

फसते, अलिप्तके अलिप्त रहते है और अिसीलिअे अपने सहवासमें आनेवाले लोगोको वे अूचा अुठा सकते है।

सब प्रकारकी सस्कारिता प्राप्त करने और विकसित करनेका मौका मिलने पर भी और अुसका पूरा लाभ अुठाने पर भी जुगतरामभाअी 'सस्कारिता' के पाशमे नही फसे। हृदयकी कोमलता तो अुनमे है, परन्तु 'सस्कारिता' के नाजुकपन और गभीरताको अुन्होने अपने पास नही आने दिया। अिसीलिअे वे लोक-जीवनसे अलग नही पडे। अुनकी भाषाशैली, अुनकी कार्य-प्रणाली और अुनकी जीवन-दृष्टि — तीनो लोक-जीवनके अनुकूल ही रही है। परिणामस्वरूप गावोके लोग पूरी पूरी आत्मीयतासे अुन्हे घेरे रहते है। सचमुच, जुगतरामभाअी हमारी भोली जनताके दरबारमे पहुचे हुअे सस्कारी दुनियाके अेलची है। दोनो दरबारोमें वे अुत्तम ढगसे अपना सामर्थ्य प्रगट करते है और अुन दोनो दरबारोकी शिष्टता और सभ्यताको कायम रखते है।

गावोका जीवन, अुसके तमाम सवाल, समग्र सेवा, खादीकी शिक्षा, बालशिक्षा, प्रौढशिक्षा, सत्याग्रहकी पूर्व तैयारी, जेल-जीवनका शास्त्र — अिस प्रकार समाजशास्त्रके सभी अगोका अुन्हे अनुभव-मूलक प्रत्यक्ष ज्ञान है। अिस ज्ञानमें से आश्रम-जीवनके लिअे जितनी सूचनाअे अुन्हे जरूरी लगी, अुन सबको विस्तारपूर्वक, शब्दोकी जरासी भी कजूसी किये बिना, अुन्होने अिस पुस्तकमे गूथ दिया है।

अेक शास्त्रीजीके साथ हमारे धर्मग्रथ पढते हुअे, शास्त्रोमें होनेवाला कुछ व्यर्थका विस्तार देखकर मैने शास्त्रीजीसे पूछा था, "अेक अेक मात्राकी कजूसी करके कठिनसे कठिन और छोटेसे छोटे सूत्र लिखनेवाले हमारे अिन पूर्वजोने यहा अितना विस्तार क्यो किया होगा?" तब हमारे शास्त्रोको घोलकर पी जानेवाले अुन शास्त्रीजीने अभिमानपूर्वक कहा था, "श्रुतिको आलस्य नही होता। माता जैसे बच्चोको अेक ही चीज कअी तरहसे लगनके साथ समझाती है, वैसे ही श्रुतिमाता मनुष्यकी बालबुद्धिको पहचानकर प्रत्येक वस्तु अिस ढगसे विस्तारपूर्वक समझाती है कि कही भी अुसे सशय न रहे।" श्री जुगतरामभाअीने माताकी अिस वृत्ति और शैलीको अच्छी तरह अपनाया है। अुनकी 'आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा' पुस्तक अुनके अिस मातृ-हृदयकी पूरी गवाही देती है।

समर्थ लेखक अनेक प्रकारका साहित्य पैदा करते है, अनेक विषयोका अध्ययन करते है और समाजकी विविध प्रकारसे सेवा करते है। परन्तु अपनी किसी अेक विशेष पुस्तकमें ही वे अपना जीवन-सर्वस्व अुडेल देते है। श्री जुगतरामभाअीके बारेमे यह कहा जा सकता है कि अिस पुस्तकमे अुन्होने अपने-आपको ही अुडेल दिया है। अिसमें अुनका जीवनभरका विकसित स्वभाव चित्रित हुआ है। अुनके जीवनका आदर्श प्रतिबिम्बित हुआ है। आशा और निराशामे अुनको टिकाये रखनेवाली अुनकी जीवन-प्रेरणा अिसमे सगृहीत है। यह पुस्तक पढकर लोग कह सकते है कि अिसमे अुन्हे जुगतरामभाअीका पूरा-पूरा परिचय प्राप्त हुआ है।

* * *

लगनसे साधी हुअी अिन्द्रिय-जय, किसी तरहकी अपेक्षा रखे विना की गअी लोक-सेवा और अिस साधनासे अुत्पन्न होनेवाली मुमुक्षुकी विश्वात्मैक्य दृष्टि — ये तीन तत्त्व आश्रम-जीवनकी वुनियादमे होते है। सारा मानव-जीवन यदि अिन तीन तत्त्वोंके आधार पर रचा जाय, तो मनुष्यका जीवन शुद्ध, समर्थ, समृद्ध और कृतार्थ हुअे विना रह ही नही सकता।

अिस तरह देखे तो अैसा आश्रम-जीवन सचमुच समग्र मानव-जीवनकी परिपूर्णता है। परन्तु मनुष्यको अभी अुसका पूरा स्वाद लगा नही है।

मानव-जीवन लाखो वर्षोंकी प्रयोग-परम्परा है। अिसमे मनुष्यने निरा और नग्न स्वार्थ आजमाकर देखा। अिसमें अुसे सतोष नही हुआ। अन्तमे अुसने परस्पर सहयोगवाला सामाजिक जीवन अपनाया। कुटुम्वके भीतर गृहस्थाश्रम और कुटुम्वसे वाहर सामाजिक लोक-जीवनको अपनाकर मनुष्य-जाति किसी न किसी तरह प्रगति कर रही है। अैसे जीवनका मनुष्य अव अितना अभ्यस्त हो गया है कि अिससे अूचा या अुज्ज्वल जीवन कोअी अुपस्थित करे, तो सावारण मनुष्य कुछ घवरा जाता है। अपनी घवराहट प्रगट करनेके मनुष्यने दो रास्ते ढूढ निकाले है (१) जो चीज हमें पसन्द न हो, अुसकी या तो अच्छी तरह पूजा करो और अुसे सिन्दूर लगाकर अलग रख दो, अथवा (२) खूब निन्दा करके अुसे गिरा दो और अुसे अव्यावहारिक ठहरा दो। क्या हम नही जानते कि आश्रम-जीवनके वारेमे हमारे समाजने दोनो ढग आजमा कर देख लिये है?

कुछ साधु पुरुषोने गृहस्थाश्रम और सामाजिक जीवन दोनोसे अुकताकर अेक प्रकारका निवृत्ति-मार्ग अपनाया। सचमुच अिसमे जीवनसे भाग निकलनेकी ही वात थी। प्रवृत्ति की जाय तो मोहमे फस जाते है, निवृत्ति अपनायी जाय तो जीवन शून्य बन जाता है। अिन दो सकटोसे बचनेके लिअे गीताजीने जो अनासक्ति-योग सिखाया है, अुसीके जीवन-भाष्यके रूपमे गाधीजीने आश्रम-धर्म चलाया। 'आदर्श ढगसे देशसेवा करना सीखना और देशसेवा करना' — अिस आदर्शसे प्रेरित होकर अुन्होने सत्याग्रह-आश्रम चलाया। अन्यायका प्रतिकार करनेके लिअे सत्याग्रह और राष्ट्रकी सात्त्विक शक्तिका विकास करनेके लिअे रचनात्मक कार्यक्रम, ये दो चीजें गाधीजीने सबसे पहले अपने आश्रममें वोअी। सकटका समय आने पर आश्रमकी 'अपनी यह खडी फौज लेकर मै लडूगा' अिस आत्म-विश्वासपूर्ण सकल्पके साथ अुन्होने आश्रमकी स्थापना की। अिस परीक्षामे आश्रमवासी किस हद तक पार अुतरे, यह तो समाज जानता है और प्रत्येक आश्रम-वासी अपने अन्तरमे जानता है। परन्तु गाधीजीसे लेकर लगभग सभी आश्रमवासी, सत्ताकी राजनीति ('पावर पॉलिटिक्स') से अलग रहे है, यह वात साधारण मनुष्योके ध्यानमे भी आये बिना नही रहती। मगनलालभाअी और नारणदासभाअी, महादेव-भाअी और नरहरिभाअी, विनोबा और जुगतरामभाअी, किशोरलाल मशरूवाला और आप्पासाहब पटवर्धन, परीक्षितलालभाअी और बबलभाअी, मामासाहब और सुरेन्द्रजी — अिनमें से अेकने भी किसी जगह अधिकारकी लालसा नही रखी।

सेवाके लिअे ही हाथमें अधिकार लेते हैं, अैसा कहनेवाले और तदनुसार सचमुच चलनेवाले लोग हमारे यहा कम नही है। परन्तु आश्रमवासियोका अेक अैसा वर्ग है जो—

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा वर तस्य निरीहता।
प्रक्षालनात् हि पकस्य दूरात् अस्पर्शन वरम्॥

[धर्मके खातिर ही जिसे धन प्राप्त करनेकी अिच्छा होती हो, अुसे अैसी अिच्छा न करना ही अच्छा है। कीचडमे हाथ डालकर फिर धोनेकी अपेक्षा तो अुससे दूर रहकर अुसे न छूना ही अच्छा है।]
अिस पुराने आदर्श पर चलता है।

अधिकार हाथमें लेकर अमुक सेवा की जा सकती है, अिससे अिनकार नही। परन्तु अधिकार लिये बिना जो सेवा होती है, अुसकी खूबी कुछ और ही होती है। अधिकार और सत्ययुगका मेल नही बैठता। और हम तो सत्ययुगकी स्थापना करना चाहते हैं। अिसलिअे आजका जमाना अधिकारमें विश्वास रखता हो, तो भी अधिकारके विना काम चलानेवाले लोगोका अेक वर्ग स्थायी रूपमें रखना चाहिये। यह वर्ग देशके सार्वजनिक जीवनको शुद्ध और तेजस्वी बनाये रखनेमे कीमती मदद कर सकता है।

*　　　*　　　*

आश्रम-जीवनका जिन्हे अुत्तमसे अुत्तम रग लगा है, अैसे दो पुरुषोके हाथो आश्रम-जीवनकी आधुनिक पद्धतिकी स्मृति लिखी गअी, यह सर्वथा अुचित है। अेक ही आश्रम-जीवनके बारेमे अेक ही आदर्शसे विचार करनेवाले समर्थ विचारक और लेखक अपनी अपनी वृत्तिके अनुसार अेक-दूसरेसे बिलकुल भिन्न किन्तु परस्पर पोषक कृतिया कैसे निर्माण कर सकते है, यह देखनेका अवसर हमें आजके जमानेने दिया है।

अेक प्रकारसे, सब प्रकारकी सामाजिक अनुकूलताके बीच कठोर जीवन बितानेवाले जुगतरामभाअी और कठोर परिस्थितियोमें दोषदर्शी लोगोके बीच तपस्या-मधुर जीवन बितानेवाले आप्पासाहब पटवर्धन — अिस युगकी आश्रम-प्रवृत्तिकी दो समर्थ ब्रह्मचारी विभूतिया है। दोनोके जीवनमे अपने लिअे व्रतोकी कठोरता और समाजके प्रति प्रेम-पूर्ण मधुरता तथा नम्र क्षमावृत्ति पूरी पूरी दिखाअी देती है।

श्री आप्पासाहबने मराठीमे 'सेवाधर्म'* नामक ग्रथ लिखा। आप्पासाहब अपने पूर्व जीवनमें तत्त्वज्ञानके प्राध्यापक थे। अत अुनके ग्रथमे तत्त्वज्ञानकी सुगध हमे मिले, तो कोअी आश्चर्य नही। और श्री जुगतरामभाअी कर्मवीर गाधीजीके साहित्य पर पले होनेके कारण अुनके ग्रथमें व्यवहारकी छानबीन और अुससे अुत्पन्न होनेवाले तात्त्विक प्रश्नोकी मीमासा प्रगट हुअे बिना नही रहती। दोनो ग्रथ समान रूपमे ही विचार-प्रेरक और कार्य-प्रेरक है, फिर भी दोनोका अपना अपना भिन्न प्रस्थान (मार्ग) है।

हिन्दुस्तानकी जनता जब सामाजिक विकासकी दृष्टिसे आश्रम-जीवनका माहात्म्य पहचानेगी, तब राष्ट्रकी सर्वागीण शिक्षामें आश्रमी-जीवनके प्रयोगो और अुनके साहित्यका

* अिस पुस्तकका गुजराती अनुवाद गूजरात विद्यापीठकी तरफसे प्रकाशित हुआ है। (नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद–१४, कीमत २–८–०, डाकखर्च ०–१२–०)।

लगनसे साधी हुआी अिन्द्रिय-जय, किसी तरहकी अपेक्षा रखे विना की गअी लोक-सेवा और अिस साधनासे अुत्पन्न होनेवाली मुमुक्षुकी विश्वात्मैक्य दृष्टि — ये तीन तत्त्व आश्रम-जीवनकी बुनियादमे होते है। सारा मानव-जीवन यदि अिन तीन तत्त्वोके आवार पर रचा जाय, तो मनुष्यका जीवन शुद्ध, समर्थ, समृद्ध और कृतार्थ हुअे विना रह ही नही सकता।

अिस तरह देखें तो अैसा आश्रम-जीवन सचमुच समग्र मानव-जीवनकी परिपूर्णता है। परन्तु मनुष्यको अभी अुसका पूरा स्वाद लगा नही है।

मानव-जीवन लाखो वर्षोकी प्रयोग-परम्परा है। अिसमें मनुष्यने निरा और नग्न स्वार्थ आजमाकर देखा। अिसमे अुसे सतोष नही हुआ। अन्तमे अुसने परस्पर सह-योगवाला सामाजिक जीवन अपनाया। कुटुम्बके भीतर गृहस्थाश्रम और कुटुम्बसे बाहर सामाजिक लोक-जीवनको अपनाकर मनुष्य-जाति किसी न किसी तरह प्रगति कर रही है। अैसे जीवनका मनुष्य अब अितना अभ्यस्त हो गया है कि अिससे अूचा या अुज्ज्वल जीवन कोअी अुपस्थित करे, तो साधारण मनुष्य कुछ घवरा जाता है। अपनी घबराहट प्रगट करनेके मनुष्यने दो रास्ते ढूढ निकाले हैं (१) जो चीज हमे पसन्द न हो, अुसकी या तो अच्छी तरह पूजा करो और अुसे सिन्दूर लगाकर अलग रख दो, अथवा (२) खूब निन्दा करके अुसे गिरा दो और अुसे अव्यावहारिक ठहरा दो। क्या हम नही जानते कि आश्रम-जीवनके वारेमे हमारे समाजने दोनो ढग आजमा कर देख लिये हैं?

कुछ साधु पुरुषोने गृहस्थाश्रम और सामाजिक जीवन दोनोंसे अुकताकर अेक प्रकारका निवृत्ति-मार्ग अपनाया। सचमुच अिसमें जीवनसे भाग निकलनेकी ही वात थी। प्रवृत्ति की जाय तो मोहमे फस जाते है, निवृत्ति अपनायी जाय तो जीवन शून्य वन जाता है। अिन दो सकटोंसे बचनेके लिअे गीताजीने जो अनासक्ति-योग सिखाया है, अुसीके जीवन-भाष्यके रूपमे गाधीजीने आश्रम-धर्म चलाया। 'आदर्श ढगसे देशसेवा करना सीखना और देशसेवा करना' — अिस आदर्शसे प्रेरित होकर अुन्होने सत्याग्रह-आश्रम चलाया। अन्यायका प्रतिकार करनेके लिअे सत्याग्रह और राष्ट्रकी सात्त्विक शक्तिका विकास करनेके लिअे रचनात्मक कार्यक्रम, ये दो चीजें गाधीजीने सबसे पहले अपने आश्रममें बोअी। सकटका समय आने पर आश्रमकी 'अपनी यह खडी फौज लेकर मैं लडूगा' अिस आत्म-विश्वासपूर्ण सकल्पके साथ अुन्होने आश्रमकी स्थापना की। अिस परीक्षामें आश्रमवासी किस हद तक पार अुतरे, यह तो समाज जानता है और प्रत्येक आश्रम-वासी अपने अन्तरमें जानता है। परन्तु गाधीजीसे लेकर लगभग सभी आश्रमवासी, सत्ताकी राजनीति ('पावर पॉलिटिक्स') से अलग रहे हैं, यह बात साधारण मनुष्योंके ध्यानमें भी आये विना नही रहती। मगनलालभाअी और नारणदासभाअी, महादेव-भाअी और नरहरिभाअी, विनोवा और जुगतरामभाअी, किशोरलाल मशरूवाला और आप्पासाहब पटवर्धन, परीक्षितलालभाअी और बबलभाअी, मामासाहब और सुरेन्द्रजी — अिनमें से अेकने भी किसी जगह अधिकारकी लालसा नहीं रखी।

सेवाके लिअे ही हाथमें अधिकार लेते है, अैसा कहनेवाले और तदनुसार सचमुच चलनेवाले लोग हमारे यहा कम नही है। परन्तु आश्रमवासियोका अेक अैसा वर्ग है जो—

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा वर तस्य निरीहता।
प्रक्षालनात् हि पकस्य दूरात् अस्पर्शन वरम्॥

[धर्मके खातिर ही जिसे धन प्राप्त करनेकी अिच्छा होती हो, अुसे अैसी अिच्छा न करना ही अच्छा है। कीचडमें हाथ डालकर फिर धोनेकी अपेक्षा तो अुससे दूर रहकर अुसे न छूना ही अच्छा है।]
अिस पुराने आदर्श पर चलता है।

अधिकार हाथमें लेकर अमुक सेवा की जा सकती है, अिससे अिनकार नही। परन्तु अधिकार लिये बिना जो सेवा होती है, अुसकी खूबी कुछ और ही होती है। अधिकार और सत्ययुगका मेल नही बैठता। और हम तो सत्ययुगकी स्थापना करना चाहते है। अिसलिअे आजका जमाना अधिकारमें विश्वास रखता हो, तो भी अधिकारके बिना काम चलानेवाले लोगोका अेक वर्ग स्थायी रूपमें रखना चाहिये। यह वर्ग देशके सार्वजनिक जीवनको शुद्ध और तेजस्वी बनाये रखनेमें कीमती मदद कर सकता है।

* * *

आश्रम-जीवनका जिन्हे अुत्तमसे अुत्तम रग लगा है, अैसे दो पुरुषोके हाथो आश्रम-जीवनकी आधुनिक पद्धतिकी स्मृति लिखी गअी, यह सर्वथा अुचित है। अेक ही आश्रम-जीवनके बारेमें अेक ही आदर्शसे विचार करनेवाले समर्थ विचारक और लेखक अपनी अपनी वृत्तिके अनुसार अेक-दूसरेसे बिलकुल भिन्न किन्तु परस्पर पोषक कृतिया कैसे निर्माण कर सकते है, यह देखनेका अवसर हमे आजके जमानेने दिया है।

अेक प्रकारसे, सब प्रकारकी सामाजिक अनुकूलताके बीच कठोर जीवन बितानेवाले जुगतरामभाअी और कठोर परिस्थितियोमें दोषदर्शी लोगोके बीच तपस्या-मधुर जीवन बितानेवाले आप्पासाहब पटवर्धन — अिस युगकी आश्रम-प्रवृत्तिकी दो समर्थ ब्रह्मचारी विभूतिया है। दोनोके जीवनमे अपने लिअे व्रतोकी कठोरता और समाजके प्रति प्रेम-पूर्ण मधुरता तथा नम्र क्षमावृत्ति पूरी पूरी दिखाअी देती है।

श्री आप्पासाहबने मराठीमें 'सेवाधर्म'* नामक ग्रथ लिखा। आप्पासाहब अपने पूर्व जीवनमें तत्त्वज्ञानके प्राध्यापक थे। अत अुनके ग्रथमें तत्त्वज्ञानकी सुगध हमें मिले, तो कोअी आश्चर्य नही। और श्री जुगतरामभाअी कर्मवीर गाधीजीके साहित्य पर पले होनेके कारण अुनके ग्रथमे व्यवहारकी छानबीन और अुससे अुत्पन्न होनेवाले तात्त्विक प्रश्नोकी मीमासा प्रगट हुअे बिना नही रहती। दोनो ग्रथ समान रूपमें ही विचार-प्रेरक और कार्य-प्रेरक है, फिर भी दोनोका अपना अपना भिन्न प्रस्थान (मार्ग) है।

हिन्दुस्तानकी जनता जब सामाजिक विकासकी दृष्टिसे आश्रम-जीवनका माहात्म्य पहचानेगी, तब राष्ट्रकी सर्वांगीण शिक्षामें आश्रमी-जीवनके प्रयोगो और अुनके साहित्यका

* अिस पुस्तकका गुजराती अनुवाद गुजरात विद्यापीठकी तरफसे प्रकाशित हुआ है। (नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद–१४, कीमत २–८–०, डाकखर्च ०–१२–०)।

अध्ययन अेक अनिवार्य विषय माना जायगा। अुस दिन आप्पासाहबकी 'सेवाधर्म' और जुगतरामभाअीकी 'आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा'—ये दो पुस्तके मूल भाषामे अथवा हिन्दी अनुवादके रूपमे पाठ्यपुस्तकोके तौर पर काममे ली जायगी। समाजशास्त्रके अध्ययनमें और समाजवादी अर्थशास्त्रकी मीमासामे जैसे 'अमेरिकन कम्युनिटीज' पुस्तकमे दिये गये अीसाअी आश्रमोके अितिहासका महत्त्वपूर्ण स्थान है, वैसे ही हमारे देशमे आप्पासाहब और जुगतरामभाअीकी पुस्तके आश्रम-जीवनकी मीमासामें मूलभूत पुस्तके मानी जायेगी। *

* * *

जैसे हमारे समाजने चार वर्णोकी कल्पना की, वैसे ही चार आश्रमोकी भी कल्पना की थी। जिम्मेदारियोसे मुक्त स्वाभाविक बालपन बितानेके बाद अध्ययन-कालका सयमी

---

* अिसी स्थान पर अेक और पुस्तकका अस्तित्व अुल्लेखनीय है। गाधीजी जब अेक बार जेलमें गये, तब मैंने अुनसे सत्याग्रह-आश्रमका अितिहास लिखनेका आग्रह किया था। और आग्रहके साथ यह भी लिखा था "हम आश्रमवासी आपके भव्य आदर्शको अमलमे लानेके लिअे समर्थ सिद्ध नही हुअे, अिसका मुझे भान है। हमारी कमियो और हमारी सकीर्णताओके कारण आश्रमका आदर्श कितना आहत हुआ है, यह भी मै जानता हू। हम लोगो पर जरा भी दया किये बिना हमारी भूलोका भी सच्चा चित्र अिस अितिहासमे आना चाहिये।" गाधीजीने आश्रमका अेक अत्यत सक्षिप्त अितिहास लिख दिया है। लेकिन अुसमें आश्रमवासियो अथवा आश्रमकी घटनाओका कोअी जिक्र किये बिना आश्रमके आदर्शोमें अनुभवके आधार पर क्या क्या परिवर्तन करने पडे, अिसीका सक्षिप्त अुल्लेख अुन्होने किया है। गाधीजीकी यह पुस्तक अभी तक छपी नही है।[1] परन्तु अुसकी हस्तलिखित दो-तीन प्रतिलिपिया दो-तीन व्यक्तियोके पास सुरक्षित रखी हैं।

तफसीलके अभावके लिअे जब मैंने अपना असतोष प्रगट किया, तब गाधीजीने कहा कि, "तफसील देनेका काम आप जैसोका है।"

गाधीजीके आदर्शोका अुत्कट रूपमे प्रयोग करनेवाली सत्याग्रह आश्रम या विद्यापीठ जैसी सस्थाओंके कार्यालयसे यदि ब्यौरेवार घटना-क्रम और सम्बन्धित कालके प्रस्ताव, पत्रव्यवहार और दस्तावेजोमें से वाछित सामग्री छाट ली जाय, तो अुसके आधार पर अपनी स्मृति ताजी करके कुछ आश्रमवासी वाछित अितिहास पूरा कर सकेंगे। श्री मगनलालभाअी, श्री महादेवभाअी, श्री गिदवाणी और श्री जमनालालजी जैसे अुच्च कोटिके सेवक वह अितिहास पूरा किये बिना चले गये। अितिहास लिखनेके बारेमे हमारे पूर्वजोकी अुदासीनताकी आलोचना करनेवाले हम लोग अपने आजके राष्ट्रीय जीवनका अितिहास लिखनेके बारेमे अपने पूर्वजोकी तरह ही अुदासीन हैं, यह बात यहा ध्यानमें आये बिना नही रहती।

---

१ अब यह अितिहास 'सत्याग्रह आश्रमका अितिहास' नामसे नवजीवन प्रकाशन मदिरकी ओरसे प्रकाशित हुआ है। कीमत १–४–०, डा० खर्च ०–५–०।

ब्रह्मचर्याश्रम, अध्ययन और पर्यटन पूरा करनेके बाद स्वीकार किया जानेवाला धर्म-परायण गृहस्थाश्रम, अिन दोनोके द्वारा सासारिक महत्त्वाकाक्षा तृप्त करनेके बाद अपनाया जानेवाला निवृत्ति-परायण कठोर वानप्रस्थाश्रम और अन्तमें सब प्राणियोको अभय देनेवाला और सर्वत्र आत्मीयता देखनेवाला मोक्ष-धर्मी शान्त सन्यासाश्रम — ये चारो प्रकारके आश्रम हम लोगोने आजमाये है। अर्जुनने भिक्षा पर चलनेवाले निर्वैर-वृत्तिपूर्ण सन्यासाश्रमका सवाल छेडा था, फिर भी श्रीकृष्ण भगवानने गीतामे आश्रम-धर्मका कही विवेचन नही किया। चातुर्वर्ण्यकी चर्चा आरम्भमे और अन्तमे दो बार करके भी श्री भगवानने चार आश्रमोके आदर्शकी चर्चा गीतामें कही भी नही छेडी, यह सबसे बडा आश्चर्य है। हम यहा अिसका कारण ढूढने नही बैठेंगे। परन्तु यह बात अुल्लेखनीय अवश्य है।

आजके जमानेमे ब्रह्मचर्य-पालनकी आवश्यकता है, अिसमे कोअी शका नही। परन्तु अिसके लिअे ब्रह्मचर्याश्रम चलाया जाय या नही, अिस सवालका हल अभी तक नही निकला है।

गृहस्थाश्रम तो समाज-जीवनका आधार ही है। यह गृहस्थाश्रम जब तक सृष्टि है, तब तक चलेगा। परन्तु हमारे जीवनमे यह गृहस्थाश्रम पूरी तरह विकसित है या खडित है? सस्कृत है या विकृत है? अिसकी जाच करनेका दिन अवश्य आ पहुचा है।

वानप्रस्थाश्रम हमारे यहा किस हद तक विकसित हुआ था, अुसका सामाजिक महत्त्व कितना था, यह अेक खोजका विषय है।

सन्यासाश्रम सर्वकालमे अेकसा लोकप्रिय रहा है, यह नही कहा जा सकता। पूर्वमीमासावाले याज्ञिक सन्यासाश्रमके औचित्यको ही स्वीकार नही करते थे। स्मृतिकारोने अिस आश्रमको अेक बार कलिवर्ज्यकी सूचीमें डालकर समाजसे अुसका नाम-निशान ही मिटा दिया था। बुद्ध भगवान और शकराचार्य जैसे महापुरुषोने अुसका फिरसे अुद्धार न किया होता, तो यह आश्रम स्मृतिशेष ही हो जाता। हमारे जमानेमे स्वामी विवेकानन्द और स्वामी दयानन्द जैसोने अिस आश्रमको सेवा-परायण और निःस्वार्थ प्रवृत्ति-परायण बनाकर अुसे नया ही रूप दे दिया है।

अिस सारी अितिहास-परम्परामे गाधीजी द्वारा स्थापित नये आश्रमी आदर्शका स्थान कहा है, यह खास तौर पर विचारने जैसा है।

योगशास्त्रमें वर्णित सत्य, अहिंसा आदि यमो और तप, स्वाध्याय आदि नियमोके आधार पर गाधीजीने ११ व्रतोवाले आश्रम-जीवनका विकास किया। स्मृतियोमें वर्णित सन्यास आश्रमके प्रति आदर प्रगट करते हुअे भी अुसे अुन्होने स्वीकार नही किया और गीतामें वर्णित तथा जनक जैसे राजाओ द्वारा पालन किये गये सन्यास आदर्शको गाधीजीने स्वीकार किया। और अुन्होने अिस विचारके अनुसार प्रयोग चलाये कि जीवनका अन्तिम भाग या कोअी अमुक भाग नही, परन्तु सारा जीवन अिस आदर्शके अनुसार यथाशक्ति विकसित करना चाहिये और समाज-जीवनको शुद्ध, समर्थ और [illegible] बनाना चाहिये।

अध्ययन अेक अनिवार्य विषय माना जायगा। अुस दिन अप्पासाहबकी 'सेवाधर्म' और जुगतरामभाअीकी 'आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा'—ये दो पुस्तकें मूल भाषामे अथवा हिन्दी अनुवादके रूपमे पाठ्यपुस्तकोके तौर पर काममे ली जायगी। समाजशास्त्रके अध्ययनमे और समाजवादी अर्थशास्त्रकी मीमासामे जैसे 'अमेरिकन कम्युनिटीज' पुस्तकमे दिये गये औसाअी आश्रमोके अितिहासका महत्त्वपूर्ण स्थान है, वैसे ही हमारे देशमे अप्पासाहब और जुगतरामभाअीकी पुस्तके आश्रम-जीवनकी मीमासामे मूलभूत पुस्तके मानी जायेगी।*

* * *

जैसे हमारे समाजने चार वर्णोंकी कल्पना की, वैसे ही चार आश्रमोकी भी कल्पना की थी। जिम्मेदारियोसे मुक्त स्वाभाविक बालपन बितानेके बाद अध्ययन-कालका सयमी

* अिसी स्थान पर अेक और पुस्तकका अस्तित्व अुल्लेखनीय है। गाधीजी जब अेक बार जेलमे गये, तब मैंने अुनसे सत्याग्रह-आश्रमका अितिहास लिखनेका आग्रह किया था। और आग्रहके साथ यह भी लिखा था "हम आश्रमवासी आपके भव्य आदर्शको अमलमे लानेके लिअे समर्थ सिद्ध नही हुअे, अिसका मुझे भान है। हमारी कमियो और हमारी सकीर्णताओके कारण आश्रमका आदर्श कितना आहत हुआ है, यह भी मै जानता हू। हम लोगो पर जरा भी दया किये बिना हमारी भूलोका भी सच्चा चित्र अिस अितिहासमे आना चाहिये।" गाधीजीने आश्रमका अेक अत्यत सक्षिप्त अितिहास लिख दिया है। लेकिन अुसमें आश्रमवासियो अथवा आश्रमकी घटनाओका कोअी जिक्र किये बिना आश्रमके आदर्शोमे अनुभवके आधार पर क्या क्या परिवर्तन करने पडे, अिसीका सक्षिप्त अुल्लेख अुन्होने किया है। गाधीजीकी यह पुस्तक अभी तक छपी नही है।[1] परन्तु अुसकी हस्तलिखित दो-तीन प्रतिलिपिया दो-तीन व्यक्तियोके पास सुरक्षित रखी हैं।

तफसीलके अभावके लिअे जब मैंने अपना असतोष प्रगट किया, तब गाधीजीने कहा कि, "तफसील देनेका काम आप जैसोका है।"

गाधीजीके आदर्शोंका अुत्कट रूपमे प्रयोग करनेवाली सत्याग्रह आश्रम या विद्यापीठ जैसी सस्थाओके कार्यालयसे यदि व्यौरेवार घटना-क्रम और सम्बन्धित कालके प्रस्ताव, पत्रव्यवहार और दस्तावेजोमें से वाछित सामग्री छाट ली जाय, तो अुसके आधार पर अपनी स्मृति ताजी करके कुछ आश्रमवासी वाछित अितिहास पूरा कर सकेगे। श्री मगनलालभाअी, श्री महादेवभाअी, श्री गिदवाणी और श्री जमनालालजी जैसे अुच्च कोटिके सेवक वह अितिहास पूरा किये बिना चले गये। अितिहास लिखनेके बारेमें हमारे पूर्वजोकी अुदासीनताकी आलोचना करनेवाले हम लोग अपने आजके राष्ट्रीय जीवनका अितिहास लिखनेके बारेमें अपने पूर्वजोकी तरह ही अुदासीन हैं, यह बात यहा ध्यानमे आये बिना नही रहती।

१ अब यह अितिहास 'सत्याग्रह आश्रमका अितिहास' नामसे नवजीवन प्रकाशन मदिरकी ओरसे प्रकाशित हुआ है। कीमत १–४–०, डा० खर्च ०–५–०।

ब्रह्मचर्याश्रम, अध्ययन और पर्यटन पूरा करनेके बाद स्वीकार किया जानेवाला धर्म-परायण गृहस्थाश्रम, अिन दोनोके द्वारा सासारिक महत्त्वाकाक्षा तृप्त करनेके बाद अपनाया जानेवाला निवृत्ति-परायण कठोर वानप्रस्थाश्रम और अन्तमें सब प्राणियोको अभय देनेवाला और सर्वत्र आत्मीयता देखनेवाला मोक्ष-धर्मी शान्त सन्यासाश्रम — ये चारो प्रकारके आश्रम हम लोगोने आजमाये है। अर्जुनने भिक्षा पर चलनेवाले निर्वैर-वृत्तिपूर्ण सन्यासाश्रमका सवाल छेडा था, फिर भी श्रीकृष्ण भगवानने गीतामे आश्रम-धर्मका कही विवेचन नही किया। चातुर्वर्ण्यकी चर्चा आरम्भमे और अन्तमे दो बार करके भी श्री भगवानने चार आश्रमोके आदर्शकी चर्चा गीतामें कही भी नही छेडी, यह सबसे वडा आश्चर्य है। हम यहा अिसका कारण ढूढने नही वैठेंगे। परन्तु यह वात अुल्लेखनीय अवश्य है।

आजके जमानेमें ब्रह्मचर्य-पालनकी आवश्यकता है, अिसमे कोअी शका नही। परन्तु अिसके लिअे ब्रह्मचर्याश्रम चलाया जाय या नही, अिस सवालका हल अभी तक नही निकला है।

गृहस्थाश्रम तो समाज-जीवनका आधार ही है। यह गृहस्थाश्रम जब तक सृष्टि है, तब तक चलेगा। परन्तु हमारे जीवनमें यह गृहस्थाश्रम पूरी तरह विकसित है या खडित है? सस्कृत है या विकृत है? अिसकी जाच करनेका दिन अवश्य आ पहुचा है।

वानप्रस्थाश्रम हमारे यहा किस हद तक विकसित हुआ था, अुसका सामाजिक महत्त्व कितना था, यह अेक खोजका विषय है।

सन्यासाश्रम सर्वकालमें अेकसा लोकप्रिय रहा है, यह नही कहा जा सकता। पूर्वमीमासावाले याज्ञिक सन्यासाश्रमके औचित्यको ही स्वीकार नही करते थे। स्मृतिकारोने अिस आश्रमको अेक वार कलिवर्ज्यकी सूचीमें डालकर समाजमे अुसका नाम-निशान ही मिटा दिया था। बुद्ध भगवान और शकराचार्य जैसे महापुरुषोने अुसका फिरसे अुद्धार न किया होता, तो यह आश्रम स्मृतिशेष ही हो जाता। हमारे जमानेमे स्वामी विवेका-नन्द और स्वामी दयानन्द जैसोने अिस आश्रमको सेवा-परायण और नि स्वार्थ प्रवृत्ति-परायण बनाकर अुसे नया ही रूप दे दिया है।

अिस सारी अितिहास-परम्परामें गाधीजी द्वारा स्थापित नये आश्रमी आदर्शका स्थान कहा है, यह खास तौर पर विचारने जैसा है।

योगशास्त्रमे वर्णित सत्य, अहिंसा आदि यमो और तप, स्वाध्याय आदि नियमोंके आधार पर गाधीजीने ११ व्रतोवाले आश्रम-जीवनका विकास किया। स्मृतियोमे वर्णित सन्यास आश्रमके प्रति आदर प्रगट करते हुअे भी अुसे अुन्होने स्वीकार नही किया और गीतामें वर्णित तथा जनक जैसे राजाओ द्वारा पालन किये गये सन्यास आदर्शको गाधीजीने स्वीकार किया। और अुन्होने अिस विचारके अनुसार प्रयोग चलाये कि जीवनका अन्तिम भाग या कोअी अमुक भाग नही, परन्तु सारा जीवन अिस आदर्शके अनुसार यथाशक्ति नियमित करना चाहिये और समाज-जीवनको शुद्ध, समर्थ और समृद्ध बनाना चाहिये।

अिस पुस्तकके पहले और दूसरे भागमें चर्चित विषय

पहला भाग : आश्रमवासीके बाह्य आचार

पहला विभाग : आश्रम-प्रवेश

प्रवचन — १ पहले दिनकी घबराहट, २ स्वच्छताकी अिन्द्रिय, ३. आश्रम-प्रीत्यर्थ, ४ हमारा यज्ञकर्म, ५ सूत्रयज्ञ ही क्यों?

दूसरा विभाग . भोजन-विचार

प्रवचन — ६ आश्रमी भोजन अच्छा लगा?, ७ आश्रमी आहारकी दृष्टियां, ८ सच्चा स्वाद, ९ सात्त्विक आहार, १० कैसे खाना चाहिये?, ११ अमृत-भोजन।

तीसरा विभाग . समय-पालनका धर्म

प्रवचन — १२ आकाशका अमृत, १३ आश्रम-माताकी प्रभाती, १४ परम अुपकारी घटी, १५ समय-पत्रक, १६ डायरी, १७ डायरी लिखनेकी कला, १८ समय नष्ट करनेके साधन।

चौथा विभाग श्रम-धर्म

प्रवचन — १९ 'महाकार्य', २० स्वच्छता-सैनिककी तालीम, २१ अस्पृश्यता-निवारणकी कुंजी, २२ स्वयंपाक, २३ पावन करनेवाला पसीना, २४ खेतीके रसायन।

पांचवा विभाग : खादी-धर्म

प्रवचन — २५ अनिवार्य खादीका नियम, २६ राष्ट्रीय गणवेश, २७ सौ फी सदी स्वदेशी, २८ सभ्यताके पाश, २९ सच्ची पोशाककी खोज।

दूसरा भाग : आश्रमवासीकी अन्तर-श्रद्धायें

छठा विभाग आश्रमवासीका संसार

प्रवचन — ३० बीमारी कैसे भोगी जाय?, ३१ मृत्युके साथ कैसा सम्बन्ध रखा जाय?, ३२ बुढापेके चिह्न, ३३ हमारा जाति-सुधार, ३४ सच्चा वर्ण-धर्म, ३५ सुधारकका कन्या-व्यवहार, ३६ झूठे अहंकार, ३७ सेवकके सेवक कैसे?, ३८ आश्रमवासिनियां।

मानव-संस्कृतिके विकासमे गृहस्थ-जीवन और आश्रम-जीवन ये दोनो प्रकार परस्पर पोषक क्यो है, यह चीज दुनियाके समाजशास्त्रियोके लिअे विचारणीय है।

गाधीजीने भारतके जीवन पर — राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, औद्योगिक और शैक्षणिक जीवन पर जो असर डाला है, अुसमें अुनके आश्रम-आदर्शने अेक बार बडीसे बडी छाप डाली थी। गाधीजीके नेतृत्वकी व्यापकता बढने पर अुनके नये-नये व्यवहार-कुशल अनुयायियोने आश्रम-जीवन और आश्रमवासियोके बारेमें अपने अनादरका प्रचार भी काफी किया। अनेक लोग यह भी मानते हैं कि आश्रम-जीवन गाधीजी जैसे राष्ट्र-पुरुषके जीवनका अेक विनोदपूर्ण अग है, शौककी चीज है। कुछ लोग अिस बातकी चौकीदारी करनेवाले भी हैं कि देशके राजनीतिक और आर्थिक जीवनमें यह आश्रमी आदर्श घुसने न पाये। कुछ आश्रमवासी कहते है कि आश्रमवासी भले ही अिस अुच्च आदर्शके योग्य न हो, परन्तु यह आश्रम-आदर्श ही ससारका अतिम तारनहार है। आजकी दुनियाको गाधीजीकी शक्ति तो चाहिये, परन्तु जिस आदर्शकी साधनासे अुन्होने यह शक्ति प्राप्त की है, वह आश्रमी आदर्श लोगोको नही चाहिये। अिसमें आश्चर्य क्या?

पुण्यस्य फलमिच्छन्ति पुण्य नेच्छन्ति मानवा ।
न पापफलमिच्छन्ति पाप कुर्वन्ति यत्नत ।।

[मनुष्य पुण्यका फल तो चाहते है, परन्तु पुण्यके कर्म नही करना चाहते। वे पापका फल नही चाहते, परन्तु पापके काम यत्नपूर्वक करते हैं]

मनुष्य-जाति सही रास्ते पर चलनेसे पहले आसान दिखाअी देनेवाले सभी गलत रास्ते आजमाकर देखेगी। अैसा करनेसे अुसे कौन रोक सकता है?

खैर, अैसी आलोचनासे कोअी समाज कभी जागा है? मनुष्यका स्वभाव ही प्रयोग-परायण है। अुसके विरुद्ध शिकायत न करके आश्रमवासियोको आश्रमके आदर्शमे भी अनेक प्रयोग करने चाहिये, ससारके दूसरे देशोके लोगोने जो प्रयोग किये हैं, अुनका अध्ययन करना चाहिये और जीवन-परायण बनकर अर्थशास्त्र, मानसशास्त्र और समाजशास्त्र तीनोका विकास करते करते शुद्धसे शुद्ध जीवन-शास्त्र और जीवन-कलाकी रचना करनी चाहिये।

आश्रमी आदर्श और आश्रमी जीवन रूढिवादियोके लिअे नही है, अेक ही लकीर पर चलनेवाले तेलीके बैलोके लिअे नही है, वह जीवन-परायण प्रयोगवीरोके लिअे है। श्री जुगतरामभाअीकी पुस्तक पढकर, अुनकी निष्ठा और अुनका अुत्साह धारण करके आदर्श जीवनके, समाज-सेवाके और मानव-अुत्कर्षके कार्योमें प्रयोग करनेवाले लोग हमारे जमानेमे पैदा हो, यही अिस 'आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा' की सच्ची फलश्रुति है।

बम्बअी, २५–५–'४६

अिस पुस्तकके पहले और दूसरे भागमें चर्चित विषय

पहला भाग : आश्रमवासीके बाह्य आचार

पहला विभाग : आश्रम-प्रवेश

दूसरा विभाग : भोजन-विचार

तीसरा विभाग . समय-पालनका धर्म

चौथा विभाग श्रम-धर्म

पाचवा विभाग खादी-धर्म

दूसरा भाग : आश्रमवासीकी अन्तर-श्रद्धायें

छठा विभाग · आश्रमवासीका ससार

सातवा विभाग · शिक्षा

प्रवचन — ३९ आश्रमके बालक, ४० बाल-शिक्षाकी आश्रमी पद्धति (कपडे नहीं परन्तु खुली हवा, झोली नही परन्तु शिशु-घर, खिलौने नही परन्तु कामकी चीजे), ४१ बाल-शिक्षाके बारेमे कुछ और (चुम्बन और आलिगनकी मर्यादा, स्वच्छता और स्वास्थ्य), ४२ लडके-लडकीका भेद, ४३ बच्चोको पाठशाला क्यो न भेजा जाय?, ४४ अग्रेजी पढाओीका क्या होगा?, ४५ अुच्च शिक्षा।

आठवा विभाग . प्रार्थना

प्रवचन — ४६ प्रार्थना-परायणता, ४७ ध्यानयोग, ४८ कुछ लोगोको प्रार्थना पसन्द क्यो नही होती?, ४९ प्रार्थना-नास्तिक, ५० प्रार्थनाका शरीर (प्रार्थनाका स्थान, प्रार्थनाके समय, प्रार्थनाका आसन), ५१ प्रार्थना किस भाषामें की जाय?, ५२ प्रार्थनामे क्या क्या होना चाहिये?, ५३ प्रार्थना-सचालकोके लिअे अुपयोगी सूचनाये (सबका सक्रिय भाग, प्रार्थना बहुत लबी न हो, प्रार्थनाको सदा हरी रखे)।

बापूकी कलमसे

[गांधीजीके मूल हिन्दी लेखोंका संग्रह]

संपा० काकासाहब कालेलकर

अिस पुस्तकमें वे सारे मूल हिन्दी लेख अेकत्र किये गये हैं जो गांधीजीने अगस्त १९२१ से जनवरी १९४८ तक हिन्दी नवजीवन में और हरिजनसेवक में समय समय पर लिखे थे। अिनके बारेमें काकासाहब कालेलकर अपने सम्पादकीय वक्तव्यमें लिखते हैं. 'गांधी-विचारको समझनेकी तीव्र अिच्छा रखनेवालोंसे मैं कहता आया हूं कि गांधीजीके विचार और लेख केवल अंग्रेजीमें पढ़नेसे आपको गांधीजीका संपूर्ण दर्शन नहीं हो सकता। भारतीय जीवन-दर्शनमें गांधीजीकी देनको पूर्णतया समझना हो, तो अुनके हिन्दी और गुजराती लेख पढ़े विना चारा नहीं। अिस दृष्टिसे अिस पुस्तकका असाधारण महत्त्व है।"

कीमत रु० २ ५० डाकखर्च १ ००

रामनाम

लेखक गांधीजी; संपा० भारतन् कुमारप्पा

रामनाममें गांधीजीकी श्रद्धा बचपनसे ही थी। ज्यों-ज्यों अुनके जीवनका विकास होता गया, त्यों-त्यों अुनकी यह श्रद्धा बढ़ती और मजबूत होती गअी कि रामनाम शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सभी तरहकी कठिनाअियों और रोगोंको मिटानेका अेकमात्र अुपाय है।

कीमत ०-१०-० डाकखर्च ०-४-०

आरोग्यकी कुंजी

लेखक गांधीजी

गांधीजीके शब्दोंमें अिस किताबको "विचार-पूर्वक पढ़नेवालों और अिसमें दिये हुअे नियमों पर अमल करनेवालोंको आरोग्यकी कुंजी मिल जायगी, और अुन्हें डॉक्टरों तथा वैद्योंका दरवाजा नहीं खटखटाना पड़ेगा।"

कीमत ०-६-० डाकखर्च ०-३-०